युग निर्माण के आदर्श और सिद्धान्त

(प्रथम भाग)

युग निर्माण योजना, मथुरा

: BOOK MADE AVAILABLE FOR DIGITIZATION BY :

SHRI SHIVCHARAN PATEL
SHANTIKUNJ, HARIDWAR, INDIA

: OUR MAIN CENTERS :

Shantikunj, Haridwar,
Uttaranchal, India – 249411
Phone no : 91-1334- 260602,
Website : www.awgp.org
E-mail : shantikunj@awgp.org

Gayatri Tapobhumi,
Mathura, U.P., India – 281003
Phone no : 91-0565-2530128,
Website : www.awgp.org
E-mail : yugnirman@awgp.org

: BOOK DIGITIZED BY :

Vicharkranti Pustakalay, Thana-Faliya, Dindoligam, Surat-394210, Gujarat, India
E-mail: vicharkranti.awgp@gmail.com | Website : www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

॥ सत्यं शिवं सुन्दरम् ॥

युग निर्माण योजना के आदर्श और सिद्धान्त

(प्रथम भाग)

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

लेखक

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक

युग निर्माण योजना, मथुरा

प्रथमवार ८०००] १९७० [मूल्य

मुद्रक गुप्तराज प्रिंटिंग प्रेस, मथुरा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya Foundation (Akhil Vishwa Gayatri Parivar Vishwavidyalaya Kunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय-सूची

क्रम	विषय	पृष्ठ
	भूमिका	३
१.	आस्तिकता एवं उपासना का प्रयोजन-प्रतिफल	६
२.	देववाद और पूजा-अर्चा का रहस्य	११
३.	जीवन का लक्ष्य समझें और उसे प्राप्त करने का प्रयत्न करें	१३
४.	स्वर्ग और मुक्ति के आनन्द इसी जीवन में संभव हैं	१५
५.	कर्मफल आज नहीं तो कल भोगना ही पड़ेगा	१७
६.	दुष्कर्मों के दण्ड से प्रायश्चित ही छुड़ा सकेगा	१६
७.	हम कामना ग्रस्त न हों प्रगतिशील बनें	२१
८.	भाग्यवाद हमें नपुंसक और निर्जीव बनाता है	२३
६.	बौद्धिक परावलम्बन का जुआ उतार फेंकें	२५
१०.	ज्ञान योग, कर्मयोग, भक्ति योग की महान साधना	२७
११.	आध्यात्मिक जीवन के पाँच कदम	२६
१२.	हर दिन को एक नया जन्म समझें और उसका सदुपयोग करें	३१
१३.	स्वाध्याय दैनिक जीवन की अनिवार्य आवश्यकता	३३
१४.	अपना महत्व समझें और अपने को सुधारें	३५
१५.	कर्तव्य परायणता मानव जीवन की आधार शिला	३७
१६.	असत्य व्यवहार सद्भावना और सामाजिकता पर कुठाराघात	३६
१७.	बेईमानी का नहीं, ईमानदारी का मार्ग अपनावें	४१
१८.	हँसती और हँसाती जिन्दगी ही सार्थक है	४३
१६.	अपना ही नहीं कुछ समाज का भी हित साधन करें	४५
२०.	सज्जनता और मधुर व्यवहार मनुष्यता की पहली शर्त	४७
२१.	साहस जुटायें औचित्य अपनायें	४६
२२.	आलस्य त्यागें सुसम्पन्न बनें	५१
२३.	समय का सदुपयोग सफलता के लिये अमोघ वरदान	५३
२४.	अवरोध हमें अधीर न बनाने पावें	५५
२५.	आवेश ग्रस्त न हों शांति और विवेक से काम लें	५७
२६.	विचार शक्ति का महत्व समझें और सदुपयोग करें	५६
२७.	आरोग्य रक्षा के लिये संतुलन आवश्यक है	६१
२८.	स्वास्थ्य रक्षा के लिये प्रकृति का अनुसरण आवश्यक	६३
२६.	आहार और विहार का असंयम न बरतें	६५
३०.	संयम बरतें सुखी रहें	६७
३१.	हम अस्वस्थ न रहें—घृणित न बनें	६८
३२.	ढलती आयु का उपयोग इस तरह करें	७१
३३.	अनीति से सतर्क रहें--अन्याय को रोकें	७३
३४.	जो अनुचित है उससे सहमत न हों	७५
३५.	औचित्य की सराहना और अनौचित्य की भर्त्सना की जाय	७७
३६.	सुव्यवस्था ही परिवारों को सुविकसित रख सकेगी	७६
३७.	दाम्पत्य जीवन-एक आध्यात्मिक योग साधना	८१
३८.	पतिव्रत ही नहीं, पत्नीव्रत भी निभाया जाय	८३
३६.	संयुक्त परिवार प्रणाली एक श्रेयस्कर परम्परा	८५
४०.	सन्तान कितनी और क्यों पैदा करें	८७
४१.	सुसंस्कृत संतान के लिये पूर्ण तैयारी आवश्यक	८६
४२.	बालकों को जन्म ही न दें—उनका निर्माण भी करें	६१
४३.	संतान को स्वावलम्बी भर बनाना ही पर्याप्त है	६३
४४.	पर्दा प्रथा नारी के साथ बरती जाने वाली एक नृशंश अनीति	६५
४५.	अपव्यय एक पाई का भी न करें	६७
४६.	धन का उपार्जन ही नहीं, सदुपयोग भी ध्यान में रहे	६६
४७.	अपव्यय और फैशनपरस्ती एक ओछापन	१०१
४८.	जेवरों का भोड़ा फैशन हर दृष्टि से हानिकारक	१०३
४६.	मांस मनुष्यता को त्याग कर ही खाया जा सकता है	१०५
५०.	तम्बाकू का दुर्व्यसन छोड़ा ही जाना चाहिये	१०७

———

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भूमिका

अपना देश हजार वर्ष की गुलामी से अभी-अभी उठा है। इस लम्बी अवधि में उसे दयनीय उत्पीड़न में से गुजरना पड़ा है। यह दुर्दिन उसे अपनी हजार वर्ष से आरम्भ हुई बौद्धिक भ्रान्तियों, अनैतिक आकांक्षाओं और सामाजिक ढाँचे की अस्त व्यस्ताओं के कारण सहना पड़ा। अन्यथा इतने बड़े—इतने बहादुर—इतने साधन-सम्पन्न देश को मुट्ठी भर आक्रमण कारियों का इतने लम्बे समय तक उत्पीड़न न सहना पड़ता।

सौभाग्य से राजनैतिक स्वतंत्रता मिल गई। इससे अपने भाग्य को बनाने बिगाड़ने का अधिकार हमें मिल गया। उपलब्धि तो यह भी बड़ी है, पर काम इतने भर से चलने वाला नहीं है। जिन कारणों से हमें वे दुर्दिन देखने पड़े, वे अभी भी ज्यों के त्यों मौजूद हैं। इन्हें हटाने के लिए प्रबल प्रयत्न करने की आवश्यकता है। अन्यथा फिर कोई संकट बाहर या भीतर से खड़ा हो जायगा और अपनी नई स्वाधीनता खतरे में पड़ जायगी। व्यक्ति और समाज को दुर्बल करने वाली विकृतियों की ओर ध्यान देना ही पड़ेगा और जो अवांछनीय अनुपयुक्त है, उसे हटाकर औचित्य, विवेक एवं न्याय के अनुरूप सारा ढाँचा नये सिरे से खड़ा करना पड़ेगा। आज जो प्रस्तुत है उसमें बहुत कुछ ऐसा है जिसको बदले बिना काम नहीं चल सकता। साथ ही उन तत्त्वों का अपनी रीति-नीति में समावेश करना पड़ेगा, जो प्रगति, शान्ति और समृद्धि के लिये अनिवार्य रूप से आवश्यक हैं। इसी प्रयोजन की पूर्ति के लिये "युग-निर्माण-योजना" एक प्रकाश एवं प्रयत्न के रूप में प्रस्तुत हुई है।

बहुत दिनों से अति प्रबल प्रयत्न करके देश को विचारशील, चरित्रवान और मानवीय भविष्य के निर्माण में अभिरुचि रखने वाले कर्तव्यनिष्ठ व्यक्तियों की एक शृंखला बनाई गई है और लम्बे समय से उनके साथ सम्बन्ध, सम्पर्क साध कर इस योग्य बनाया गया है, जिससे वे भावनात्मक नव निर्माण के विशालकाय अभियान में अपना समुचित योगदान दे सकें। इस समूह के द्वारा व्यक्ति निर्माण, परिवार निर्माण, समाज निर्माण के जो छुट-पुट प्रयत्न देर होते चले आ रहे थे अब उन्हें संगठित और व्यवस्थित करके "युग निर्माण योजना" के अन्तर्गत एक नियोजित और क्रमबद्ध दिशा में काम करने के लिये अभिमुख किया गया है।

भारतीय समाज की वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रख कर ही योजना को वर्तमान स्वरूप दिया गया है। चूंकि कार्यकर्ताओं में से अधिकांश उसी समाज के हैं, इसलिये उनका प्रभाव और कार्य क्षेत्र बहुत करके उसी सीमा तक सीमित है। हिन्दू समाज की वर्तमान स्थिति और अभिरुचि को ध्यान में रख कर ही कार्यशैली का वह ढाँचा खड़ा किया गया है, जो सामने प्रस्तुत है। पर इसका अर्थ यह नहीं समझना चाहिये कि यह नई पद्धति उतने सीमित क्षेत्र तक ही सीमित रहेगी। अपने प्रबल प्रयत्न चल रहे हैं कि दूसरे समाज, देश, भाषा एवं संस्कृति के अनुरूप ऐसी ही योजनाएँ बनें। उनमें इस क्षेत्र की मनोदशा को देख कर जल्दी से जल्दी कार्यारम्भ किया जाय। आज की साधन-संकीर्णता में एक सार्वभौम आन्दोलन सिद्धान्तः तो ठीक है, पर व्यवहार में संभव नहीं। इसलिये अपने प्रयत्न यह हैं कि दिशा, योजना, लक्षण तो एक रहें, पर क्षेत्रीय, वर्गीय भिन्नताओं के अनुरूप उसे अनेक भागों में—अनेक स्वरूपों में—अनेक कार्यक्रमों में विभाजित करके, विश्वव्यापी जन-समाज को एक धर्म, एक देश, एक जाति, एक आचार, एक भाषा के एकात्म लक्ष्य तक घसीट लाया जाय। सार्वभौम एकता एवं वसुधैव कुटुम्बकम् का आदर्श पुस्तकों तक सीमित रहने से आगे बढ़ा कर व्यवहार में उतारा जाय और उसी एकता के आधार पर बाह्य शरीर और आन्तरिक जीवन की सुख-शान्ति को उपलब्ध किया जाय। जिस प्रकार प्रस्तुत योजना हिन्दू-समाज, हिन्दू-दर्शन को लेकर निर्मित की गई है, ऐसी ही योजना हर वर्ग, हर देश, हर धर्म, हर समाज की स्थिति को ध्यान में रख कर जल्दी ही प्रस्तुत की जा रही है। उन्हें—उन्हीं वर्ग के व्यक्ति कार्यान्वित करने का मोर्चा संभालेंगे।

प्रस्तुत योजना का संचालन वृन्दावन रोड पर अवस्थित मथुरा नगर के "गायत्री तपोभूमि" नामक आश्रम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से होता है । इसी को इसका केन्द्रीय कार्यालय समझना चाहिये । ब्रन्दाबन रोड पर मथुरा से एक मील आगे यह भव्य आश्रम प्राचीन काल के तीर्थों का सजीव स्मरण दिलाता है । गायत्री-मंदिर, अखण्ड अग्नि पर नित्य यज्ञ, साधना-तपश्चर्या का वातावरण, साथ ही साहित्य निर्माण प्रकाशन और विद्याध्ययन का यह अद्भुत समन्वय देवालयों के लिये आदर्श ही रहना चाहिये । ६० कमरों वाली इसी भव्य इमारत में प्रवचन-हाल, पुस्तकालय, कला-भारती, साथ में पेड़-पौधों का नयनाभिराम आकर्षण देखते ही बनता है । यहाँ १०० से अधिक व्यक्ति लोक मंगल कार्यक्रमों की पूर्ति के लिये स्थायी निवास करते हैं । इन कार्यकर्ताओं की सेवा भावना और उच्च शिक्षा कैसा चमत्कार उत्पन्न करती है, यह केवल देखने से ही जाना जा सकता है । विचार क्रांति की दिशा में साहित्य निर्माण का अनुपम कार्य इस केन्द्र से हुआ है । भारतीय समाज के प्रायः समस्त धर्म ग्रन्थ—वेदों से लेकर पुराणों तक इसलिये अनुवादित और प्रकाशित किये गये हैं कि भारतयि संस्कृति प्रतिगाम नहीं, वरन् उसका प्रत्येक संदेश प्रगतिशील है । जो अन्ध परम्परायें और रूढ़ियां प्रचलित हैं वे अपने धर्म का अंग नहीं वरन् मध्यकालीन अँधकारमय युग की विकृतियां मात्र हैं । वर्तमान प्रगतिगामिता का धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं । यह सिद्ध करने में इस आर्य साहित्य के प्रकाशन ने हर आस्थावान को सोचने की एक नई दिशा दी है और आस्थाओं के पुनर्विचार का एक महत्त्वपूर्ण अवसर मिला है । इस पुरातन को फिर नवीन के साथ जोड़ देने से संभवतः यह साहित्य-सृजन एक अद्भुत भूमिका प्रस्तुत करेगा ।

साहित्य निर्माण का अपना वर्तमान क्रियाकलाप छोटा होते हुये भी अति महत्त्वपूर्ण है । विज्ञान के आधार पर अध्यात्म के तथ्यों और सत्यों को प्रतिपादित करने वाली "अखण्ड ज्योति" पत्रिका ने नास्तिकों को आस्तिकी और अविश्वासियों को विश्वासी बनाने में अद्भुत सफलता पाई है । बुद्धि जीवियों में आस्था उत्पन्न करने वाली अति उच्च कोटि की प्रामाणिक पाठ्य सामग्री प्रस्तुत करने वाली संभवतः संसार भर की एक मात्र पत्रिका है, जिसे पढ़ कर लोग आश्चर्य करते हैं कि विज्ञान और अध्यात्म जैसे परस्पर विरोधी दीखने वाले तत्त्वों को एक दूसरे का समर्थक, पूरक सिद्ध करने का यह अद्भुत प्रयास कौन करता है—कैसे करता है । इस असम्भव मानी जाने वाली बात को संभव बनाने का प्रयास "अखण्ड ज्योति" पत्रिका के रूप में जो भी देखता है बहुत प्रसन्न और आशान्वित होता है ।

"युग निर्माण योजना" ने व्यवहार और अध्यात्म को मिलाकर जीवन जीने की कला को एक साङ्गोपाङ्ग आचार पद्धति के रूप में उपस्थित किया है । इसे संजीवनी विद्या भी कहते हैं । इस आचार और विचार के साम्याश्रित शास्त्र के सम्बन्ध में लगभग २०० पुस्तिकायें छापी गई हैं । इसी ट्रैक्ट साहित्य में लगभग १०० जीवन-चरित्र इस दृष्टि से छापे गये हैं कि उनसे पाठक को आत्म निर्माण और समाज निर्माण की दिशा में सरलता पूर्वक प्रेरणा, प्रकाश और दिशा मिल सके । कविताओं और कहानियों की भी एक शृंखला इसी सीरीज में प्रकाशित की गई है । उपयोगिता को देखते हुए लगता है कि इस संदर्भ में लगभग १००० ट्रैक्ट पुस्तिकाओं का प्रकाशन निकट भविष्य में ही संभव हो सके ।

नैतिक क्राँति, विचार क्राँति और समाज क्राँति की प्रेरणा को व्यापक रूप देने के लिए वितरण योग्य विज्ञप्तियां प्रकाशित करने की एक नई योजना बहुत ही लोकप्रिय सिद्ध हुई है । इनके अब तक ५०-५० हजार के संस्करण छप चुके हैं और ५० लाख की संख्या में हिन्दी भाषी जनता तक पहुँचाई गई है ।

"युग निर्माण योजना" के सदस्यों के लिए दस पैसा और एक घंटा समय नित्य ज्ञान यज्ञ के लिए लगाना पड़ता है । दस पैसा रोज से वे अपने घर में "ज्ञान मन्दिर पुस्तकालय" स्थापित करते हैं । इतने में उन्हें संस्था की "अखण्ड ज्योति" और "युग निर्माण" पत्रिकायें तथा निरन्तर निकलने वाले ट्रैक्ट तथा वितरण की जाने वाली विज्ञप्तियाँ मिलती रहती हैं और उस घरेलू पुस्तकालय का विस्तार बराबर होता रहता है । इस साहित्य का स्वयं स्वाध्याय करने, अपने परिवार के सभी लोगों को पढ़ाना या सुनाना तथा अपने पड़ौस और परिचय क्षेत्र में उसे पढ़ने को देने तथा वापस लाने में एक घंटा रोज का समय लग जाता है । कितने ही सदस्य अपने साथ इस साहित्य को एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org
सुसज्जित झोले में लेकर निकलते हैं और जहाँ कहीं उनको पहुँच होती है वहाँ तक उस युग परिवर्तनकारी साहित्य को पहुँचाते हैं। यह झोला पुस्तकालय हजारों की संख्या में चलते हैं और लाखों को नियमित रूप से भावनात्मक नव निर्माण का प्रशिक्षण करते हैं।

"युग निर्माण योजना पत्रिका" के माध्यम से इस विशाल परिवार द्वारा जो रचनात्मक कार्य हो रहे हैं, होने जा रहे हैं, हो चुके हैं, उनके स्वरूप एवं निष्कर्षों का ऐसा चित्रण किया जाता है कि इस सृजनात्मक अभियान में लगे हुए व्यक्तियों को प्रस्तुत मार्ग में आने वाली कठिनाईयों के समाधान एवं प्रयत्नों के परिणामों को पहले से ही ध्यान में रख सकना और उसके आधार पर अपने प्रयत्नों को अधिक सतर्कता और व्यवस्था के साथ उठा सकना सम्भव हो सके। आन्दोलन से संबन्धित सभी कार्यकर्ता एवं सहयोगी इस पत्रिका से बहुत प्रकाश और मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं तथा प्रवृत्तियों को अग्रगामी बनाने में बड़ी सहायता मिलती है। सृजनात्मक कार्यों में संलग्न व्यक्तियों के जीवन वृतान्तों का छापना और जन साधारण को इस अनुगमन की प्रेरणा देना पत्रिका की अपनी अनोखी विशेषता है।

व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करके नव-निर्माण की विचारधारा को व्यापक बनाने के लिए सहस्त्रों व्यक्ति झोला पुस्तकालय चलाते हैं। उसका और भी व्यवस्थित, संगठित एवं विकसित रूप "चल-पुस्तकालयों" के रूप में देखा जा सकता है। इस प्रयोजन के लिए विशेष रूप से बनाई गई ठेला गाड़ियों को प्रस्तुत साहित्य से भरकर संभ्रान्त कार्यकर्ता स्वयं निकलते हैं और गली-गली, घर-घर पढ़ाने तथा वापस लेने का क्रम चलाते हुए बेचने का भी प्रबंध रखते हैं। प्रतिभाशाली समाज सेवियों द्वारा महत्ता समझाये जाने पर लोग बहुत कुछ खरीदते भी हैं और चाव से पढ़ते भी हैं। इस प्रकार यह चल पुस्तकालयों की ठेलागाड़ियाँ सफलता पूर्वक अपना प्रयोजन पूरा करती हैं।

योजना अति विस्तृत थी। देश के करोड़ों लोगों तक यह नव जागरण का सन्देश पहुँचाया जाना था। छोटे आयोजन से काम चलने वाला न था। उनमें समय और शक्ति बहुत खर्च होती है, परिणाम कम निकलता है। अधिक प्रभावी सम्मेलन तो वे हो हो सकते हैं, जिनकी विशालता बढ़ी-चढ़ी हो। इस प्रक्रिया को समझाने के लिये "युग निर्माण योजना" के देश भर में बिखरे पड़े कार्यकर्ताओं और सहयोगियों को आमन्त्रित किया गया। दिसम्बर ५८ में यह प्रथम सम्मेलन मथुरा में सहस्र कुण्डी गायत्री महायज्ञ के नाम से हुआ था। आगन्तुकों की संख्या ४ लाख थी। मथुरा से वृन्दावन तक का ७ मील का स्थान खचाखच भरा हुआ था। इतनी बड़ी उपस्थिति मथुरा के इतिहास में कभी नहीं हुई थी। सुदूर प्रदेशों में ऐसे अद्भुत आयोजन का समाचार मिला, तो उसे देखने के लिए लोग बसों में दौड़े। सैकड़ों "स्पेशल बसें" चल पड़ीं। रेलवे ने मथुरा के टिकट देना ही बन्द कर दिया।

उतने बड़े आयोजन की व्यय-व्यवस्था हमारे जैसे साधन हीन व्यक्ति के लिए जुटा सकना कठिन था। पर चूंकि आने वाले सभी इस परिवार के सदस्य और कार्यकर्ता थे, उन्हें वस्तु स्थिति मालूम थी, सो आटा दाल साथ लेकर आये। सभी ने मिल जुल कर पकाया खाया और सफाई, व्यवस्था आदि में स्वयं सेवक बन कर काम किया। लाखों व्यक्यिों का भोजन और दस हजार स्वयं सेवकों को देख कर दर्शक आश्चर्य चकित रहते थे, पर जिन्हें जनता-जनार्दन के राई-राई सहयोग से कितने विशाल कार्य हो सकते हैं, यह तथ्य विदित था, उनने जनाभावना को उभारने और संगठन शक्ति का चमत्कार ही इस आयोजन को माना। निःसन्देह इस युग का यह अनुपम और अद्वितीय आयोजन था। ठहरने, भोजन करने और आयोजनों में भाग लेने वाले ४ लाख थे, पर उनमें से एक लाख तो ऐसे थे जिन्हें कर्मठ कार्यकर्ता कहा जा सकता है और शेष को भाव भरे सहयोगी।

इस विशाल जन समूह ने यज्ञ-आहुतियों का धर्मानुष्ठान भर किया हो—उत्सव की व्यवस्था भर संभाली हो—प्रवचन मात्र सुने हों, सो बात नहीं है। उसने नव निर्माण को अग्रगामी बनाने के लिये गम्भीर विचार विनिमय भी किया और निश्चय किया कि इस विचारधारा को जन-साधारण तक पहुँचाने के लिए प्रचार-अभियान तेज किया जाय। विवेकशीलता एवं आदर्शवादिता के प्रतीक गायत्री यज्ञों के साथ जुड़े "युग निर्माण सम्मेलन" देश भर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org
में किये जायें। तदानुसार वह प्रक्रिया लगातार चल रही है। और हर वर्ष लगभग १०० आयोजन उपरोक्त स्तर के होते चले आ रहे हैं। उत्तर-भारत के प्रायः सभी क्षेत्रों में ऐसे आयोजन बड़ी सफलता के साथ हुए हैं और उनसे करोड़ों जनता ने इस आन्दोलन के स्वरूप को समझा है। यह प्रक्रिया गत दस वर्षों से निरन्तर बढ़ती ही रही है, घटी नहीं।

संगठन प्रचार और साहित्य, इन दिनों इन्हीं कार्यक्रमों को लेकर, हम लोग बिना विज्ञापन बाजी के ठोस रचनात्मक पद्धति से एक निर्धारित दिशा में निरन्तर बढ़ते रहे हैं और अब इस स्थिति में हैं कि कुछ और भी अधिक प्रभावशाली कदम उठा सकें।

व्यापक क्षेत्र में आन्दोलन को अग्रगामी बनाने में "युग निर्माण योजना" का साहित्य इतना सहायक सिद्ध हुआ है कि अब उसे अन्य भाषाओं में छपाने की माँग का उपेक्षित किया जाना सम्भव नहीं रहा। स्वल्प साधन होते हुये भी किसी प्रकार प्रेस बढ़ाया गया है और हिन्दी के अतिरिक्त अब गुजराती, मराठी, उड़िया और अंग्रेजी में प्रकाशन आरम्भ कर दिया है। अगले ही दिनों बंगला, असामिया, पंजाबी, तामिल, तेलगू, मलयालम, कन्नड़ में यह सारा प्रकाशन आरम्भ कर देने के लिये गम्भीरता पूर्वक सोचा जा रहा है और उसके साधन जुटाये जा रहे हैं। यदि ऐसा हो सका तो अब की अपेक्षा आन्दोलन की प्रगति एक ही वर्ष में दस गुनी दृष्टिगोचर होने लगेगी।

व्यक्ति और समाज को नव निर्माण के लिए जिस विचारणा, भावना एवं प्रवृत्ति की आवश्यकता है, उसका क्रमबद्ध शिक्षण करने के लिए इन दिनों एक विशेष शिक्षा योजना बनी है और उसे तेजी से देश व्यापी बनाया जा रहा है। जर्मनी, इटली, रूस, चीन, जापान, क्यूबा, यूगोस्लाविया आदि देशों ने कुछ ही वर्षों में अपनी जनता की मनोदशा में—तथा परिस्थितियों में कायाकल्प किया। उसका आधार शिक्षा पद्धति ही था, जिसके आधार पर वहाँ के छात्रों एवं नागरिकों को एक विशेष पद्धति से सोचने की प्रेरणा मिली और वे व्यक्तिगत स्वार्थों को तिलांजलि देकर राष्ट्र-रचना में अति उत्साह पूर्वक जुट गये। ऐसे परिवर्तन शिक्षा पद्धति को प्रखर बनाये बिना सम्भव नहीं होते। अपने देश को स्वतन्त्र हुए २३ वर्ष हो गए, पर इस सन्दर्भ में सरकार ने कोई उद्देश्यपूर्ण कदम नहीं उठाये। यों पढ़ाई लिखाई का ढर्रा तो ज्यों-त्यों चल ही रहा है और उससे नौकरी के ढूंढ़ने में व्याकुल फिरने वाले बेकारों की संख्या मात्र ही बढ़ रही है। जो हो अब हमें अपनी शक्ति आलोचना की अपेक्षा उस प्रयत्न में लगानी चाहिए जिससे उपरोक्त प्रयोजन की किसी हद तक पूर्ति हो सके।

अपनी अभिनव शिक्षा-योजना इसी प्रयोजन के लिए अग्रसर हो रही है। युग निर्माण शाखाओं में से प्रत्येक को एक रात्रि पाठशाला चलानी पड़ रही है जिसमें सुकरात और अरस्तू की प्रश्नोत्तर पद्धति से व्यक्तिगत जीवन के उत्कर्ष तथा समाज के नव निर्माण सम्बन्धी समस्त विचारणीय प्रश्नों का स्वरूप और समाधान समझाया जाता है। पूरे समय के विद्यालय ऐसे खोले जा रहे हैं जिनमें आधा समय व्यक्ति और समाज निर्माण सम्बन्धी विभिन्न पक्षों को हृदयंगम कराने में लगाया जायगा और आधे समय में वे शिल्प उद्योग सिखाये जायेंगे जिन्हें सुशिक्षित लोग भी बिना शिक्षक के अपना सकें और सभ्य परिवार का खर्च चला सकने योग्य आजीविका कमा सकें। जापान ने विद्युत संचालित छोटी २ मशीनें हर घर में लगाकर और उनके उपयोग की शिक्षा देकर अपने देश को समृद्ध बनाया। वहाँ एक भी वयस्क नर-नारी बेकार नहीं पाया जाता। बचे हुये समय में सभी कुछ न कुछ कमाते हैं और उपार्जन से सुख सुविधाओं का जीवन जीते हैं। अपने देश में भी सुशिक्षितों की बढ़ती हुई बेकारी का यही हल हो सकता है। युग निर्माण विद्यालय मथुरा में इसी प्रयोजन के लिये खोला गया है और आशा की गई है कि उस प्रशिक्षण को पाकर ऐसे स्वावलम्बी लोक सेवक तैयार होंगे, जो न केवल अपनी समस्यायें हल करें वरन अपने क्षेत्रमें ऐसे ही विद्यालय चलाकर राष्ट्र की भौतिक एवं आर्थिक प्रगति का पथ प्रशस्त करने में महत्त्वपूर्ण योगदान करेंगे। इन चार वर्षों में विद्यालय से निकले छात्रों ने जिस जीवन के साथ नव निर्माण का कार्य हाथ में लिया है उसे देखते हुए लगता है तपोभूमि में चल रहा यह प्रशिक्षण राष्ट्र के भविष्य निर्माण में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका सम्पादित करेगा। निकट भविष्य में इसी विद्यालय के अन्तर्गत एक ऐसा विभाग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org
बनने जा रहा है जो उपर्युक्त प्रशिक्षण के खिए अध्यापन कार्य करने को उत्सुक व्यक्तियों को कुछ कम समय की विशेष शिक्षा पद्धति से ट्रेनिंग देकर इस योग्य बना देगा कि वे अपने क्षेत्रों में रात्रि पाठशालाओं के रूप में या पूरे विद्यालय चलाने के रूप में अभिनव शिक्षा पद्धति अपना कर समाज को नई दिशा देने में समर्थ हो सकें।

ज्ञान यज्ञ और अभिनव शिक्षा योजना के अतिरिक्त तीन चरण हमारी कार्यपद्धति में जुड़े हुए और हैं जिन्हें अब अधिक व्यवस्थित रूप में आगे बढ़ाया जायगा।कला के माध्यम से हम स्वस्थ मनोरंजन के साथ जन-जागरण का प्रयोजन कैसे पूरा करेंगे ? इसका एक चरण तो यह है कि चलती-फिरती प्रदर्शिनियों की एक बड़ी योजना बनाकर जगह-जगह लोगों को व्यक्ति और समाज की उलझी हुई समस्याओं के समाधान सुझाये जायेंगे। चित्रावलियों की सीरीज प्रकाशित हो रही है, कुछ खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं, जो हाथों हाथ दिखाये, सुनाये, समझाये जा सकते हैं। सम्मेलनों के साथ तथा अलग से चित्र प्रदर्शनियां कुशल प्रदर्शक कर्ताओं द्वारा प्रभावशाली ढंग से समझाये जाने के कारण आशाजनक प्रभाव दर्शकों के मन पर छोड़ेंगे। प्रकाश चित्र दिखाने की एक अलग योजना है। बिजली से या बैटरी से चल सकने लायक इस प्रयोजन के लिए यन्त्र खरीदे ओर बनवाये जा रहे हैं। कागज पर छपी तस्वीरों को सिनेमा की तरह बड़े पर्दे पर प्रकाश चित्र के रूप में प्रस्तुत करने वाला "एपिस्कोप" इस कार्य के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। काँच के या पारदर्शक फिल्म के ऊपर बने स्लाइड भी अपने प्रयोजन के प्रकाश चित्र दिखा सकें इसके लिए अलग प्रोजेक्टर एवं मैजिक लालटेन बन रही हैं। एक कार्यकर्ता इन यन्त्रों की सहायता से गाँव-गाँव घूमकर वर्ष भर में लाखों लोगों को प्रेरणा दे सकता है। शाखाओं द्वारा एक हजार कार्यकर्ता यदि पूरे समय के लिए या यथावसर काम करने के लिए जुटायें जा सकें तो इसका इतना बड़ा परिणाम होगा जिसकी कल्पना करना भी कठिन है। नौकरी के लिये बेगार भुगतने वाले कर्मचारियों की बात दूसरी है, पर दर्द मंद लोग जिस कार्य को हाथ में लेते हैं उसमें तन्मय ही दिखाई पड़ते हैं और तन-बदन की सुधि भूलकर कमर कस लेते हैं। जहाँ ऐसा उत्साह उमड़ रहा है। वहाँ बात चीत से भी भारी हलचल पैदा की जा सकती है। फिर जहां इस प्रकार के चित्र साधन पास हों तो सोना और सुगन्ध वाली बात बनेगी। फिल्म हम बना नहीं सकते, सिनेमा को उखाड़ नहीं सकते, पर इतना तो कर ही सकते हैं कि चित्र आकर्षण की जन-पिपासा को स्वस्थ मनोरंजन के साथ रचनात्मक दिशा में मोड़ सकें।

जनजागरण के लिये कला का प्रयोग करने की शंखला में क्रान्तिकारी नाटकों की भी एक दिशा है। अभी रामलीला, रासलीला, धनुषयज्ञ आदि आयोजन पुराने ढर्रे पर भी जीवित हैं। यदि इन्हें आधुनिक ज्ञान, कला और सुसज्जा के साथ जोड़ा जाय तो लोक-आकर्षण में एक नई दिशा मिल सकती है। सिनेमा ने समाज को जो दिया वह सुखद नहीं है। उसके प्रति विवेकवान वर्ग में आकर्षण घटता ही जाता है। जहां उपयोगिता गिरेगी वहाँ उपेक्षा बढ़ेगी। कोई और सस्ता मनोरंजन होने से जो कुछ सामने आता है उसे ही देखने लोग चले जाते हैं। पर जब कला और आदर्श का सम्मिश्रण एक उपयोगी दिशा देगा तो कोई कारण नहीं कि उसे मान्यता न मिले। विचार यह है कि संगीत, वाद्य, अभिनय, नृत्य, नाटक का परिष्कृत कला-मंच खड़ा किया जाय। उसके अनेकों मंडल अनेकों भाषाओं में तैयार करके अनेक प्रदेशों में भेजे जाँय और विचार क्रान्ति की पृष्ठ भूमि तैयार की जाय। इस प्रयोजन के लिए गायत्री तपोभूमि में एक कला भारती कक्ष अलग से बन रहा है जहाँ उपरोक्त सभी प्रशिक्षणों की व्यवस्था रहेगी और उसमें शिक्षार्थी आकर इस सेवा साधना के लिये आवश्यक शिक्षा प्राप्त करके प्रयोजन को पूरा करेगा। कुछ मंडलियाँ मथुरा में भी रहेंगी और बनेंगी। शेष जगह-जगह बनें और चलें— अपने क्षेत्रों में काम करें ऐसी सुविधा उत्पन्न की जायगी। इस विशाल देश की ५० करोड़ जनता को प्रशिक्षित करने के लिये ऐसे हजारों कला मंडल काम करने लगें तो भी कम है। मथुरा की शुरूआत इस मंच का अति व्यापक विस्तार करने और प्रशिक्षण की सुविधा जुटाने की दृष्टि से ही हो रही है।

इस संदर्भ में ग्रामोफोन रिकार्डों के उत्पादन की योजना भी हाथ में ली गई है। लाउडस्पीकरों द्वारा उत्सव आयोजनों के विशेष अवसर पर, भीड़-भाड़ के सार्वजनिक स्थानों पर नित्य उपयुक्त समय पर इन्हें बजाया जा सकता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है, प्रातःकाल के शान्त वातावरण में किसी ऊँचे स्थान पर चोंगे लगा दिये जायें तो सारे नगर को नव युग का सन्देश सुनने को मिल सकता है। रेडियो स्टेशन स्वीकार कर ले तो वे भी इन रिकार्डों को बजाकर जनता की बड़ी सेवा कर सकते हैं। रिकार्डों का यह उत्पादन आरम्भ भी कर दिया गया है और योजना है कि अगले दिनों एक से एक अधिक प्रेरणा भरे गायन सुमधुर कण्ठों से गाये जाकर हजारों रिकार्डों द्वारा जागृति का सन्देश सुनाये जाने का कार्य-क्रम पूरा करने लग जायें।

हमारे साधन अत्यन्त स्वल्प हैं। पर हिम्मत, जन-सहयोग और ईश्वर का भरोसा रख कर सदुद्देश्य से जो कदम उठ रहे हैं वे किसी न किसी प्रकार पूरे होंगे ही—साधन कहीं से जुटेंगे ही, यह विश्वास रखा गया है। आश्चर्य है कि यह विश्वास किसी प्रकार कार्यान्वित और सफल होता ही चला जा रहा है। यह परिणाम इस बात की पुष्टि करता है कि सूर्य और चन्द्रमा का सहयोग न होने पर भी अमावस की रात को दीपावली पर्व में बदल दिया गया था। इसी प्रकार हम छोटे व्यक्तित्व, बड़े लोगों के उपहास पात्र रहकर भी, कुछ कहने लायक काम कर सकेंगे।

रचनात्मक कार्यों को देश के हर नागरिक को जुटा देने की अपनी शतसूत्री योजना बहुत ही लोकप्रिय होती चली जा रही है। रात्रि पाठशालायें, प्रौढ़-पाठशालाएँ, कोचिङ्ग स्कूल, उद्योग शालायें, सहकारी समितियाँ, सेवा समितियाँ, सुरक्षा-दल, पुस्तकालय, व्यायाम शालायें, खेल-कूद प्रतियोगितायें, सत्कर्मों का अभिनन्दन, पर्व और त्यो-हारों के उत्सव, शाम फूल और वृक्षों की अभिवृद्धि, स्वच्छता, गौ-संरक्षण, श्रमदान, कीर्तन, विचारगोष्ठियाँ, क्लब आदि अनेक रचनात्मक प्रवृत्तियों से देश के हर नागरिक को किसी न किसी प्रकार—अपनी स्थिति और क्षमता के अनुरूप राष्ट्र-रचना के कार्यों में लगने वालों की प्रेरणा दी जा रही है। जब हर व्यक्ति इस प्रकार के लोक-मंगल के कामों में भाग लेना आवश्यक कर्तव्य समझेगा तभी नव निर्माण के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ उत्पन्न होंगी। इस दृष्टि से यह रचनात्मक कार्य आन्दोलन दूरगामी परिणाम ही उत्पन्न करेगा।

पाँचवाँ कार्यक्रम संघर्षात्मक है। समझाने से भले आदमी मान जाते हैं, पर दुष्टता और मूर्खता को बदलने के लिए संघर्ष की जरूरत पड़ती है। असहयोग, विरोध, प्रदर्शन, सत्याग्रह, घिराव, कानूनी कार्यवाही आदि माध्यमों से अनैतिकता, अनाचार, भ्रष्टाचार, अपराध, धूर्तता, दुष्टता, बेईमानी, शोषण, अन्धविश्वास आदि अनेक स्तर की, अनेक रूपों की, जो बुराईयाँ विभिन्न क्षेत्रों में बिखरी पड़ी है उन्हें चुपचाप सहते रहने और मन ही मन कुड़मुड़ाते रहने भर से कुछ काम न चलेगा। प्रतिरोध के लिये सशक्त संघर्ष की जरूरत पड़ेगी, सो उसके लिये जितनी अपनी सामर्थ्य बढ़ती जायगी उतने ही तेज कदम उठने लगेंगे। सैनिकों द्वारा लड़े जाने वाले—गोला बारूद वाले युद्ध को हम रोकना चाहते हैं। पर इस प्रकार के विश्वव्यापी युद्ध के पक्ष में हैं जो जन-जन द्वारा पग-पग पर अज्ञान और अनाचार के—गरीबी और बेकारी के—कुत्साओं और कुण्ठाओं के विरुद्ध अतीव शौर्य और साहस के साथ लड़ा जाय। हमारा विश्वास है कि यही संसार का अन्तिम युद्ध होगा और इसके बाद युद्ध की निरर्थकता और सृजन की सार्थकता को समझकर अपनी गति-विधियों में मानवीय सद्गुणों का आवश्यक समावेश कर लेंगे। तब 'जिओ और जीने दो' और 'सादा जीवन उच्च विचार' जैसे उच्च आदर्शों के अनुरूप नई दुनियाँ का नव निर्माण संम्भव हो सकेगा और चिरस्थायी विश्व शान्ति स्थापित हो सकेगी।

युग निर्माण योजना इन्हीं प्रयासों में निरत है। प्रामाणिक व्यक्तियों द्वारा—उचित साधनों द्वारा—दूरदर्शी कार्य पद्धति के साथ सदुद्देश्य लेकर जो भी कार्य आरम्भ हुये हैं सदा सफल होते रहते हैं। विश्वास किया जा सकता है कि उपयोगी तथ्यों को ध्यान में रखकर चल रही युग निर्माण योजना मानव में देवत्व का उदय और धरती पर स्वर्ग के अवतरण का स्वप्न साकार करके रहेगी।

श्रीराम शर्मा आचार्य

संचालक 'युग निर्माण योजना' मथुरा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आस्तिकता एवं उपासना का प्रयोजन—प्रतिफल

क्र० १

इस सृष्टि का अधिपति भगवान् है। उसने हर वस्तु को बनाकर उसकी सीमा मर्यादायें बना दी हैं। सृष्टि का हर पदार्थ एवम् प्राणी अपनी नियत मर्यादाओं में रहकर ईश्वरीय प्रयोजन को पूरा करता रहता है। एक मनुष्य ही है जो अपनी बुद्धि और प्रकृति का दुरुपयोग करता है, कुमार्गगामिता अपनाकर अपने तथा दूसरों के लिये सङ्कट उत्पन्न करता है। इस पथ-भ्रष्टता से बचने के लिये 'धर्म' की रचना आवश्यक हुई। ऋषियों ने बड़ी दूरदर्शिता के साथ धर्म का कलेवर खड़ा किया, ताकि उस पुण्य चेतना द्वारा मनुष्य को दुर्बुद्धि एवम् दुष्प्रवृत्तियों से बचाया जा सके। धर्म का सारा ढाँचा, सारी प्रथा, परम्परायें, मान्यतायें, आस्थायें केवल इसी प्रयोजन के लिए हैं कि मनुष्य अपनी नियत निर्धारित मर्यादाओं के भीतर रहकर जीवन-यापन करे।

धर्म का प्रथम आधार है—आस्तिकता, ईश्वर विश्वास। परमात्मा की सर्वव्यापकता, समदर्शिता और न्यायशीलता पर आस्था रखना, आस्तिकता की पृष्ठ-भूमि है। यह मान्यता मनुष्य की दुष्प्रवृत्तियों पर अंकुश रख सकने में पूर्णतया समर्थ होती है। सर्वव्यापी ईश्वर की दृष्टि में हमारा गुप्त-प्रकट कोई आचरण अथवा भाव छिप नहीं सकता। समाज की, पुलिस की आँखों में धूल झोंकी जा सकती है, पर घट-घटवासी परमेश्वर से तो कुछ छिपाया नहीं जा सकता। परमदर्शी परमेश्वर न्यायकारी भी है, उसकी न्याय व्यवस्था हर किसी के लिए समान है। निष्पक्ष न्यायाधीश लोक-मर्यादाओं की रक्षा के लिये हर अपराधी को बिना राग-द्वेष के उचित दण्ड देता है। ईश्वर को हमारा हर पाप, अपराध विदित होता है और वह आज या कल हमारे पापों का दण्ड भी देकर रहेगा। अदालत और पुलिस से बच सकते है, परमेश्वर से नहीं। यह मान्यता हमें पापों से बचाती है। हमारी अधिकांश दुष्प्रवृत्तियां इसलिए चलती रहती हैं कि राज-दण्ड या समाज-दण्ड से चतुरता के आधार पर बच जाते हैं। ऐसी चतुरता सर्वव्यापी और न्यायकारी ईश्वर के सामने नहीं चल सकती। इस तथ्य पर जो भी विश्वास करेगा, वह पाप से डरेगा और मर्यादाओं में रहने के लिए—सज्जनोचित, सभ्य-जीवन जीने के लिए विवश होगा।

आस्तिकता धर्म का इसलिए प्रथम आवश्यक एवं अनिवार्य अङ्ग माना गया है कि उससे हमारा सदाचरण अक्षुण्य बना रह सकता है। सत्कर्मों का सत्परिणाम या दुष्कर्मों का दुष्परिणाम आज नहीं तो तो कल मिलेगा ही, यह मान्यता वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन में नीति और कर्त्तव्य का पालन करते रहने की प्रेरणा देती है। सत्कर्म करने वाले को आज यदि प्रशंसा, मान्यता या सफलता नहीं मिली है तो ईश्वर भविष्य में देगा ही, यह आस्था उसे निराश नहीं होने देती और असफलतायें मिलने पर भी वह सदाचरण के पथ पर आरूढ़ बना रहता है। इसी प्रकार कुकर्मी निर्भय नहीं हो पाता। उसे राज-दण्ड से बच जाने पर भी यह भय बना रहता है कि यहाँ नहीं तो वहाँ नरक की असह्य यन्त्रणायें सहने के लिए विवश होना पड़ेगा। ईश्वर के दरबार में किसी के साथ रियायत नहीं बरती जाती। वह समदर्शी है। सभी उसके अपने और सभी बिराने हैं। जो आचरण की कसौटी पर खरा सो उसे परम प्रिय—जो उस कसौटी पर खोटा सो घोर शत्रु। समदर्शी ऐसे ही होते हैं। वे खुशामद या रिश्वत से विचलित नहीं होते। उन्हें कोई प्रिय-अप्रिय नीति और अनीति के कारण ही होता है। यह मान्यतायें यदि ठीक तरह जनमानस में प्रवेश कर सकें तो निश्चय ही व्यक्ति दुराचरण से विरत रहेगा और नीति एवं सदाचरण का ही अवलम्बन ग्रहण करेगा। आस्तिकता की सबसे बड़ी देन यही है। इसलिए उसे धर्म का प्रधान अङ्ग माना गया है। व्यक्ति की उन्नति एवं समाज की शांति, सज्जनता एवं मर्यादा पालन पर निर्भर है, यह दोनों ही प्रेरणायें आस्तिकता में सन्निहित हैं।

आज हर दिशा में विकृतियों की भरमार है। आस्तिकता भी विकृत हो गई है। लोग मान बैठे हैं कि थोड़ी-सी चापलूसी करने या भेंट-पूजा की छोटी-मोटी रिश्वत देकर ईश्वर को अपना पक्षपाती बनाया जा सकता है और फिर उससे अयोग्य होते हुए भी बड़ी-बड़ी उपलब्धियाँ प्राप्त की जा सकती हैं तथा पापों के दण्ड से बचने का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

छूट पाई जा सकती है। अनेक तरह के कर्मकांडों का प्रचलन उपरोक्त दो कल्पनाओं के आधार पर ही चल पड़ा है। यदि यह कल्पना सही हों तो फिर ईश्वर का मूलस्वरूप ही विकृत हो जायगा, फिर उसे पक्षपाती, रिश्वतखोर, खुशामद पसन्द, अव्यवस्था और अन्धेर फैलाने वाले कहा जायगा। ऐसी आस्तिकता विघातक सिद्ध होगी। हो भी रही है। लोग प्रसाद या बकरी, मुर्गी भगवान् पर चढ़ाते हैं, स्तुति गान इसलिए करते हैं कि इनसे प्रसन्न होकर हमें अनेक तरह के वरदान मिल जायें। भले ही उन्हें प्राप्त करने के अयोग्य हों अथवा कर्मफल के कारण उन सफलताओं से वञ्चित रहने की स्थिति हो, तो भी अपनी पूजा-पत्री उन अवरोधों को हटाकर हर प्रकार की मनोवांछनायें तुर्त-फुर्त पूरी करने की व्यवस्था बना दे। आज की विकृत आस्तिकता इसी रूप में फैली पड़ी है। लोग इसी आधार पर पूजा-पाठ का आडम्बर चलाते हैं। यदि अभीष्ट मनोरथ सफल नहीं होता या देर लगती दीखती है तो झल्लाकर पूजा उपकरणों को ही फेंक देते हैं और हजारों गालियां सुनाते हैं। बाल-बुद्धि से प्रेरित इस आस्तिकता का न कोई आधार है न कोई आदर्श।

आस्तिकता की आस्था को परिपक्व करने के लिये उपासना का आश्रय लिया जाता है। पूजा, ध्यान, जप, देव-दर्शन, भगवत गुण-गान, तत्त्व-चर्चा, आत्म-चिन्तन, कीर्तन एवं अनेक कर्मकाण्डों द्वारा इस का प्रयत्न किया जाता है कि ईश्वर को भूले रहने की चूक से बचा जा सके। भगवान् की स्मृति मस्तिष्क में बनी रहे तो इस बात पर भी विचार उठना ही चाहिये कि आत्मा का परमात्मा से क्या सम्बन्ध है, उसने हमें किस काम के लिये संसार में भेजा है? जीवन का उद्देश्य क्या है? शान्ति और प्रगति के लिए ईश्वरीय आज्ञाओं का पालन और मर्यादा परक अनुशासन हमारे लिए क्यों अनिवार्य है? ईश्वर को भूले रहने पर इनमें से एक भी प्रश्न मन में नहीं उठता और मनुष्य वासना, तृष्णा के जञ्जाल में फंसा हुआ व्यर्थ अथवा अनर्थ से भरे हुए कर्मों में निरत रहता हुआ बहुमूल्य मनुष्य-जीवन बर्बाद कर देता है। यह एक बहुत बड़ी क्षति है। इसलिए नास्तिकता को—ईश्वरीय सत्ता अमान्य करने को एक पाप बताया गया है।

उपासना का अर्थ है—समीप बैठना, हर आस्तिक को थोड़ा समय उपासना के लिये लगाना चाहिए। उन क्षणों में अनुभव करना चाहिए कि जो कुछ शरीर, मन, धन, वर्चस्व-वैभव हमारे पास है, वह सब ईश्वर का है। उसका न्यूनतम अंश निर्वाह के लिए लेकर शेष सभी भगवान् के लिए अर्पित करना है। भक्ति का अर्थ है प्रेम—प्रेम का अर्थ है सेवा या अनुदान। सच्चा भक्त ईश्वर प्रदत्त उपहारों में से न्यूनतम ही अपने लिए लेता है और शेष उसी के चरणों में अर्पित कर देता है। आत्मा अर्थात् एक परम आत्मा, अर्थात् समस्त आत्मा की समग्र सत्ता। इसी को विश्वात्मा भी कहते हैं। विश्वात्मा के प्रति आत्म-समर्पण का नाम ही उपासना है। इसकी प्रतिक्रिया यह होनी चाहिये कि हम केवल अपने लिए नहीं समस्त विश्व के लिए—प्राणी मात्र के हित के लिए—समाज की सुख-सुविधायें बढ़ाने के लिये जियें और विचारणा तथा कार्य पद्धति ऐसी रखें जिससे परम आत्मा को—विश्व की समस्त आत्माओं को प्रसन्नता एवं सन्तुष्टि प्राप्त हो।

उपासना करते समय हम भगवान् से प्रकाश, अमृत और सत् की याचना करते हैं, यह तीनों ही शब्द सद्ज्ञान के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। ईश्वर हमें ऐसी प्रेरणा, शक्ति एवम् उमङ्ग प्रदान करे, जिनसे प्रेरित होकर हम महामानवों जैसे विचार एवं कर्म अपनाकर मनुष्य-जीवन की साथकता सिद्ध कर सकें। भगवान् की निकटता अनुभव करने के लिए की गई, उपासना हमें दैवी गुणों से विभूषित होने की प्रेरणा देती है। ईश्वर उदारता, करुणा, सहायता, पवित्रता, न्यायनिष्ठा आदि विशेषताओं का सागर है। उसकी समीपता हममें वैसी ही विभूतियाँ उत्पन्न करे, यही कामना और मान्यता उपासना के समय की जा सकती है। अपने साथ ईश्वर है, यह मानकर कोई भी व्यक्ति हर घड़ी निर्भय रह सकता है।

हमें आस्तिक होना चाहिए और प्रतिदिन थोड़ा समय निकालकर नियमित रूप से उपासना करनी चाहिये, ताकि ईश्वर और उसके निर्देशों को भली भाँति हृदयङ्गम किये रह सकें। फलस्वरूप व्यक्तिगत सदाचरण एवम् सामाजिक कर्त्तव्य पालन की प्रवृत्ति निरन्तर बढ़ती रहे और सर्वत्र श्री, समृद्धि, प्रगति एवम् शान्ति की परिस्थितियाँ उत्पन्न होती रहें।

'उपासना जीवन की अनिवार्य आवश्यकता' पुस्तिका से।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देववाद और पूजा-अर्चा का रहस्य

क्र० २

भारतीय संस्कृति एक ही ब्रह्म मानती है। वस्तुतः भगवान् एक ही है। नाम उसके अनेक हैं। रूपों की कल्पना अलग-अलग मतानुसार अलग-अलग प्रकार की गई है पर इससे ब्रह्म की एकतामें कोई अन्तर नहीं आता। अनेक देवता अनेक सत्तायें नही हैं वरन् एक ही परमात्मा की अनेक शक्तियाँ भर हैं। अगर अनेक देवताओं के स्वतंत्र अस्तित्व होते तो वे आपस में लड़ मरते और उनके अनुयायी परस्पर कभी एक न रह सकते। जिन लोगों ने भ्रमवश एक ब्रह्म को अनेक ब्रह्मों के रूप में समझा उन्हीं ने देवताओं के स्वतन्त्र अस्तित्व माने हैं। और अनेक मत सम्प्रदाय तथा पंथों को जन्म दिया है। इससे संस्कृति को भारी क्षति पहुँची है और अपना समाज अनेक सम्प्रदाओं और मत-मतान्तरों के रूप में बिखर कर दुर्बल हो गया, हमें वस्तुस्थिति समझनी चाहिये और 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' के श्रुति वचन को ध्यान में रखते हुए बहुदेववाद के भ्रम जंजाल से ऊपर उठकर सर्व शक्तिमान, सर्वव्यापी न्यायकारी परब्रह्म परमेश्वर को एक सत्ता के रूप में जानना मानना चाहिये।

अनेक देवताओं की अलंकारिक कल्पना परोक्ष रूप में सद्गुणों और सत्प्रवृत्तियों की प्रतिष्ठापना के लिये है। उनके स्वरूप, वाहन, आयुध आदि के पीछे पहले की तरह अनेक रहस्य और अर्थ छिपे पड़े हैं जिन्हें चर्चा का विषय बनाकर हम सब उस देवता के भक्त, अनुयायी बनकर वैसा ही आचरण करने की प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं। हर देवता इसी प्रकार की प्रेरणा, शिक्षा एवं अभिव्यंजना का रहस्यवाद अपने भीतर छिपाये हुए हैं।

शंकर जी को लीजिये। उनके सिर में से निकलती गंगा पवित्रता से परिपूर्ण गंगा का प्रतिनिधित्व करती है। मस्तक पर चन्द्रमा शान्ति शीतलता और प्रकाश का प्रतीक है। हमारा मस्तिष्क ज्ञान गंगा की तरंगें प्रवाहित करे, सन्तुलित शान्त, शीतल और प्रकाश पूर्ण रहे तो समझना चाहिए कि शंकर जी की भक्ति एक दिव्यअनुकरण के रूप में हमारे में उत्पन्न हो चली। विष संसार में बिखरा पड़ा है। अपने को भी उस विष से सम्पर्क रहेगा ही। उसे उगलें तो कटुता और विद्वेष बढ़ेगा। पेट में पीते हैं तो आत्मघात होता है। इसलिये उचित यही है कि इसे गले में ही अधर टाँगे रखा जाये। अपने को घृणा की आग में जलायें और न क्रोध से दूसरों को संतप्त करें। शंकर जी इसी तत्त्वज्ञान के प्रतीक हैं। विष उनके कण्ठ में स्थापित है। समुद्र मन्थन से निकले विष से संसार को बचाने के लिये उनने विष को अपने कण्ठ में धारण किया और नीलकण्ठ कहलाये, विश्व शान्ति के लिए हमें ऐसा ही दुस्साहस कर सकने की हिम्मत बंधे तो समझना चाहिये कि शंकर जी की भक्ति का उदय अपने अन्तःकरण में हो रहा है।

सर्प शंकर जी के सहचर हैं उनके गले से लिपटे रहते हैं। दुष्ट और दुर्गुणी व्यक्तियों को प्रेम, सहानुभूति, करुणा और समीपता से ही सुधारा जा सकता है। यह निष्कर्म शिवजी की सर्प समीपता से निकाला जा सकता है। उनके साथी, सहचर, भूत-प्रेत 'तनु छीन कोउ अतिपीन, पावन कोउ अपावन तनुधरे' जैसे थे। पिछड़े हुए उलझे हुये टूटे हुये, निराश और गिरे हुये लोगों को उपेक्षा के गर्त में नहीं फेंका जाना चाहिये। शिवजी अपनी बरात में इन्हीं चित्र-विचित्र नन्दी गणों को लेकर गये थे। पिछड़ेपन को दूर करने के लिये हमारी गतिविधियाँ भी ऐसी ही होनी चाहिये। मरघट में निवास, शरीर पर भस्म लेपन, गले में मुण्डनमाल यह बताती है कि मृत्यु को भुलाया न जाय। जीवन की नश्वरता को ध्यान में रखा जाय और मरणोत्तर जीवन में अपनी क्षुद्रतायें कितना संकट खड़ा कर सकती हैं उसे बार-बार विचारता रहा जाय। मृत्यु की तैयारी में जीवन का सदुपयोग यही वह तत्त्व ज्ञान है जिसके आधार पर व्यक्ति धार्मिकता और आध्यात्मिकता को सच्चे मन से अपना सकता है। शंकर जी का अनुगमन करने वाला भक्त मरघट में निवास भले ही न करे, भस्म लेपन भले ही न करे पर जीवन की तरह मृत्यु को भी स्वागत योग्य बनाने की तैयारी जरूर करता होगा।

शंकर जी सिंह चर्म पहनते हैं और उनका वाहन वृषभ है। सिंह के समान निर्भीक, साहसी और शूरवीर ही अपने कलेवर को भगवान का परम प्रिय आवरण बना सकने में सफल होते हैं। वृषभ के समान परिश्रमी, संतुलित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org
और उत्तरदायित्वों का भार कंधे पर प्रसन्नता पूर्वक वहन करने वाले लोग ही भगवान के वाहन पार्षद निकटवर्ती हो सकते हैं। सद्गुणों के साथ परमेश्वर का अनुग्रह, प्रेम, प्रकाश और सान्निध्य जुड़ा हुआ है यह तथ्य उसके शरीर पर धारण किये हुए व्याघ्रचर्म और वाहन वृषभ के अलंकार से टपकता है। यों रामायण के मंगलाचरण में तुलसीदासजी ने 'भवानी शंकरौवदे' श्रद्धा विश्वास रूपिणौ की अभिव्यक्ति में भवानी को श्रद्धा और शंकर को विश्वास के रूप में प्रतिपादित किया है।

इसी प्रकार अन्यान्य देवताओं के पीछे अलंकारिक रहस्यवाद छिपा पड़ा है। ब्रह्माजी ने परास्त देवताओं को इकट्ठे कर उनकी थोड़ी-थोड़ी शक्ति इकट्ठी करके उससे दुर्गा का सृजन किया और उसके द्वारा असुरों का पराभव और देवताओं का उत्कर्ष संभव हुआ—इस पौराणिक उपाख्यान में सज्जनों को अपनी संघशक्ति विकसित करने और उसके द्वारा अगणित आपत्तियों से छुटकारा पाने का निर्देश है। रामभक्ति के लिए ईश्वरीय आदर्शों और कर्त्तव्यों के लिए सर्वतोभावेन समर्पण करने वाले हनुमान वानर जैसी क्षुद्र स्थिति के होते हुए भी भगवान के परमप्रिय बने। यह रहस्य उन्हें कान खोलकर सुनना और आँख खोलकर देखना चाहिए जो थोड़ा सा नाम जप, पूजा प्रसाद या स्तुति प्रशंसा की लकीर पीटकर ईश्वरीय अनुग्रह जैसे महान अनुदान की कल्पना-जल्पना करते रहते हैं।

देव पूजा में प्रयुक्त होने वाले पदार्थों और कर्मकाण्डों के पीछे भी धर्म और अध्यात्म के पथ पर चलने वाले साधकों को बहुत ही महत्त्वपूर्ण शिक्षण प्रस्तुत मिलेगा। भगवान के चरणों पर पुष्प ही चढ़ते हैं और उनके गले में पुष्प माला ही पहनाई जाती है। पुष्प अर्थात् सुगन्धित, हँसता, खिलता, सत्यं, शिवं, सुन्दरम् पर आधारित आत्मिक सौंदर्य सम्पन्न व्यक्ति। उस स्तर का व्यक्ति जन अपने पेट का मोह छोड़कर अपनी गरदन नुचवाता हुआ सुई धागों से पेट छिदवाता हुआ त्याग बलिदान के मार्ग पर अग्रसर होता है तो वह ईश्वर के चरणों मे स्थान पाने तथा छाती से लगने में समर्थ होता है। पूजा में प्रयुक्त होने वाले पुष्प यही शिक्षण उपासक को देते हैं।

चन्दन अर्थात् समीपवर्ती झाड़ियों को अपने समान सुगन्धित बनाने वाली क्षमता से सम्पन्न जो घिसे जाने और जलाए जाने पर भी रोब, विद्वेष पास न भटकने दे वरन् सुगन्ध ही फैलाता रहे पूजा का अधिकारी हो सकता है। और अर्चना को सार्थक बना सकता है। भगवान को केवल मीठे का ही भोग लगता है, मीठी वाणी, मीठा व्यवहार, मीठा आचरण, शिष्ट विनम्र और मधुर व्यक्तित्व यह वह सर्वतोमुखी मिठास है जिसे देवता पसंद करते और प्रभावित होते हैं। दीपक अर्थात् स्नेह से भरा हुआ, स्वयं तिल-तिल जलकर दूसरों को प्रकाश देने वाला मनुष्य देवमंदिर की शोभा दीपक से है, पूजा का वह एक महत्त्वपूर्ण अंग है। दीपक की प्रवृत्ति जिसके भी जीवन-क्रम में समाविष्ट हो गई समझना चाहिये कि वह पूजा का साक्षात प्रतीक प्रतिनिधि बन गया।

ऊपर की पंक्तियों में संक्षिप्त रूप से एक ब्रह्म के अनेक अलंकारों को रूपकों की तरह देवी देवताओं के रूप में प्रस्तुत करने का क्या प्रयोजन था ? उसकी एक हलकी झांकी कराई गई है। असंख्य देवी देवताओं की ऐसी ही व्याख्या की जा सकती है। हमें उस गहराई तक प्रवेश करना चाहिये और उस तथ्य, संकेत एवं निर्देश को समझना चाहिये जिसके आधार पर कि देवी देवताओं की कल्पना की गई थी। सरस्वती अर्थात् ज्ञान, लक्ष्मी अर्थात् धन। काली अर्थात् बल। जीवन की प्रगति में ज्ञान, धन और बल का सम्पादन और सदुपयोग करने का प्रशिक्षण अलंकारिक रूप में उपरोक्त तीन देवियों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसी प्रकार अन्य देवताओं के पीछे भी समुन्नत जीवन की शिक्षा का तत्वज्ञान रहस्यवाद ढंग और अलंकारिक रूप से समझाया गया है। पूजा के उपकरण चन्दन, रोली, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य आदि के माध्यम से भी ईश्वर भक्ति के लिये हमें अपना भावनात्मक परिष्कार कैसे करना चाहिये, यही सब सिखाया गया है।

देवताओं से तरह-तरह की मनौती मांगने और उन्हें खुशामद या रिश्वत के बाल प्रलोभनों से प्रसन्न करने के छिछोरपन को हम जितनी जल्दी छोड़ दें उतना ही उत्तम है। देवता न इतने मूर्ख या ओछे हो सकते हैं और न उन्हें सस्ते प्रलोभनों से बहलाया फुसलाया जा सकता है। भावनात्मक प्रगति के आधार पर ही ईश्वर की देव शक्तियाँ हमारे अनुकूल बनतीं और अनुग्रह करती हैं, इस तथ्य को जितनी जल्दी समझ लिया जाय उतना ही उत्तम है।

'हम ईश्वर से विमुख न हों' पुस्तिका से।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवन-लक्ष्य समझें और उसे प्राप्त करने का प्रयत्न करें। क्र० ३

मनुष्य जीवन ईश्वर का एक अनुपम उपहार है। जो सुविधाएँ किसी जीव-जन्तु को नहीं मिलीं वे मनुष्य को मिली हैं। हँसना, बोलना, लिखना, पढ़ना, सोचना, परिवार, चिकित्सा, उद्योग, निवास, वाहन, मनोरंजन आदि के जितने जैसे सुविधा साधन मनुष्य को मिले हैं वैसे क्या और किसी प्राणी को उपलब्ध हैं ?

यों ईश्वर को सभी जीव 'समान रूप से प्रिय हैं। वह सभी का पिता है इसलिए सभी के प्रति उसे सकरुण और पक्षपात रहित होना ही चाहिए। जो सुविधा अन्य किसी को नहीं मिलीं वे मनुष्य को मिलीं हैं तो उसमें पक्षपात की गंध आती है और लगता है कि दूसरों की तुलना में उसे कुछ अधिक, अतिरिक्त दिया गया। ऐसा क्यों हुआ ? इस प्रश्न पर विचार करने से यह तथ्य सामने आता है कि ईश्वर ने सृष्टि की शान्ति, सुव्यवस्था, प्रगति, समृद्धि एवं सुन्दरता की अभिवृद्धि के लिए मनुष्य को अपने सहायक सहचर के लिए रचा है। और अपनी सारी विशेषताएँ, विभूतियाँ और सत्ताएँ इसमें भर दी हैं। ताकि वह इन पुण्य प्रयोजनों का ठीक तरह निर्वाह कर सकने में पूरी तरह समर्थ रहे। अतिरिक्त सुविधाऐं अमानत के रूप में मनुष्य को दी गई हैं वह उसके लोभ, विलास और अहंकार की पूर्ति के लिए नहीं वरन् इसलिए हैं कि लोक-मंगल के लिए वह अधिक योगदान दे सके।

जिस प्रकार सृष्टि के अन्य प्राणी शरीर यात्रा की सामान्य सुविधा सामग्री पाकर सन्तुष्ट हो जाते हैं, मनुष्य को भी वैसा ही करना चाहिए। विलासिता, उपयोगी, संचय या अहंकार की पूर्ति से यदि उपलब्ध क्षमताएँ समाप्त करली जाती हैं और जीवनोद्देश्य की पूर्ति की ओर से आँखें मींच ली जाती हैं तो यही कहा जायगा कि हम ईश्वर के महान प्रयोजन को भूल गये और लाखों योनियों में भ्रमण करने के बाद—चिरकाल पश्चात् जो एक अलभ्य अवसर मिला है उसे ऐसे ही गंवा दिया, तो यह बुद्धिमान समझे जाते हुए भी हमारी अबुद्धिमत्ता और अदूरदर्शिता ही सिद्ध होगी।

हमें लाभ हानि का अन्तर भली प्रकार मालूम है। अपने समस्त क्रिया कलापों का निर्धारण इसी आधार पर करते हैं, फिर न जाने क्या आश्चर्य की बात है कि हमें मनुष्य जीवन जैसे अमूल्य अवसर का लाभ उठाने की बात नहीं सूझती और इसे ऐसे ही व्यर्थ की वाल क्रीड़ाओं में गँवा देते हैं गंवाते ही नहीं वरन् दुरुपयोग कर विविध विधि पाप कमाते हैं जिससे भविष्य में इनका दंड अनेक जन्मों तक भुगतने के लिए विवश होना पड़ता है। इससे तो वे जीव-जन्तु अच्छे जो किसी प्रकार निर्वाह करके जैसे आये थे वैसे ही अपनी बेदाग चादर लेकर चले जाते हैं। अगले जन्मों के लिए पाप की गठरी और नारकीय यंत्रणा का भारी बोझ लेकर तो विदा नहीं होते। मनुष्य पिछले जन्मों के कष्टों को याद कर रोता हुआ ही आता है और भविष्य को अन्धकारमय, यातनापूर्ण देखकर रोता हुआ ही विदा होता है। क्या इसी को बुद्धिमत्ता कहें—जिस पर मनुष्य इतराता और इठलाता फिरता है ?

बाहर की बहुत बातें जानकर हम ज्ञानवान कहलायें यह ठीक है पर यह भी कम आवश्यक नहीं कि हम जीवनोद्देश्य जैसे महत्वपूर्ण तथ्य का उपयोग करना सीखें और अपने स्वरूप, कर्त्तव्य के बारे में भी जानें समझें उन पर गंभीरता पूर्वक विचार करें हमें यह सोचना ही चाहिए कि हम कौन हैं ? क्या हैं ? किस लिए हैं और अपने अस्तित्व की सार्थकता किस प्रकार सिद्ध कर सकते हैं ? यह आत्म बोध यदि न हो सका तो मनुष्य शरीर होते हुएभी नर-पशु और नर पिशाच जैसा घृणित जीवन जीना पड़ेगा। लक्ष्य भूलने वाला किधर भी भटक सकता है। आमतौर से हम सब भटक ही जाते हैं, अपने को शरीर मान बैठते हैं और शरीर की सुविधा, प्रसन्नता तृष्णा वासना और अहंकार की पूर्ति जैसे क्षुद्र प्रयोजनों के लिए ही सारी विचारणा और गतिविधियाँ केन्द्रित किये रहते हैं। कामना आकाश पाताल की करते हैं। तृष्णाएँ पहाड़ जितनी समेटे रहते हैं।

लालसाओं और आकाँक्षाओं की ललक में उलझे रहते हैं, मस्तिष्क की सारी चिन्तन क्षमता उसी जंजाल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org
में समाप्त हो जाती है। आत्म कल्याण अथवा जीवन लक्ष्य के बारे में सोचने की फुरसत ही नहीं रहती। इसी जंजाल में सारा समय निकल जाता है। सारी कार्य क्षमता उसी में उलझी रहती है। न सोचने की फुरसत मिलती है न कुछ करने की। व्यस्तता इतनी अधिक रहती है कि आत्म कल्याण की दिशामें न कुछ सोचते बनता है न करते। यह कैसी दुर्भाग्य पूर्ण स्थिति है कि जिस आत्मा को परमात्मा ने अपने प्राणप्रिय पुत्र की तरह असीम अरमानों के साथ अपने उद्यान को सुरभित बनाने के लिए भेजा था वह स्रष्टा के निर्देश और अपने वातावरण के उद्देश्य को सर्वथा उपेक्षित कर निर्बुद्धि प्राणियों की तरह पेट और प्रजनन के लिए ही अपने महान अस्तित्व को समाप्त करदे।

संभव हो तो हममें से प्रत्येक विवेकवान को अपनी इस स्थिति पर विचार करना चाहिए। और संभव हो तो वह साहस जुटाना चाहिए, जिससे जीवन भी निरन्तर पश्चाताप का केन्द्र बिन्दु बनाने से बचाकर स्रष्टा की आकांक्षापूर्ति के लिए नियोजित किया जा सके। यदि ऐसी स्फुरणा अन्तःकरण में जाग उठे—प्रबल हो उठे—तो समझना चाहिए कि अन्तरात्मा में ईश्वरका प्रकाश चमकने लगा। और भगवान का अनुग्रह परिलक्षित होने लगा। जब कभी किसी में कात्मिक मूर्छना जागती है तो भीतर से ऐसी हूक, टीस, व्याकुलता और तडपन उठती है कि एक क्षण भी बर्बाद किये बिना हमें ईश्वरीय प्रयोजन के लिए समर्पित जीवन जीना चाहिए। निर्वाह के स्वल्प साधनों से काम चलाना चाहिए और अपनी सारी क्षमताऐं एवं विभूतियाँ जीवन लक्ष्य की पूर्ति में नियोजित कर देनी चाहिए। इस प्रकार के ज्ञान का उदय ही आत्म बोध, आत्म साक्षात्कार अथवा ईश्वर दर्शन कहा जाता है।

हममें से अधिकांश लोग अति भ्रमपूर्ण विडम्बनाओं में उलझे पड़े हैं। ईश्वर के लिए जप, स्तवन पूजन अर्चन कथा कीर्तन जैसे कर्मकाण्डों की लकीर पीटकर झूठा आत्म संतोष कर बैठते हैं कि ईश्वरकी प्रसन्नता अथवा जीवनोद्देश्य की प्राप्ति के लिए उतना खेल-मेल कर लेना पर्याप्त है। हमें विवेक की आँखें खोलकर यह देखना चाहिये कि प्रशंसा करने, गिड़गिड़ाने, नाक रगड़ने या रिश्वत देने से हम किसी बुद्धिमान संसारी का भी प्यार, अनुग्रह प्राप्त नहीं कर सकते तो ईश्वर को इस प्रकार के बहकाने से कैसे संतुष्ट किया जा सकेगा? पूजा उपासना का मतलब ईश्वर को-ईश्वरीय अयोजन एवं निर्देश को स्मृति पटल पर मजबूती से जमा लेना तथा अपने में अधिकाधिक निर्मलता विवेकशीलता उत्पन्न करना भर है। यह अपना नित्य कर्म है जिससे आत्म शोधन और आत्म जागरण का प्रायोजन भर पूरा होता है। ईश्वर इतने भरसे संतुष्ट नहीं हो सकता। उसकी प्रसन्नता के दो ही केन्द्रबिन्दु हैं (१) अपनी विचारणा मनोभूमि, गुण, कर्म, स्वभाव की शृंखला एवं गतिविधियों में अधिकाधिक पवित्रता, उदारता, उत्कृष्टता एवं आदर्शवादिता का समावेश (२) लोक मंगल के लिए समर्पित किए गये बढ़चढ़ कर अनुदान। अपनी स्थिति के अनुरूप हर कोई विश्व मानव की—जनता जनार्दन की—भावनात्मक स्थिति को ऊंचा उठाने में कुछ न कुछ योगदान दे ही सकता है। इस प्रयोजन के लिए समय, श्रम, बुद्धि, धन आदि का जितना अनुदान दिया गया हो समझना चाहिए कि उतने ही अंशों में हमने भगवान की इच्छा पूर्ति के लिए साहस किया और उतनी ही मात्रा में हमें ईश्वरीय प्यार अनुग्रह और आशीर्वाद पाने का हक मिल गया। भगवान का प्रकाश अन्तः करण में प्रवेश करने देने के लिए हमें अपनी स्वार्थपरता, संकीर्णता लोभ वृत्ति की खिड़कियाँ खोलनी पड़ती हैं सज्जनता को जीवन क्रम में समाविष्ट किये बिना—अपनी रीति नीति में मानवता के उच्च दृष्टिकोण को समाविष्ट किये बिना—किसी जीवन की सार्थकता नहीं हो सकती और ईश्वर की दी हुई सम्पदाओं में से न्यूनतम भाग निर्वाह के लिए रखकर शेष को लोकमंगल के रूप में प्रभु को लौटाये बिना किसी को जीवन लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो सकती। हमें ऐसा आत्म बोध जगाना चाहिए जो आत्म शान्ति और ईश्वर प्राप्ति के उपरोक्त मार्ग पर धकेल सकने में समर्थ हो सके।

———

'जीवन श्रेष्ठ व सार्थक बने' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वर्ग और मुक्ति का आनन्द इसी जीवन में संभव

क्र० ४

स्वर्ग और मुक्ति अध्यात्म-जगत के दो बड़े पुण्य-फल माने जाते हैं। इन्हें प्राप्त करने के लिए लोग बहुत से धर्म-कर्म करते रहते हैं। पर यह दोनों क्या हैं, उनका स्वरूप क्या है, इस विषय में लोगों की कल्पनायें तथा मान्यतायें सही नहीं हैं। कल्पना की जाती है कि स्वर्ग पृथ्वी जैसा लोक है। वहाँ खाने, सोने, मनोरंजन, आराम तथा विषय भोग की प्रचुर सुविधायें रहती हैं। वहाँ पहुँचने पर मनुष्य उन सुविधाओं का लाभ उठाता हुआ, आराम और आनन्द के दिन काटता है। इसी प्रकार मुक्ति के बारे में सोचा जाता है कि भगवान के लोक में पहुंच कर जीव झंझटों से छुटकारा पा जाता है। उन्हीं के जैसा बन कर रहता है और उन्हीं में लीन हो जाता है। इसी को सालोक्य, सामीप्य और सायुज्य मुक्ति कहते हैं।

उपरोक्त मान्यतायें सही नहीं है। क्योंकि ग्रह-नक्षत्रों में अभी तक किसी ऐसे पिण्ड का पता नहीं चला जिसमें मनुष्य स्तर के जीवधारी प्राणियों के निवास की बात सोची जा सके। फिर हर ग्रह नक्षत्र के जीवों की स्थिति सुविधा, आवश्यकता, प्रकृति तथा बनावट अपने ही ग्रह में रह सकने योग्य बनी होती है। ऐसी दशा में स्वर्ग लोककी बात कुछ ठीक से गले उतरती नहीं। फिर जिन-सुविधाओं का वर्णन किया जाता है उनका उपयोग इस स्थूल शरीर से ही किया जाता है मरने के बाद सूक्ष्म शरीर रह जाता है, जिससे भावनात्मक अनुभूतियाँ तो हो सकती हैं, पर इन्द्रियाँ न होने से इन्द्रिय-सुख कैसे मिलेंगे ? वहाँ पर जीव खाने-पीने जैसे सुविधा-साधनों का लाभ कैसे उठा सकेगा ? इसी प्रकार यदि सब झंझटों से छुटकारा पाना—सब लाभों से वंचित हो जाना ही मुक्ति हो तो सामाजिक प्रकृति के समूह में रहने वाले मनुष्य के लिये वह और भी अधिक कष्टकारक होगी। अकेली जेलकोठरी में कुछ दिन रहने वाले कैदी शरीरिक दृष्टि से ढीले और मानसिक दृष्टि से उद्विग्न होकर निकलते हैं। अकेले के लिए समय काटना मुश्किल पड़ता है। मुक्त होने पर यदि किसी लोक में अकेला ही रहना पड़े तो उस सुनसान में क्या सुख मिलेगा ? भगवान तो बहुत कार्यव्यस्त हैं, उसके पास बैठे भी रहे तो क्या लाभ ? यदि उनमें घुल जायँ तो भगवान का वजन भले ही राई रत्ती बढ़ जाय, अपना तो अस्तित्व ही समाप्त हुआ। ऐसा आत्म-नाश ही यदि मुक्ति कहलाता है तो उसे कोई क्यों चाहेगा ? इससे किसी को क्या मिलेगा ?

स्वर्ग मुक्ति की उपरोक्त मान्यतायें पौराणिक काल की अलंकारिक मान्यतायें है। वस्तुतः स्वर्ग आत्म-संतोष को कहते हैं, क्योंकि संसार में वही सबसे अधिक शान्तिदायक स्थिति है। जीवन का अस्तित्व सूक्ष्म है, इस लिए पदार्थों का सुख तो शरीर भर को मिलेगा, सूक्ष्म सत्ता को तो भावनात्मक तृप्ति ही प्रसन्न कर सकती है। धन-दौलत, ऐश आराम या इन्द्रिय-सुख पाकर शरीर भर को कुछ सुविधा हो सकती है और वह भी थोड़ी देर के लिये। फिर स्थाई आनन्द तो भावनाओं का ही होता है। और उस स्तर की अनुभूति तभी मिल सकती है जब व्यक्ति का दृष्टि कोण परिष्कृत और क्रिया कलाप आदर्शवादी मान्यताओं के अनुरूप बन सके। आत्मा का संतोष इसी स्थिति में होता है, क्यों कि वह ईश्वर का अविनाशी अंश होने के कारण सदुद्देश्य के लिये ही धरती पर आई है, और मछली जिस प्रकार पानी में ही चैन की साँस ले सकती है, उसी प्रकार आत्मा को चैन ईश्वरीय स्तर की उच्च भूमिका में अवस्थित होने पर ही मिल सकता है। यह भूमिका उच्च विचारणा और श्रेष्ठ आचार-पद्धति पर निर्भर है। जिनकी विचारणा और क्रिया कलाप भौतिक स्वार्थ परता पर अवलम्बित हैं, उन्हें सम्पदा, सुविधा या ख्याति कितनी भी क्यों न मिल जाय, कभी आन्तरिक शान्ति न मिलेगी। आत्म-शान्ति का सन्तोष केवल उनके हिस्से में आया है, जिनने अपने विचार क्षेत्र को उच्च उत्कृष्ट मान्यताओं के अनुरूप सोचने और चाहने के लिये अभ्यस्त कर लिया और उन पर इतना प्रगाढ़ विश्वास जमा लिया है कि शरीर उस धारा-धारणा के विपरीत एक कदम भी न उठावे। जिसे अपने विचारों और कार्यों की उत्कृष्टता का सन्तोष जितनी अधिक मात्रा में मिल रहा हो, समझना चाहिये कि वह उतने ही ऊँचे स्वर्ग लोक में निवास कर रहा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नरक भी कोई लोक नहीं है । नरक के जो वर्णन किये जाते हैं, वे शरीरधारी के लिये संभव हैं । मरने के बाद जब जीव हवा जैसी सूक्ष्म वस्तु रह गया तो उसे कोल्हू में पेला जाना, कोड़ों से मारा जाना किस प्रकार संभव होगा ? वस्तुतः नरक भोगने के लिये हमें किसी लोक विशेष में जाने या दूसरों द्वारा उत्पीड़न सहने की आवश्यकता नहीं है । यह प्रयोजन तो अपनी दुर्बुद्धि और दुष्प्रवृत्ति हर घड़ी पूरा करती रह सकती है । कुसंस्कारी और दुर्गुणी मनुष्य अपनी ओछी विचार पद्धति की आग में स्वयं ही हर घड़ी जलते रह सकते हैं । चिन्ता, भय, क्रोध, असंतोष, ईर्ष्या, द्वेष, शोषण, प्रतिशोध, उत्पीड़न की प्रवृत्ति बन जाने पर अन्तःकरण हर घड़ी इतना विक्षुब्ध और दुःखी रहता है कि जीवन नीरस ही नहीं भार भी प्रतीत होने लगता है। आत्मताड़ना से पीड़ित व्यक्ति नशेबाजी की शरण में जाकर गम-गलत करने, वैरागी बन दौड़ने या आत्म-हत्या जैसे कुकृत्य करते देखे गये हैं। यह नरक की ही अनुभूतियाँ हैं।दुष्ट व्यक्ति जिनके ऊपर सब ओर से घृणा बरसती है एक प्रकार से नरक के कीड़े ही गिने जा सकते हैं। दुष्कर्म करते समय आत्मा काँपती है और आत्म-धिक्कार की ग्लानि निरन्तर पश्चाताप की आगमें जलाती है। इसे नरक ही कहा जायगा। कुकर्म तो थोड़ी देर में पूरा कर लिया जाता है, पर उसे करके जो पतन हुआ तथा भविष्य में ईश्वर दण्ड की जो संभावना बनी, उसे स्मरण करके आदमी भीतर ही भीतर बुरी तरह जलता रहता है । वस्तुतः यही नरक है जो किसी भी कुमार्ग गामी को खाता, खोखला करता और पश्चाताप में झुलसाता रहता है ।

शारीरिक दुःख इस संसार में भी कम नहीं हैं । उनके लिए किसी और लोक में जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती । कष्टसाध्य रोगियों को व्यथा से निरन्तर चिल्लाते हुए कहीं भी देखा जा सकता है । अंधे, कोढ़ी, अपंग, असहाय लोगों को क्या कुछ कम कष्ट सहने पड़ते हैं ? प्रियजनों की मृत्यु, असफलता, अपमान, धनहानि, आक्रमण, उत्पीड़न जैसे प्रसंगों पर भी क्या कुछ कम दुःख होता है ? शारीरिक और मानसिक कष्ट इस प्रकार में भी कम नहीं हैं । कर्मफल के अनुरूप यदि कुछ त्रास मिलते हों तो वे यहाँ भी भरे पड़े हैं । इसलिये नरक की कल्पना को अन्य लोक से जोड़ना उचित नहीं । दुष्कर्म करने पर उसके फलस्वरूप मिलने वाले सामाजिक और ईश्वरीय दण्ड को मिला कर पूरा नारकीय अनुभव किसी भी कुपथगामी को यहीं इसी लोक में मिल सकता है ।

मुक्ति का अर्थ होगा बन्धनों से छूटना । विचार करना है कि कौन से बन्धन हैं जिनसे हम बँधे हैं और शरीर को रस्सों से तो किसी ने जकड़ नहीं रखा है । निवास भी कैदखाने में नहीं करते । कहीं भी स्वेच्छा से आ-जा सकते हैं । यदि संसार को भव-बन्धन कहा जाय तो यह भी उचित न होगा क्योंकि यह विश्व भगवान का विराट रूप है । जहाँ कण-कण में भगवान व्याप्त हों, वहाँ बंधन कैसा ? जिस भाग पर जन्म लेने के लिए देवता तरसते हों, जहाँ अवतारों, ऋषियों और धर्मात्माओं का निरन्तर प्रवाह बहता हो, जहाँ गंगा-यमुना जैसी नदियां, हिमालय जैसे पर्वत और प्राकृतिक सुषमा का स्वर्ग बिखरा पड़ा हो, वहाँ जन्म लेना और जीवित रहना एक सौभाग्य ही है । उसे भव-बन्धन कैसे कहा जाय ? जहाँ प्रेमी परिजनों के अनुदान निरन्तर बरसते हुए हमें कृतज्ञता में डुबा देते हैं वहां बन्धन कैसा, जिससे छुटकारा पाने की मुक्ति की कल्पना में विचरण किया जाय ? जन्म-मरण तो एक-सी परिस्थिति की नीरसता से नवीनता के उल्लास में परिणित होने का मनोरंजन मात्र है । उसमें अवांछनीय, अनुचित, अशोभनीय या आनन्द रहित क्या है, जिससे छूट भागने की बात सोची जाय ?

मुक्ति वस्तुतः अपने दोष-दुर्गुणों से, स्वार्थ संकीर्णता से, क्रोध-अहंकार से लोभ-मोह से, पाप-अविवेक से प्राप्त करनी चाहिये । यही वह शत्रु हैं जो पग-पग पर दुःख देते हैं । प्रगति के पथ पर रोड़े अटकाते हैं, घृणित और पतित बनाते हैं और सुरदुर्लभ मानव-जीवन का उद्देश्य ही नष्ट करके रख देते हैं । आत्म ग्लानि और आत्म-प्रताड़ना की आग में जलाने वाले अपने कषाय और कल्मष ही हैं, जो सन्मार्ग पर चलने से रोकने में जंजीरों का काम करते हैं । समय, साधन, सुविधा और सामर्थ्य होते हुए भी हम परमार्थ प्रयोजनों के लिए कुछ सोच और कर नहीं पाते, यह अन्तरंग की दुर्बलता ही सबसे बड़ा बन्धन है । उसे तोड़ कर फेंका जा सकता हो और उच्च विचारणा के अनुरूप आदर्शवादी, परमार्थ-परायण जीवन जिया जा सकता हो, तो समझना चाहिये कि मुक्ति मिल गई । स्वर्ग और मुक्ति अपने दृष्टिकोण को परिष्कृत करके हम इसी जीवन में प्राप्त कर सकते हैं, इसके लिये मृत्यु-काल तक की प्रतीक्षा करने की क्या आवश्यकता है ?

'मनुष्य में देवत्व' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर्म-फल आज नहीं तो कल भोगना ही पड़ेगा।

क्र० ५

यदि कर्म का फल तुरन्त नहीं मिलता तो इससे यह नहीं समझ लेना चाहिये कि उसके भले-बुरे परिणाम से हम सदा के लिये बच गये। कर्म-फल एक ऐसा अमिट तथ्य है जो आज नहीं तो कल भुगतना ही पड़ेगा। कभी-कभी इन परिणामों में देर इस लिये होती है कि ईश्वर मानवीय बुद्धि की परीक्षा करना चाहता है कि व्यक्ति अपने कर्तव्य धर्म समझ सकने और निष्ठापूर्वक पालन करने लायक विवेक बुद्धि संचित कर सका या नहीं। जो दंड भय से डरे बिना दुष्कर्मों से बचना मनुष्यता का गौरव समझता है और सदा सत्कर्मों तक ही सीमित रहता है, समझना चाहिये कि उसने सज्जनता की परीक्षा पास करली और पशुता से देवत्व की ओर बढ़ने का शुभारम्भ कर दिया।

दंडमय से तो विवेक रहित पशु को भी अवांछनीय मार्ग पर चलने से रोका जा सकता है। मानवीय अन्तःकरण की विकसित चेतना तभी अनुभव की जा सकेगी जब वह कुमार्ग पर चलने से रोके और सन्मार्ग के लिये प्रेरणा प्रदान करे। लाठी के बल पर भेड़ों को इस या उस रास्ते पर चलाने में गडरिया सफल रहता है। सभी जानवर इसी प्रकार दंड भय दिखाकर अमुक प्रकार से जोते जाते हैं। यदि हर काम का तुरन्त दंड मिलता और ईश्वर बल-पूर्वक अमुक मार्ग पर चलने के लिये विवश करता तो फिर मनुष्य भी पशुओं की श्रेणी में आता, उसकी स्वतंत्र आत्म-चेतना विकसित हुई या नहीं इसका पता ही नहीं चलता।

भगवान ने मनुष्य को भले या बुरे कर्म करने की स्वतन्त्रता इसी लिये प्रदान की है कि वह अपने विवेक को विकसित करके भले बुरे का अन्तर करना सीखे और दुष्परिणामों के शोक संतापों से बचने एवं सत्परिणामों का आनन्द लेने के लिए स्वतः अपना पथ निर्माण कर सकने में समर्थ हो। उन्नति को अपनाने वाला विवेक और कर्तव्य परायणता यह दो ही कसौटी मनुष्यता का आत्मिक स्तर विकसित होने की हैं। इस आत्म विकास पर ही जीवनोद्देश्य की पूर्ति और नर जन्म की सफलता अवलम्बित है। ईश्वर चाहता है कि व्यक्ति अपनी स्वतंत्र चेतना का विकास करे और विकास के क्रम से आगे बढ़ता हुआ पूर्णता का लक्ष्य प्राप्त करने की सफलता प्राप्त करे।

यदि ईश्वर को यह प्रतीत होता कि बुद्धिमान बनाया गया मनुष्य पशुओं जितना मूर्ख ही बना रहेगा तो शायद उसने दंड के बल पर चलाने की व्यवस्था उसके लिये भी सोची होती। तब झूठ बोलते ही जीव में छाले पड़ने, चोरी करते ही साथ में फोड़ा उठ पड़ने, बेईमानी करते ही बुखार आजाने, कुदृष्टि डालते ही आँख दुखने लगने, कुविचार आते ही सिर दर्द होने जैसे दंड मिलने की तुर्त-फुर्त व्यवस्था बनी होती तो किसी के लिये भी दुष्कर्म करना सम्भव ही न होता। लोग जब उसमें लाभ की अपेक्षा प्रत्यक्ष हानि देखते तो दुष्कर्म करने की हिम्मत न करते। ऐसी स्थिति में मनुष्य की स्वतंत्र चेतना, विवेक बुद्धि और आन्तरिक महानता के विकसित होने का अवसर ही नहीं आता और आत्म विकास के बिना पूर्णता के लक्ष्य को प्राप्त कर सकने की दिशा में प्रगति ही न होती अतएव परमेश्वर के लिये यह उचित ही था कि मनुष्य को अपना सबसे बड़ा सबसे बुद्धिमान और सबसे जिम्मेदार बेटा समझ कर उसे कर्म करने की स्वतंत्रता प्रदान करे और यह देखे कि वह मनुष्यता का उत्तरदायित्व संभाल सकने में समर्थ है या नहीं? परीक्षा के बिना वास्तविकता का पता भी कैसे चलता और उसे अपनी इस सर्वश्रेष्ठ रचना मनुष्य में कितने श्रम की सार्थकता हुई यह कैसे अनुभव होता।

यों समाज में भी कर्मफल मिलने की व्यवस्था है और सरकार द्वारा भी उसके लिये साधन जुटाये गये हैं। पुलिस, जेल, कचहरी, कानून, नियंत्रण निरिक्षण द्वारा ऐसे प्रबन्ध किये गये हैं कि अनाचार करने वालों को रोका और दंडित किया जा सके यद्यपि इस व्यवस्था में कई खामियाँ हैं और चतुर अपराधी तो सरकार की पकड़ में ही नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आते । कुछ आते हैं तो कानूनी बारीकियों की आड़ में तथा सम्बन्धित अफसरों को प्रभावित कर दण्ड से बच निकलने का रास्ता खोज लेते हैं तो भी आखिर एक व्यवस्था तो है ही और यदि कठोर शासन हो तो अधिकांश अपराधों, दुष्कर्मो को सहज ही रोका भी जा सकता है और अपराधियों को इतना दण्डित किया जा सकता है कि उसे तो क्या दूसरे देखने वालोंको भी वैसा साहस न हो। जो हो आखिर एक सरकारी व्यवस्था तो है ही, जो हजारों लाखों कुमार्ग गामियों को तिरस्कृत करने और दण्डित करने में लगी रहती है और किसी हद तक रोक थाम भी करती है ।

समाज में कुकर्मियों का तिरस्कार और अविश्वास होता है, लोग उनका सहयोग समर्थन नहीं करते और सम्पर्क बनाने से बचते हैं । मनुष्य की उन्नति पारस्परिक सहयोग पर निर्भर है । जिसे दूसरों का जितना गहरा प्यार और सच्चा सहयोग मिला वह उतना ही उन्नतिशील बन सका है । यह लाभ कुमार्गगामियों को नहीं मिल सकता। उनसे सभी डरते हैं और सोचते हैं कि सम्पर्क बढ़ाने पर वह हमारे ही ऊपर घात चला सकता है । झंझट मोल न लेने की कायरता से डरकर कोई प्रत्यक्ष विरोध कर संघर्ष न करे, चुप भले ही बैठा रहे पर अनैतिक व्यक्तिको सच्चे मन से प्यार कोई नहीं कर सकता । व्यभिचारी भी अपने घर में दूसरे व्यभिचारी का और चोर भी अपने घर में दूसरे चोर का प्रवेश नहीं होने देता । क्योंकि वह उसे अविश्वस्त मानता है भीतर ही भीतर घृणा करता है और चाहता है कि वह सांप बिच्छू की तरह अलग ही बना रहे । दुष्कर्म छिपते नहीं, कुकर्म और दुष्प्रवृत्ति आखिर खुलकर ही रहती है । यह एक तथ्य है कि अनाचारी केवल घृणा के पात्र ही हो सकते हैं, उन्हें न तो सम्मान मिल सकता है और न सहयोग । इसके बिना न तो विकास सम्भव है और न आनन्द की गुंजाइश है । कुकर्मी थोड़े से साधन भर इकट्ठे कर सकते हैं और उनसे यत्किंचित शरीर एवं इन्द्रियों का क्षणिक सुख भोग सकते हैं पर सामाजिक प्राणी होने के नाते जिस श्रद्धा, सम्मान, प्यार और सहयोग की उसे भारी भूख और आवश्यकता रहती है उसे सदा अप्राप्त ही रहना पड़ेगा । सामाजिक असहयोग और तिरस्कार एक ऐसा दंड है जो अप्रत्यक्ष होते हुये भी मनुष्य को घर में रहने वाले भूत-पिशाच की तरह उद्विग्न और संत्रक्त रखता है । यह स्थिति जेल का दंड भोगने वाले कैदी से कम कष्टकारक नहीं है ।

कुमार्गगामी आत्म प्रताड़ना के दंड से बच नहीं सकता । यदि आत्मा को सर्वथा कुचल मसल न दिया हो, उसमें थोड़ी सी चेतना बाकी रहने दी गई तो कुकर्म के लिये आत्मग्लानि और धिक्कार की आवाज भीतर से निरन्तर उठती रहेगी । दूसरों से पाप को छिपाया भी जा सकता है पर आत्मा से वस्तुस्थिति कहाँ छिपती है, वह अनीति अपनाकर बरती गई नीचता के लिये निरन्तर धिक्कारती रहेगी और पश्चाताप की आग में बुरी तरह जलाती रहेगी । पापी मनुष्य एक क्षण के लिये भी शान्ति अनुभव नहीं कर सकता । भीतर की प्रताड़ना बाहरी दण्डों से अधिक हानिकारक होती है । उसके कारण व्यक्ति निरन्तर दोष दुर्बल, उद्विग्न, एकाकी, नीरस और विक्षिप्त बनता चला जाता है। व्यक्तित्व को हेय, पतित और अस्तव्यस्त बनाने में आत्मग्लानि ही सबसे बडा अवरोध सिद्ध होती है ।

फिर ईश्वरीय विधान भी निःस्वत्व नहीं हुआ है । आज नहीं तो कल उसकी व्यवस्था के अनुसार कर्मफल मिलकर ही रहेगा । देर हो सकती है अन्धेर नहीं । सरकार और समाज से पाप को छिपा लेने पर भी आत्मा और परमात्मा से उसे छिपाया नहीं जा सकता । इस जन्म या अगले जन्म में हर बुरे भले कर्म का प्रतिफल निश्चित रूप से भोगना पड़ता है, आज का लिया कर्ज कल चुकाना पड़ेगा, इससे यह नहीं सोचा जा सकता कि कर्ज के नाम पर लिया हुआ पैसा मुफ्त में ही मिल गया । पाप का दंड आज नहीं भुगतना पड़ेगा तो किसी को यह नहीं समझ बैठना चाहिये कि उससे सदा के लिये छुट्टी हो गई । ईश्वरीय कठोर व्यवस्था उचित न्याय और उचित कर्मफल के आधार पर ही बनी हुई है सो तुरन्त न सही कुछ देर बाद अपने कर्मों का फल भोगने के लिये हर किसी को तैयार रहना चाहिये ।

मनुष्यता की कसौटी सन्मार्गगामिता है । विवेक की परख कुमार्ग से बचने में है । मानवीय गरिमा का तकाजा है कि हम न्याय औचित्य और कर्त्तव्य को ही अपनायें । न तो अशुभ सोचें और अनुचित कदम उठायें इसी में बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता सन्निहित है ।

*** * 'हम सच्चे अर्थों में आस्तिक बनें' पुस्तिका से ।**

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दुष्कर्मों के दंड से प्रायश्चित ही छुड़ा सकेगा ।

क्र० ६

जान बूझ कर या अनजाने में कुबुद्धि-वश मनुष्य कई प्रकार के अनुचित कार्य करता रहता है । ये बुरे कर्म इसकी आत्मिक प्रगति, व्यक्तित्व के विकास तथा भौतिक सफलताओं में भारी अवरोध सिद्ध होते हैं । आत्मा पर कषाय कल्मषों का जितना आवरण चढ़ता जाता है । उतना ही अन्तःकरण भारी और कलुषित होता चला जाता है । इस रुग्ण स्थिति में कोई क्या आत्म संतोष अनुभव करेगा और किसे उत्कृष्टता की ओर बढ़ने के लिए साहस होगा । आन्तरिक दुर्बलता सबसे बड़ी दुर्बलता है वह मनुष्य को ऐसा अपंग और निस्त्वत्व बनाकर छोड़ती है कि कोई महत्व पूर्ण काम कर सकना उसके लिए संभव ही नहीं रहता ।

शारीरिक और मानसिक अस्वस्थता के ये अनेक कारण हैं । बिमारी होने की अनेक बजह हो सकती हैं और मानसिक उद्विग्नता के भी अनेक आधार हो सकते हैं पर सब से बड़ा कारण है वह आत्म प्रताड़ना जो अनैतिक एवं अवांछनीय कार्य करने के कारण निरंतर अन्तरंग में उठती रहती है । जिसने अनैतिक एवं असामाजिक कार्य किये हैं—जीवन की शुद्ध चादर पर तरह-तरह के दाग-धब्बे लगाये हैं उसके लिए चैन से बैठ सकना कठिन है । आत्म धिक्कार कुछ कह सुनकर ही चुप नहीं हो जाती वरन् अनेक रास्तों से फूटकर दबी हुई आग की तरह निकलती है । खाया हुआ पारा शरीर से फुट-फुट कर निकलता है वह किसी को भी पचता नहीं । इसी प्रकार पाप कर्म भी आत्म-धिक्कार या आत्मग्लानि के रूप में भीतर ही भीतर कचोटते ही हैं इसके अतिरिक्त वे अनेक कष्टकारक प्रताड़नाओं के रूप में फूटकर बाहर भी आते हैं ।

शारीरिक रोगों के बारे में नवीनतम शोध यह है कि कष्ट साध्य, असाध्य और किसी भी चिकित्सा से काबू में न आने वाले शारीरिक रोग अनाचार अपनाने के कारण उत्पन्न होते है । आहार विहार के व्यतिक्रम से जो बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं वे साधारण उपचार से स्वल्पकाल में ही अच्छी हो जाती हैं किन्तु मस्तिष्क के गहन अन्तराल में छिपी हुई आत्मधिक्कार की प्रताड़ना नाड़ियों, कोषों, स्वस्थ जीवन कणों में इतनी गहराई तक प्रवेश कर जाती हैं कि दवाओं का उनतक प्रभाव नहीं पहुँचता और वह उद्वेग ऐसे शरीर कष्टों के रूप में बिखरता रहता है । शास्त्रों में कष्ट साध्य रोग संचित पापों का परिणाम ही माने हैं, यह तथ्य आज का शरीर शास्त्र और मनोविज्ञान शास्त्र अक्षरशः सिद्ध कर रहे हैं ।

दुष्कर्मों के और कुविचारों के जो कुसंस्कार मन पर जमते हैं वे एक प्रकार से विषैली पर्तों के रूप में चेतन मस्तिष्क और अचेतन चित्त पर जमते रहते हैं । ये मन की चंचलता, उद्विग्नता, अस्थिरता, आवेग विक्षोभ के रूप में फूटते हैं और व्यक्ति को अर्द्ध-पागल जैसा बना देते हैं वह किसी काम को एक चित्त होकर कर नहीं पाता और हर घड़ी उधेड़ बुन में लगा रहता है । फल स्वरूप पग-पग पर असफलता मिलती और ठोकर लगती है । असंतुलित व्यवहार से संबंधित व्यक्ति रुष्ट और असंतुष्ट होकर असहयोगी एवं विरोधी बन जाते हैं । स्वजनों से कलह करने का अभ्यस्त ऐसा व्यक्ति प्रेत पिशाच की तरह हर घड़ी विक्षुब्ध बना रहता है । मस्तिष्क न कुछ ठीक तरह सोच पाता है न कोई सही रास्ता मिलता है । भटकता और भ्रमता हुआ मन जीवन को ऐसी कटीली झाड़ियों में उलझा देता है, जहाँ केवल शोक संताप ही दृष्टिगोचर होता है । शरीर से रुग्ण और मन से विक्षुब्ध व्यक्ति जीवित रहते नरक भोगता है । भीतर ही भीतर उसे इतने घाव रहते हैं कि जिनके कारण सिर्फ कराहते और तड़फते हुए ही उसे देखा जा सकता है । उन पाप कर्मों से निवृत्ति कैसे मिले ? जिससे चित्त हलका हो और उन अन्तर्व्यथाओं से पीछा छूटे जो यमदूतों की तरह व्यक्ति को दुःखी और असफल बनाने के लिए पीछे लगी हुई हों । इस प्रश्न का भारतीय संस्कृति में सनातन उत्तर एक ही रहा है—प्रायश्चित । अपने यहाँ हर पाप के प्रायश्चित हैं उन्हें करके ही आवाँछनीय आचरणों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की मलीनता धोई जा सकती है रास्ते में गढ्डा खोदा हो तो उसका प्रायश्चित यही है कि उसे पाटने के लिये उतना ही प्रयत्न किया जाय जितना कि खोदने के लिए किया गया था। किसी को हानि पहुँचाई हो तो उसका प्रायश्चित यही है कि उस हानि की भरपाई करदी जाय। अपने दोष को स्वीकार करना उसके लिए दुःख मानना, लज्जित होना और आगे के लिए इस तरह की भूलों की पुनरावृत्ति न करना यह मनोभूमि तो प्रायश्चितकर्ता की होनी ही चाहिए। अन्यथा फिर उसका कुछ प्रयोजन ही नहीं रह जाता। एक ओर प्रायश्चित की बात सोची जाय और दूसरी ओर उसी दुष्कर्म को दुहराते रहा जाय तो यह विड़म्बना एक प्रकार की मखौल ही मानी जायगी।

ईश्वर से क्षमा मांगना उचित है। इससे आत्मशोधन को बल मिलता है। तीर्थ यात्रा देव दर्शन व्रत उपवास करने से चित्त हलका होता है और उस भूल को आगे न दुहराने की प्रेरणा मिलती है। पर इतने से ही पूर्व कृत्यों का फल भोगने या खाई पाटने जैसी तो कोई बात बनती नहीं। ऋण से उऋण वही हो सकता है जो लिए हुए धन को वापिस करदे। समाज को हमने दुष्कर्मों से जितनी क्षति पहुँचाई है उसकी पूर्ति तभी होगी जब हम उतने ही बजन के सत्कर्म करके समाज को लाभ पहुँचायें। इस प्रकार हानि और लाभ का बैलेन्स जब बराबर हो जायगा तभी यह कहा जायगा कि पाप का प्रायश्चित हो गया। और आत्मग्लानि एवं आत्म प्रताड़ना से छुटकारा पाने की स्थिति बन गई।

यह ठीक है कि जिस व्यक्ति के साथ अनाचार वरता अब उस घटना को बिना हुई नहीं बनाया जा सकता। संभव है व्यक्ति अन्यत्र चला गया हो। ऐसी दशा में उसी आहत व्यक्ति की उसी रूप में क्षति पूर्ति करना संभव नहीं। किन्तु दूसरा मार्ग खुला है। हर व्यक्ति समाज का अंग है। व्यक्ति को पहुँचाई गई क्षति वस्तुतः प्रकारान्तर से समाज की ही क्षति है। इसे दूसरी प्रकार से समाज सेवा के लिए श्रम, समय एवं धन आदि देकर पूरा कर सकते हैं। चोरी बेईमानी रिश्वत कमतोल, मिलावट, धोकेबाजी आदि से जो धन कमाया हो उसे लोक मंगल के लिए विद्यादान, पिछड़ापन दूर करने, असहायों की सहायता आदि के आयोजनों में खर्च करके प्रायश्चित की विधि पूरी की जा सकती है। पिता के मरने पर उसकी आत्म शान्ति के लिए श्राद्ध के नाम पर किये गये पुण्य परमार्थ दूसरों को ही लाभ देते हैं। स्वर्गीय पिता जी तो उसे लेने नहीं आते। फिर भी श्राद्ध का प्रयोजन पूरा हो जाता है क्यों कि स्वर्गीय आत्मा भी समाज की एक अंग थी और उसी समाज के कल्याण के लिए जो किया गया उस श्राद्ध से पिता की सेवा सहायता करने जैसा ही पुण्य मिल गया। यही नीति नियम प्रायश्चित विधान पर लागू होता है।

यदि हमने बेईमानी से धन कमाया हो तो सारा अथवा जितना अधिक संभव हो लोक मंगल के लिए लौटादें। यदि व्यभिचार करके किसी का शील डिगाया हो तो समाज में शील संवर्धन और सदाचार संस्थापन के लिए समय या दूसरे प्रकार का अनुदान देकर उस सामाजिक क्षति की पूर्ति करें। उत्पीड़न का प्रायश्चित पीड़तों की सुख सुविधा बढ़ाने में होना चाहिए। पूर्वजों तथा दूसरों से जो सेवा सहायता एवं स्नेह का लाभ उठाया है उससे उऋण होने के लिए पिछड़ी मनोभूमि तथा परिस्थिति के लोगों को ऊँचा उठाने में योगदान दिया जाना चाहिए। जीवन में सेवा सहायता का समावेश पुण्य परमार्थ संचित करने की दृष्टि से तो आवश्यक है और पिछले पापों का प्रायश्चित करके आत्म प्रताड़ना के फलस्वरूप मिल रहे कष्टों की निवृति की दृष्टि से भी।

सस्ते मूल्य के कर्मकांड करके पापों के फल से छुटकारा पा सकना सर्वथा असंभव है। स्वाध्याय, सत्संग, कथा, कीर्तन, तीर्थ व्रत आदि से चित्त में शुद्धता की वृद्धि होना और भविष्य में पाप वृत्तियों पर अंकुश लगाने की बात समझ में आती है। धर्म कृत्यों से पाप नाश के जो महात्म्य शास्त्रों में बताये गये हैं उनका तात्पर्य इतना ही है कि मनोभूमि का शोधन होने में भविष्य में बन सकने वाले पापों की संभावना का नाश हो जाय। पिछले पाप तो प्रायश्चित किये हुये पापों की तुलना में वैसे ही भारी पुण्य कर्मों के द्वारा संभव है। इश्वरीय कठोर न्याय व्यवस्था में ऐसा ही विधान है कि पाप परिणामों की आग में जल मरने से जिन्हें बचना हो वे समाज के उत्कृष्टता बढ़ाने की सेवा साधना में संलग्न हों और लदे हुए भार से छुटकारा प्राप्त कर शान्ति एवं पवित्रता की स्थिति उपलब्ध करलें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हम कामना ग्रस्त न हों–प्रगति शील बनें

क्र० ७

प्रगति की आकांक्षा और लालसाओं की पूर्ति का सामान्य स्वरूप एक-सा दीखता है, पर बारीकी से देखने पर इनमें जमीन आसमान का अन्तर मिलेगा। प्रगति उस आवश्यकता का नाम है जो व्यक्तित्व को उभारती प्रतिभाको निखारती तथा योग्यताओं को बढ़ाती है। इसका अर्थ है उन क्षमताओं का विकास जो शरीर मन, कर्तृत्व एवं स्वभाव को स्वस्थ, स्वच्छ एवं सुविकसित बना सके। यही वास्तविक प्रगति है। इसी के आधार पर मनुष्य जो भी सांसारिक सम्पदायें चाहे प्राप्त कर सकता है। धन उपार्जन करने की क्षमता, हाथ में लिए हुए काम में सफलता, कुशाग्र सूझ-बूझ, आकर्षक व्यक्तित्व, पदोन्नति, सम्बन्धित लोगों का स्नेह-सहयोग आदि न जाने कितनी सिद्धियाँ इसी विशेषता के आधार पर मिलती हैं। निखरा हुआ व्यक्तित्व ही साहसिक कदम उठा सकने की हिम्मत और चमत्कारी उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकने में समर्थ होता है। अपनी इसी प्रसुप्त विशेषता को जागृत एवं प्रखर बना सकना प्रगति का मूल तथ्य है। जिसके हाथ यह पारस लग गया उसे दीन, दुर्बल जीवन नहीं जीना पड़ता, वरन् एक से एक बढ़ी-चढ़ी सफलताओं और सम्पदाओं के प्राप्त करने का अवसर निरन्तर मिलता रहता है।

बाहर से जो सम्पदायें या सफलताएँ दीखती हैं वे स्थिर व लाभदायक तभी हो सकती हैं जब उनके पीछे सुविकसित व्यक्तित्व की श्रम-साधना सन्निहित हो। यदि यों ही उत्तराधिकार में, भाग्यवश अनायास या अनैतिक तरीके से कोई सफलता या सम्पदा मिल गई तो वह देर तक टिकेगी नहीं, उसे संभालना और रोकना कठिन हो जायगा। किसी प्रकार वह बनी भी रही तो इतनी समस्यायें और उलझनें उत्पन्न करेगी, जिससे यही सोचना पड़ेगा कि इससे तो निर्धन या असफल रहना अच्छा था। व्यक्तित्व का निखार ही वस्तुतः अनेक तरह की भौतिक और आत्मिक सम्पदायें उत्पन्न करने में समर्थ रहता है। और उसी के आधार पर उनका सदुपयोग बन पड़ता है। उसी स्थिति में उस वैभव का कुछ उपयोग और लाभ भी है। अन्यथा अनुपयुक्त व्यक्तित्व, अनायास प्राप्त सम्पदा से अपना और दूसरों का अहित करते और शोक, सन्ताप फैलाते दीखेंगे। प्रगति शब्द का ठीक अर्थ और स्वरूप समझना हो तो यही कहा जायगा कि परिष्कृत शरीर और मन के आधार पर सुविकसित व्यक्तित्व का निर्माण कर सकने में सफलता प्राप्त कर लेना ही सच्ची प्रगति है।

आकाँक्षायें एक नशेबाजी जैसी मानसिक स्थिति ही समझी जानी चाहिए। वे असीम होती हैं परिस्थिति, योग्यता और साधनों का ध्यान न रखकर अक्सर लोग आकाश-पाताल प्राप्त करने की अनियंत्रित कामनायें मन में सजाये बैठे रहते हैं और उन्हें जल्द जिस-तिस मार्ग से पूरा करने के लिए व्याकुल रहते हैं। यह ललक पूरी तो हो नहीं सकती, व्यक्ति को बुरी तरह उद्विग्न रखती है। कामना की पूर्ति के लिए योजना बद्ध तैयारी करनी होती है और निरन्तर श्रम-साधना धैर्य और संतुलित मन से तब तक चलानी पड़ती है जब तक कि उस उपलब्धि के लिए उपयुक्त साधन और अवसर न मिल जायँ। उनमें देर हो सकती है और अनेक विघ्न आ सकते हैं। कामना ग्रस्त इस सम्बन्ध में अति अधीर होता है और छलांग मारकर जो चाहता है उसे तुर्त-फुर्त प्राप्त करने को उतावला-बावला बना रहता है। ऐसे व्यक्ति असफल तो रहते ही हैं, उतावली में ऐसे कार्य और भी करते हैं, जिन्हें अवांछनीय और मूर्खता-पूर्ण कहना पड़े और जिनका परिणाम अन्ततः विभीषिका जैसी विपत्ति के रूप में सामने आये। इसी स्थिति से ताल मेल न बिठा कर चलने वाली ललक को आकांक्षा या कामना कहते हैं। यह प्रगतिशीलता का नहीं छिछोरपन का चिन्ह है।

प्रगतिशील और कामनाग्रस्त का आरम्भिक उत्साह एक जैसा लगता है, पर वस्तुतः दोनों की दो दिशायें हैं और परिणाम भी एक दूसरे से विपरीत ही होते हैं। वे भौतिक लिप्सायें जो क्षमता बढ़ाने का इन्तजार न करके तुर्त-फुर्त मनोकामना पूर्ण करने के लिए लालायित रहती हैं, आध्यात्मिक भाषा में एषणायें कही जाती हैं। एषणाओं में प्रधान तीन हैं—(१) वित्तेषणा (२) पुत्रेषणा (३) लोकेषणा। उन्हें सरल भाषा में अमीरी, विषय-वासना और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वाहवाही कहा जा सकता है । उचित और न्यायानुकूल मार्ग से उचित मात्रा में इनकी आवश्यकता भी है । पर जब इनको ललक एक नशेबाज की उन्मत्तता जैसी स्थिति पैदा कर देती है और जिस-तिस मार्ग से इनकी असीम उपलब्धि के लिए मनुष्य व्याकुल-पागल हो सकता है । सीधे रास्ते से हर काम उचित समय, उचित श्रम और उचित पात्रत्व द्वारा ही सीमित मात्रा में पूरा होता है । पर अधीरता में इन साधनों को बढ़ाने एवं अपनाने की स्थिति नहीं रहती । उतावली में, अवास्तविक कल्पना लोक में मनुष्य विचरण करने लगता है । बच्चों जैसी उपहासास्पद योजनायें बनाता है और बुरी तरह ठगा जाता है तथा ठोकर खाता है । अनुचित अनैतिक मार्ग अपनाने में भी उसे झिझक नहीं होती । एषणाओं के पीछे बावला मनुष्य पाता कम और खोता ज्यादा है, इसलिए तत्वदर्शियों ने उन्हें खतरनाक और अवांछनीय कहा है ।

तुर्त-फुर्त अमीर बनने की लिप्सा में लोग जुआ, चोरी, बेईमानी, विश्वासघात, शोषण और छल आदि बुरे से बुरे अपराध करते देखे जाते हैं । काम वासना की भट्टी में जिनका मन उबल रहा है वे बहिन, भानजी, बेटी, पोती किसी को नहीं देखते । स्वास्थ्य, यश, ईमान गँवाते हैं और हर जगह भेड़िये की तरह खूनी नजर से निहारते हैं । इसमें मिलना क्या है—केवल गंवाना ही गँवाना है । पर वासना का गुलाम यह सब देखता कहाँ है ? पहाड़ भर चाहता है, पर तिल भर भी पा नहीं सकता, केवल जलन, अशान्ति और खीज ही पल्ले पड़ती है । इसी प्रकार सस्ती वाहवाही के लोभी विविध प्रकार के ढोंग रचते, नेतागीरी के लिए मरते, अपना चेहरा लोगों को दिखाने के लिए अकुलाते देखे जा सकते हैं । सजधज, श्रंगार, फैशन, ठाठवाठ बनाकर लोग दूसरों पर अपने बड़प्पन या आकर्षण का रौब जमाते हैं । इस प्रवंचना में समय और पैसे की पूरी बर्बादी होती है । बड़ी-बड़ी दावतें,विवाह-शादी की धूमधाम आदि में इसी सस्ती वाहवाही के भूखे लोग धन की होली फूँकते देखे जा सकते हैं । लोग हमें धर्मात्मा समझें इसके लिए कितने ही लोग तीर्थयात्रा करते, बन्दरों को चने, कछुओं को आटा खिलाते देखे जा सकते हैं । दान करने की इच्छा ख्याति का स्वार्थ लेकर होती है । नाम का पत्थर जड़वाने, पत्थर लगवाने के लोभमें कई व्यक्ति निरर्थक कामोंमें पैसा खर्च करते देखे जाते हैं । जब कि कितने ही अति उपयोगी कामों की ओर इस लिए लोग आँख उठाकर भी नहीं देखेते क्योंकि उनमें उनकी दानशीलता का ढिंढोरा पिटने वाला नहीं होता । फिल्म में अपनी तस्वीर खिचवाने और आवाज सुनवाने के लिए संभ्रात परिवारों के सुशिक्षित लड़के-लड़कियाँ अपने शील और भविष्य को बर्बाद करते हुए आये दिन दिखाई देते हैं । यह सब लोकेषणा पिशाचिनी का माया जाल ही समझना चाहिए, जिसने प्रतिभाओं को आशीर्वाद की ओर बढ़ने से रोककर निरर्थक की मृगतृष्णा में लुभाया और उन्हें छछोरी बालबुद्धि में उलझा कर बर्बाद कर दिया ।

धन, वासना और वाहवाही की तीव्र आकांक्षा उठना और इसकी बेचैनी से व्याकुल रहना, ऐसा लगता है कि मानो यह प्रगतिशीलता और पुरुषार्थ-परायणता का चिन्ह है । पर वस्तुतः बात ऐसी है नहीं । यह नशेबाजी जैसा एक उन्माद भर है, जो ललक को तुर्त-फुर्त पूरा करने के लिए जिस-तिस मार्ग को अपनाने की इच्छा पैदा करता है और बुद्धि को व्यभिचारिणी बना कर कुत्सित कर्म करने तक के लिए घसीटता चला जाता है । भौतिक महत्वकांक्षाओं की अनियंत्रित आकांक्षा, लालसा, कामना जितनी ही तीव्र होगी व्यक्ति उतना ही अधीर, अविवेकी, अशांत अनैतिक एवं उन्मत्त सरीखा व्याकुल होता चला जायगा । इस मनः स्थिति में उसने कुछ प्राप्त कर भी लिया हो तो वह इतना मँहगा पड़ता है, जितना अभावग्रस्त रहना भी नहीं अखरता ।

हमें प्रगतिशील होना चाहिए, कामनाग्रस्त नहीं । प्रतिभा के बढ़ाने को धैर्य और परिश्रमपूर्वक संतुलित मस्तिष्क से की गई साधना हमारे व्यक्तित्व को निखारती है और उसी आन्तरिक उत्कर्ष के आधार पर वह समर्थता प्राप्त होती है जिसके आधार पर किसी भी उपयुक्त दिशा में भरपूर और चिरस्थायी उन्नति कर सकना सुलभ हो जाय । हमें गाँठ बांध रखना चाहिए कि सद्गुणों की सम्पत्ति वह आधार है जिसके द्वारा सांसारिक सफलताऐं कभी भी, कितनी ही बड़ी मात्रा में मिल सकती हैं । आनन्द वासना में नहीं हंसती-हंसाती मनोवृत्ति में है जो पग-पग पर उल्लास के अवसर उत्पन्न कर सकती है । वाहवाही के ओछे प्रदर्शनों से नहीं महामानवों के पद चिन्हों पर चल सकने का साहस एकचित्र करने से वह सच्ची और चिरस्थायी श्रद्धा मिलती है जिसका अल्प अनुकरन, अनुगमन करने वाले भी यशस्वी बन सकें । ——— —'कामना और वासना की मर्यादा' से ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भाग्यवाद हमें नपुंसक और निर्जीव बनाता है

क्र० ८

एक ही औषधि हर मर्ज पर, हर व्यक्ति के लिये काम नहीं आ सकती। इसी प्रकार परिस्थितियों के अनुरूप अनेक सिद्धान्तों का प्रयोग किया जाता है। विद्यार्थियों और वानप्रस्थों के लिये ब्रह्मचर्य धर्म है, किन्तु विवाहितों के सन्तानोत्पादन के लिये काम-सेवन भी धर्म बन जाता है। साधुओं का सम्मान एवं दुष्टों का प्रताड़न परस्पर विरोधी सिद्धान्त विपरीत परिस्थितियों में प्रयुक्त होते हैं। भाग्यवाद का सिद्धान्त भी एक ऐसा ही प्रयोग है. जो केवल तब काम में लाया जाता है, जब मनुष्य के पुरुषार्थ करने पर भी अभीष्ट सफलता न मिले। असफलता में निराशा और खीज उत्पन्न होती है और अपनी भूल तथा दूसरों के असहयोग के अनेक प्रसङ्ग ध्यान में आते हैं। ऐसी दशा में असफलता की हानि के साथ लोग भावी सतर्कता के लिये शिक्षा तो नहीं लेते, उल्टे अपने या दूसरों के ऊपर झल्लाते, उद्विग्न होते देखे जाते हैं। इन परिस्थितियों में भाग्यवाद की चर्चा करके चित्त को हल्का किया जा सकता है। उस समय के लिये यह उपयुक्त औषधि है।

पर यह दवा यदि कुसमय में काम में लाई जाय तो पुरुषार्थ के उत्साह को ठण्डा कर सकती है और व्यक्ति को अकर्मण्य बना सकती है। अपने देश में ऐसा ही कुछ बहुत दिनों से होता चला आ रहा है और हम अपने कर्त्तव्यों के प्रति निर्जीव, नपुंसक, अन्यमनस्क और निराशाग्रस्त होते चले जा रहे हैं। "जो भाग्य में लिखा है, सो होगा—होतव्यता टलेगी नहीं—जितना मिलना है, उतना ही मिलेगा—कर्म-रेख मिटती थोड़े ही है—जब अच्छे दिन आयेंगे, तभी सफलता मिलेगी—जैसी मान्यतायें यदि मजबूती से मन में जड़ जमा लें तो किसी भी मनुष्य को अकर्मण्य और निराशावादी बना देंगी। वह यही सोचता रहेगा कि जब अच्छा समय आयेगा तब सब कुछ अपने आप ठीक हो जायगा, यदि अपने भाग्य में नहीं है तो मेहनत करने पर भी क्यों मिलेगा ? ऐसे भाग्यवादी व्यक्ति न अपने पुरुषार्थ पर विश्वास करते हैं और न पूरे उत्साह से किसी काम में लगते हैं, फलस्वरूप उन्हें कोई महत्वपूर्ण सफलता भी नहीं मिलती। आशा की ज्योति जलती ही न हो तो प्रगति पथ पर प्रकाश कैसे उत्पन्न होगा ?

यह विचारधारा भारतीय दर्शन के सर्वथा विपरीत है। अपने यहाँ सदा पुरुषार्थ, कर्म, प्रयत्न और संघर्ष को मानव-जीवन की अनिवार्य आवश्यकता के रूप में प्रतिपादित किया जाता है। अपना सारा अध्यात्म इतिहास और दर्शन इसी प्रतिपादन से भरा पड़ा है। फिर यह भाग्यवादी विकृत विचारधारा कहाँ से चल पड़ी ? इसकी खोज करने पर स्पष्ट हो जाता है कि सामन्तवादी शोषकों ने अपनी अत्याचारों से पीड़ित जनता को किसी प्रकार शान्त संतुष्ट करने के लिये यह मनोवैज्ञानिक नशे की गोली विनिर्मित की। उनके इशारे पर साधु, पण्डित भी इसी तरह के किस्से कहानी गढ़कर पीड़ितों के रोष-प्रतिरोष को शान्त शमन करने में लगे रहे।

नृशंस विदेशी शासन के द्वारा उत्पीड़ित जनता बहुत क्षुब्ध और आवेशग्रस्त थी। आये दिन कत्लेआम, मंदिरों का गिराया जाना, सयानी लड़कियों को जबरदस्ती ले जाना, बलात् धर्म-परिवर्तन करना जैसी घटनायें किस का खून न खौला देंगी ? कौन प्रतिरोध के लिये तैयार न होगा ? पर आश्चर्य इस बात का है कि मुट्ठी भर अत्याचारियों के विरुद्ध समुद्र जितनी विस्तृत और परम तेजस्वी भारती जनता प्रतिरोध की दृष्टि से कुछ भी न कर सकी और वे दुष्ट उत्पीड़न लम्बी अवधि तक यथावत् चलते रहे। इस नपुंसकता के पीछे हमारी भाग्यवादी दार्शनिक भ्रष्टता का ही प्रमुख हाथ रहा, जिसने क्षोभ, रोष प्रतिरोध एवं संघर्ष की शौर्य प्रकृति को चकनाचूर करके फेंक दिया।

कत्लेआम हुये और हमें कहा गया—जिनको जिस प्रकार, जिस दिन, जिसके हाथों मरना है, वह उसी तरह मरेंगे। उस विधान को कोई मेट नहीं सकता। उनका प्रारब्ध ऐसा ही था, जिसके कारण उन्हें मरना पड़ा। मारने वाले तो निमित्त मात्र थे उन पर रोष करने से क्या लाभ ? लड़कियों को घरों से उठा कर ले गये तो कहा गया, जिस लड़की का अन्न जहाँ बदा है, जिसके साथ इसका जूरी-संयोग लिखा-बदा है, जहाँ दुःख-सुख इसे भोगना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है वहीं तो यह रहेगी । इस विधि-विधान के प्रतिकूल रोष करने से क्या बनेगा ? मुट्ठी भर विदेशी, रोमांचकारी लूट-खसोट और नृशंस उत्पीड़न करते रहे और हमें कहा गया—भगवान् की इच्छा के बिना पत्ता भी नहीं हिलता, फिर यह अप्रिय लगने वाली घटनायें भी उन्हीं की इच्छा से हो रही हैं । उनका पुण्य-फल रहा होगा और हमारा पाप उदय हो रहा होगा । इसी से भगवान् का यह विधान चल रहा है इसे सहन कर लेना और चुप बैठे रहना ही उचित है ।

इन धारणाओं ने हमें नपुंसक बना दिया और एक हजार वर्षों तक हम मुट्ठी भर विदेशी शासकों के पैरों तले बेतरह कुचले जाते रहे । इतना ही नहीं हमारा व्यक्तिगत पौरुष, उल्लास, उत्साह एवं पराक्रम भी सो गया । जब ग्रह-दशा, भाग्य-चक्र, हस्त-रेखा ही अनुकूल न हों, तब प्रयत्न करने का झंझट भी क्यों उठाया जाय ? जब समय बदलेगा, तब भाग्य-लक्ष्मी का उदय होने से घर बैठे धन सम्मान बरस पड़ेगा—इस मान्यता के रहते कठिन कष्टसाध्य पराक्रम करने के लिये किसके मन में उमङ्ग उठेगी ? व्यक्तिगत उत्सर्ग और सामाजिक सुव्यवस्था के लिये कौन प्रयत्न करेगा ? क्यों प्रयत्न करे ? जब सब कुछ भगवान् की इच्छा से ही हो रहा है, भाग्य-चक्र जब पलटा नहीं जा सकता तो प्रयत्न करने का महत्व ही क्या रहा ? ऐसी दशामें कोई कुछ सुधारात्मक बड़ा काम किस आधार पर आरम्भ करे ? किसी बड़े परिवर्तन के लिये कोई किस लिये साहस इकट्ठा करे ?

शोषक और दुष्ट, दुराचारी अपने द्वारा उत्पीड़ित शोषित लोगों को इसी आधार पर ठण्डा करते रहे कि तुम्हारे भाग्य में कुछ ऐसा ही लिखा था, जिसके कारण दुःख दरिद्र सहन करने पड़ रहे हैं । हम तो निमित्त मात्र हैं। असली कारण तो तुम्हारा भाग्य है । गायें कटती रहें तो हम बधिकों को किस मुख से कह सकते हैं कि तुम्हारा कृत्य अनुचित है ? भाग्य और भगवान् की इच्छा ही जब एक मात्र कारण है, तब उस कुकृत्य को रोकने की, विरोध करने की बात सोचना ही बेकार है । हर पाप और अपराध का करने वाला अपने पक्ष में यही दलील देकर अपने को निर्दोष सिद्ध कर सकता है, फिर उस बेचारे को क्यों कोई रोके ? संसार के दीन-दुःखी, पीड़ित, अपंग जब भगवान् की इच्छा से ही इस स्थिति में पड़े हैं, विधि का विधान भोग रहे हैं तो उनकी सेवा, सहायता करना व्यर्थ है । इससे तो भगवान् और विधाता दोनों ही नाराज होंगे कि हमारे विधान में क्यों हस्तक्षेप किया ? ऐसी दशा में दीन दुखियों की सेवा, सहायता करना भी एक अपराध बन जाता है ।

किसी समाज का दर्शन-दृष्टिकोण भ्रष्ट हो जाय तो उसमें सर्वांगीण भ्रष्टता आती है । भाग्यवाद हमारी दार्शनिक भ्रष्टता है, जिसने हमारी कर्तव्य निष्ठा को बुरी तरह कुचल मसल कर फेंक दिया और हम किसी समय के विश्व मूर्धन्य आज दुःख-दारिद्र की हीन परिस्थितियों में पड़े बिलख रहे हैं । बड़े-से बड़े झटके खाकर भी जर्मनी और जापान पुनः अपनी पूर्व स्थिति पर पहुँच गये, पर बाईस वर्ष बीत जाने पर भी हमारी राजनीतिक स्वाधीनता हमें प्रगति पथ पर अग्रसर न कर सकी । इसका एक बहुत बड़ा कारण हमारी दार्शनिक पराधीनता है । बौद्धिक दृष्टि से हम अभी भी गुलाम हैं । अंग्रेज, मुसलमान, भले ही चले गये हों पर हमारे मस्तिष्क को भाग्य, देवता ग्रह-नक्षत्र विधि-विधान, ईश्वर, इच्छा, समय का फेर आदि मूढ़ मान्यताओं की जंजीर उसी तरह से जकड़े हुए है ।

भाग्यवाद के सिद्धान्त का यदि कुछ उपयोग है तो केवल इतना कि जब मनुष्य असफल या हताश हो जाय तो थोड़ी देर के लिये अशान्ति को हल्का करने के लिए उसका वैसा ही प्रयोग कर लिया जाय जैसा तेज बुखार के सर दर्द में 'एस्प्रो' की गोली खाकर थोड़ी देर के लिए राहत मिल जाती है । इसके अतिरिक्त यदि कर्तव्य क्षेत्र में उसका उपयोग किया जाने लगा तो उससे केवल अनर्थ ही उत्पन्न होगा । लोग अपना कर्तव्य और पुरुषार्थ खो बैठेंगे । आशा और उत्साह, साहस और शौर्य सब कुछ कुण्ठित हो जायगा । न अनीति के विरुद्ध संघर्ष कर सकना सम्भव रहेगा और न सेवा तथा सुधार के लिए किसी के मन में उत्कण्ठा जगेगी । इस मान्यता के रहते हम युग-युगान्तरों तक दयनीय परिस्थितियों में ही निर्जीव और निःचेष्ट बने पड़े रहेंगे । इस लिये आवश्यक है कि इस बौद्धिक दासता के भ्रष्ट सिद्धान्त को ठोकर मारें जिसे शोषकों ने हमारे रोष की प्रतिक्रिया से बचने के लिए गढ़ा और फैलाया है । कल का कर्म ही आज भाग्य बन सकता है । कल का दूध आज दही कहला सकता है । इसलिये यदि भाग्य कुछ है भी तो केवल हमारी कर्मठता की प्रतिक्रिया, प्रतिध्वनि मात्र है । इसलिये हमें भाग्य की ओर न देखकर कर्मनिष्ठा को ही प्रधानता देनी चाहिए ।

'हम भाग्यवादी नहीं कर्मवादी बनें' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बौद्धिक परावलम्बन का जुआ उतार फेंकें

क्र० ६

ग्रह नक्षत्र आसमान में रहते हैं। वे पाञ्चभौतिक अणु-परमाणुओं से बने पिण्ड मात्र हैं। जैसा कि चन्द्रमा पर पदार्पण करके तथा मङ्गल, शुक्र आदि की वैज्ञानिक जानकारी प्राप्त करके पता लगा लिया गया है। उनमें न देवता रहते हैं न प्राणी यदि रहते भी हों और कुछ प्रभाव भी डालते हों तो वह समस्त पृथ्वी या उसके किसी भाग पर ही हो सकता है। यह किसी प्रकार सम्भव नहीं कि ये निर्जीव पिण्ड अलग-अलग व्यक्तियों पर अलग-अलग प्रकार के प्रभाव डालें। भारतीय ज्योतिष शास्त्र खगोल विद्या का महत्त्वपूर्ण विज्ञान है। उसमें नक्षत्रों की गतिविधियों का बहुत बड़ा ज्ञान समाविष्ट है। वह विद्या अति महत्त्वपूर्ण है। पर पिछले दो हजार वर्षों से तो उस विज्ञान में फलित ज्योतिष की एक नई शाखा रचकर भ्रम और अज्ञान फैलाने का एक घृणित साधन बना लिया गया है। गणित ज्योतिष ऋषियों की देन है उसमें वैज्ञानिक तथ्यों का समावेश है पर फलित ज्योतिष तो यों ही अटकल-पच्चू है,लोगोंको अशुभ ग्रह दशा के भय से डराना और डरे हुए लोगों से ग्रह देवता की पूजा-पत्री के नाम पर कुछ ऐंठ लेना यही इस नई गढ़न्त का एकमात्र आधार है। पिछले दिनों व्यवसायी लोगों ने भोली जनता की धर्म श्रद्धा का अनुचित शोषण करने के लिये यह जाल-जञ्जाल रचकर खड़ा कर दिया है और असंख्य व्यक्ति उन मान्यताओं के शिकार होकर अकारण दुःखी रहते और अपना भारी अहित करते रहते हैं।

विवाह-शादियों में जन्म-पत्र मिलाने की प्रथा से असंख्य सुयोग्य जोड़े मिलने से वंचित रह जाते हैं। लड़की-लड़के सुयोग्य हैं, सम्बन्धी भी रजामन्द है। पर पण्डितजी ने पत्रा देखकर बता दिया कि विधि वर्ग नहीं मिलता। बस सारा आधार नष्ट हो गया। मन नहीं भर रहा है, विवाह जोड़ना कुछ जम नहीं रहा है, पण्डितजी ने बता दिया विधि वर्ग बहुत अच्छा मिलता है—बस स्वीकृति मिल गई। परिणामों की शोध की जाये तो पता लगेगा कि विधि-वर्ग की सङ्गति मिलाकर जो विवाह किये गये थे उनमें से कितने सफल रहे। परिणाम उल्टा ही मिलेगा, क्योंकि विधि-वर्ग की सनक में जो अन्य लोग बातों की उपयोगिता-अनुपयोगिता की परवाह नहीं करते, उन्हें स्पष्टतः घाटे में रहना चाहिये और रहते भी हैं।

लड़की मङ्गली है। लड़का मङ्गली है। बस इतने भर से उनके विवाह-शादी असम्भव नहीं, तो कठिन अवश्य हो जाते हैं। सुयोग्य बच्चे जो सुयोग्य साथी पाने के अधिकारी थे, इस मूढ़ मान्यता के शिकार हो गये कि उनकी कुण्डली में मङ्गल बैठा है। उन्हें सुयोग्य साथी के चुनाव में वंचित रहना पड़ा। कोई मङ्गली जोड़ा बैठे तब काम चले। ढूँढ़-खोज में निराश अभिभावक जहाँ भी मङ्गली की तुक बैठती है, वहीं विवाह को बला काट देते हैं, ये बच्चे आजन्म रोते-बिलखते रहते हैं।

देखना यह है कि क्या इस बात में कुछ सच्चाई भी हो सकती है कि करोड़ों मील दूर रहने वाले ग्रह-नक्षत्र पृथ्वी निवासी किसी व्यक्ति विशेष को प्रभावित ही नहीं करें वरन् उनकी विवाह-शादी जैसी आवश्यकताओं में हस्तक्षेप करें। विवेक कहता है—यह सर्वथा असम्भव है। एक तो ग्रह-नक्षत्रों में कोई जीवन ही संदिग्ध है। विज्ञान उन्हें निर्जीव पिंडमात्र सिद्ध कर रहा है। यदि ये सजीव भी हों, तो हर व्यक्ति के प्रति उनकी बार-बार बदलने वाली रीति-नीति का कोई कारण या आधार समझ में नहीं आता। हिन्दू-समाज का एक बहुत छोटा वर्ग फलित ज्योतिष पर विश्वास करता है। इस देश के निवासियों में से भी अधिकांश की मान्यता अलग तरह की है। अन्य देशों की तो बात ही क्या कहनी। वहाँ उस तरह की कोई मान्यता नहीं। तब क्या उन्हें ग्रह-नक्षत्रों का कोप-भाजन ही बनना पड़ता होगा ?

पिछले दो हजार वर्षों से हम बौद्धिक गुलामी के बेतरह शिकार हुए हैं। स्वतन्त्र चिन्तन और विवेक-शीलता को हम छोड़ बैठे। फलस्वरूप हम जीवन के हर क्षेत्र में परावलम्बी होते चले गये। एक हजार वर्षों की राज-नैतिक पराधीनता इस बौद्धिक गुलामी की ही प्रतिक्रिया थी। जो मानसिक दृष्टि से परावलम्बी हो जाता है उसे व्यावहारिक जीवन में भी किसी का गुलाम बन कर ही जीना पड़ता है। विदेशियों और विधर्मियों के पैरों तले हम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक हजार वर्ष तक इसीलिये दबे पड़े रहे कि स्वतन्त्र चिन्तन और विवेकपूर्वक दिशा निर्धारण की प्रक्रिया खो बैठे। जो कुछ होना है, जो कुछ होगा देवताओं की, भाग्य की, नक्षत्रों की कृपा से होगा। हमारी स्वतन्त्र चेतना तो निरर्थक है। इस प्रकार की मान्यता हमारी सबसे बड़ी दुर्बलता है। इस दुर्बलता का फूहड़ उदाहरण फलित ज्योतिष के रूप में देखा जा सकता है। जन्म पत्रों में ही हमारा सब कुछ भूत-भविष्य लिखा है। यह मान्यता हमारे पुरुषार्थ को निरर्थक सिद्ध करती है। जो होना है सो जन्म कुण्डली में ही लिखा है। हमें इसी के अंगुलि-निर्देशों पर घूमना है। यह मान्यता स्वतन्त्र चिन्तन और पुरुषार्थपूर्ण कर्तृत्व के सारे द्वार बन्द कर देती है। मनुष्य बौद्धिक दृष्टि से पराधीन और भाग्यवादी बन कर किसी अज्ञान के संकेत और सहयोग, असहयोग से बँधी हुई पतङ्ग की तरह अपने को मानने लगता है। जीवन के प्रगति पथ पर यह स्थिति सबसे बड़ी बाधा और विपत्ति है। इससे भारतीय विवेक और कर्त्तव्य को जितनी क्षति पहुँचाई गई, उतनी शायद ही किसी और भ्रान्ति ने पहुँचाई हो। हमारा भविष्य निर्धारित और विश्वस्त है—इस मूढ़ मान्यता पर जो विश्वास करेगा वह न तो पराक्रमी हो सकता है और न अपनी प्रतिभा को सजग करने के लिये आवश्यक उत्साह ही उत्पन्न कर सकता है। फलित ज्योतिष एक प्रकार से हमें भाग्यवादी, परावलम्बी और नपुंसक बनाकर रख देती है। यह हमारे आध्यात्मिक जीवन की एक महती विपत्ति ही कही जा सकती है। जिन्होंने इस जंजाल का सृजन किया उन्होंने मानव-समाज का कितना अहित कर डाला, वे बेचारे शायद ही यह अनुमान लगा सके हों।

जन्म-पत्र बनवाने और किसी को दिखाने का अर्थ है अपने ऊपर बैठे-ठाले एक चिन्ता भय एवं अशान्ति का आवरण तान लेना। नौ ग्रहों में से कभी कोई प्रतिकूल न हो ऐसा हो ही नहीं सकता। ज्योतिषी इसी बात को बताकर डरा देगा और प्रयत्न करेगा कि उसे पूजा-पाठ के—ग्रह-शान्त के नाम पर कुछ ऐंठने को मिले। डरा हुआ व्यक्ति देता भी है और ज्योतिषी की गहरी छनती रहती है। पर अपने ऊपर जो आशङ्का और भीति सवार हो गई यह हर घड़ी खून सुखाती रहेगी और मानसिक शान्ति को नष्ट करती रहेगी। ग्रहों को शान्त या अशान्त कर सकना ज्योतिषी के हाथ में होता तो वह गर्मी के दिनों में सूर्य को जरूर शान्त कर देता ताकि पृथ्वी पर सुहावना मौसम बना रहे। चन्द्र-आकर्षण को जरूर शान्त कर देता ताकि समुद्र में ज्वार-भाटे न उठते और जहाज एवं नावों का आवागमन निरापद हो जाता। जो इतना भर नहीं कर पाते उनसे कैसे आशा करें कि ग्रहों की गति-विधियाँ उनकी मुट्ठी में हैं।

शकुन, मुहूर्त हमारी गतिविधियों को पग-पग पर रोकते हैं। अभी कोई काम आवश्यक करना है, मुहूर्त नहीं निकला तो उसे रोकना ही पड़ेगा। सोमनाथ मन्दिर पर मुहम्मद गजनवी ने आक्रमण किया तो उसका प्रतिकार करने का मुहूर्त ही नहीं निकला फलस्वरूप बिना लड़े ही उस विशाल सम्पत्ति पर आक्रमणकारियों का अधिकार हो गया। ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण दुर्घटनायें आये दिन घटित होती रहती हैं और हर क्षण मूल्यवान् है इस तथ्य को भूलकर हम किसी अच्छे मुहूर्त की राह जोहते रहते हैं। बिल्ली का रास्ता काट जाना, कुत्ते का कान फड़फड़ा देना, पनघट की ओर जाता खाली घड़ा, किसी जुकाम पीड़ित की छींक हमारे उत्साह को नष्ट करने के लिये पर्याप्त है। अपशकुन हो गया तो दिल धड़कने लगा। हिम्मत आधी रह गई। ऐसी दशा में यदि घबराये हुए व्यक्ति को असफलता का मुँह देखना पड़े तो आश्चर्य ही क्या है ?

कोई नई वस्तु—पशु या व्यक्ति घर में आया तो देखते हैं कि यह शुभ है या अशुभ। संयोगवश कोई हानिकर प्रसंग आ गया तो दोष बेचारे उस नवागन्तुक का है। नई बहू घर में आई उसी दिन संयोगवश भैंस मर गई। सारा दोष नई बहू का, यह अभागिन है। इसी प्रकार किसी अयोग्य का संयोग शुभ सिद्ध होने का बन जाय, तो फिर तो पौ बारह हैं। लाखों विधवायें अपराधिनी की तरह इसीलिए मुँह छिपाये फिरती हैं कि उनका पति मर गया और मृत्यु का कारण उनका अशुभ भाग्य ठहराया गया।

अशुभ भविष्यवाणियों के आधार पर लोगअपने उज्जवल भविष्य की आशा छोड़ बैठते हैं। हाथ की रेखाओं की—चेहरे पर किसी अङ्ग की—बनावट देखकर जिन्हें भाग्यहीन घोषित कर दिया है, उन बेचारों की मनोभूमि एक प्रकार से कुचल दी गई। उन्हें प्रगति पथ पर अग्रसर होने का उत्साह अब कहाँ से मिल सकेगा ? भ्रांतियों के जंजाल से हम निकलें और इस बौद्धिक परावलम्बन की बेड़ियाँ तोड़ फेंकें यही हमारे लिए उचित एवम् उपयुक्त है।

—'बौद्धिक परावलम्बन का जुआ उतार फैंकें' पुस्तिका से।

Complete Work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ज्ञान-योग, कर्म-योग, भक्ति-योग की महान साधना

क्र० १०

आत्मा और परमात्मा को जोड़ देने वाली प्रक्रिया का नाम योग है। योगाभ्यास, योग साधना करके श्रेयार्थी पूर्णता का लक्ष्य प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं। योगाभ्यास के दो मार्ग हैं, एक भौतिक दूसरा आत्मिक। भौतिक वे हैं जिनमें शरीर की क्रियायें करनी पड़ती हैं, आत्मिक वे जिनमें मन और चेतना को परिष्कृत किया जाता है। शरीर भौतिक पदार्थों से बना है और उसमें भौतिक शक्तियाँ भरी पड़ी हैं। अन्तःकरण चेतना तत्व से बना है। इसलिये वह सूक्ष्म और दिव्य शक्तियों का निवास है। शरीर द्वारा किये गये योगाभ्यास से भौतिक उत्कर्ष का लाभ मिलता है और मानसिक साधनाओं द्वारा आत्मबल बढ़ने और आत्मतत्त्वों के विकास का मार्ग खुलता है। शरीर क्षेत्र की अपेक्षा आत्मिक क्षेत्र की समर्थता और संभावना एवं सामर्थ्य अधिक है, इसलिये तत्वज्ञानी सर्वसाधारण के लिये मानसिक साधनाओं का निर्देश विशेष रूप से देते रहे हैं और विशिष्ट व्यक्तियों की शरीरगत अभ्यासों की बात कहते रहते हैं।

शरीरगत अभ्यास में आसन प्राणायाम नेति, धोती, वस्ति, बज्रोली कपालभाति, मुद्रा, बंध, व्रत, यात्रा, स्नान कीर्तन जैसे साधन बताये जाते हैं। यह सब कार्य शरीर को करने पड़ते हैं इसलिये इनके परिणाम भी प्रायः भौतिक स्तर के होते हैं। मानसिक साधनाओं में ध्यान धारण, ध्यान प्रत्याहार, समाधि जैसे प्रसंग आते हैं। शरीरगत योग ८४ प्रकार के विख्यात हैं। क्रियाएँ भी ऐसी करनी पड़ती हैं जो कष्टसाध्य होती हैं और भूल होने पर उल्टी हानिकारक हो सकती हैं। मानसिक साधनाओं में ऐसी कठिनाई नहीं है। इसलिये वे सर्व साधारण के लिये सुलभ हैं। उन्हें बिना किसी की सहायता से भी किया जा सकता है। मानसिक योग साधनाओं में तीन ही प्रमुख हैं–(१) ज्ञानयोग (२) कर्मयोग (३) भक्तियोग। इन्हें बालवृद्ध नर-नारी, रोगी-निरोग, शिक्षित-अशिक्षित कोई भी किसी स्थिति में रहकर बिना किसी कठिनाई के कर सकता है और आत्मा को परमात्मा से मिलाने का योग लक्ष्य प्राप्त कर सकता है।

ज्ञान योग का प्रयोजन है जीवन के स्वरूप प्रयोजन लक्ष्य और सदुपयोग की रूपरेखा ठीक तरह हृदयङ्गम करना और अन्तःकरण में इतना उत्साह एवं साहस उत्पन्न करना कि आत्मकल्याण के उद्देश्य से अपनी विचारणा और कार्य पद्धति के निर्माण में जुट जाय। इसके लिये हमको बार बार आत्म-चिन्तन करना चाहिये और अपनी वर्तमान स्थिति पर विचार करना चाहिये। यह भी विचारना चाहिये कि बोलने, सोचने, पढ़ने की––उपार्जन, गृहस्थ, शिक्षा, चिकित्सा, वहन, मनोरंजन आदि की जो सुविधायें किसी भी प्राणी को नहीं मिली वे केवल मनुष्य को ही भगवान ने क्यों दीं यदि अकारण दी होतीं तो वह पक्षपाती कहलाता और समस्त जीव जन्तु परमात्मा से शिकायत करते कि अकेले मनुष्य को ही वे लाभ क्यों दिये ? इस प्रश्न का उत्तर एक ही है कि परमात्मा ने मनुष्य को अपने प्रतिनिधि एवं सहयोगी के रूप में इसलिये सृजा कि वह उसके संसार को अधिक सुन्दर, सुव्यवस्थित, सुगन्धित, समुन्नत बनाने में उसका हाथ बटाये यदि अतिरिक्त सुविधाएँ मनुष्य को प्राप्त हैं तो वे उसी महान् उद्देश्य को पूरा कर सकने के साधन मात्र हैं। इनको तृष्णा वासना की पूर्ति में नहीं वरन् निर्वाह मात्र के लिये आवश्यक न्यूनतम उपभोग करके अपने भौतिक और आत्मिक साधनों को––विराटब्रह्म के लिये—विश्व मानव के लिये नियोजित करना चाहिये। यह सच्चाई जितनी स्पष्ट होने लगे और अन्तःकरण इस प्रयोजन की पूर्ति में रस लेने लगे तभी समझना चाहिये कि आत्मबोध हुआ, अज्ञान का आवरण हटा, माया के बंधन कटे और ज्ञान के प्रभाव का आलोक अन्तःकरण में फैला। ज्ञानयोग का उद्देश्य इसी विचारणा को इस स्तर तक जानना है कि इसकी पूर्ति के लिये अन्तःकरण बेचैन हो उठे।

ज्ञान योग का प्रकाश जब अन्तःकरण में जाता है तब व्यक्ति को यह भान होता है कि उसे पेट और प्रजनन की तृष्णा वासना जैसे पशु प्रयोजनों के लिये मानव-जीवन जैसी बहुमूल्य विभूति को नष्ट न कर डालना चाहिये वरन् अपनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आन्तरिक एवं बाहरी गति-विधियों का निर्धारण इस प्रकार करना चाहिये जिससे ईश्वर की इच्छा को पूर्ण करने और उपलब्धियों को अभीष्ट उद्देश्य में लगाने का सुयोग बन पड़े। इस विचारणा को चिन्तन और मनन द्वारा—स्वाध्याय और सत्संग द्वारा प्रबल और सक्रिय बनाना ही ज्ञानयोग है।

ज्ञान योग का व्यावहारिक रूप अगला कदम कर्मयोग है। कर्तव्य की दृष्टि से—आदर्श और उद्देश्य के लिये प्रत्येक कार्य करने के लिये अपने को मुस्तैदी के साथ जुटा देना कर्मयोग की साधना है। लोभ और मोह के लिये—तृष्णा, वासना और संस्कार की पूर्ति के लिये अपने क्रिया--कलाप न हों, वरन् उनके पीछे यही भावना काम करे कि हम अपने मानवीय कर्तव्यों में किसी भी कारण राई रत्ती अन्तर न पड़ने देंगे। दूसरे लोग हमारे प्रति अनुचित व्यवहार करें तो उसके समाधान के अन्य उपाय किये जायें, पर यह न सोचा जाए कि हम भी उसी स्तर पर उतर आवें और अवांछनीय एवं अनुचित कार्य करने लगें। अपने समस्त कार्य आदर्शवादिता और उत्कृष्टता से ही भरे होने चाहिये। इस सम्बन्ध में अपनी आत्मा इतनी सुदृढ़ हो कि समस्त संसार के दुर्व्यवहार मिल कर भी उसे विचलित न कर सकें।

अधिकार में कमी पड़ती हो तो पड़े पर कर्तव्य पालन में अन्तर न आने पाये। जीवन सादगी भरा जिये जिससे उच्च विचारों को कार्यान्वित करना सम्भव हो जाय। जो जितना मँहगा जितना आडम्बरी और जितना महत्त्वाकाँक्षी जीवन जियेगा उसकी आवश्यकतायें उतनी ही बढ़ेंगी और उनके दावानलमें ही उसकी शुभकामनायें समाप्त हो जायेंगी। जीवनोद्देश्य की पूर्ति के लिये न समय बचेगा न श्रम, न मन न धन। इसलिये उत्कृष्ट जीवन जीने वाले को सादगी ही वरण करनी चाहिये। अपने साधन महत्त्वाकाँक्षाओं की सम्पन्नताओं की ललक में नहीं वरन् गुण-कर्म स्वभाव को परिष्कृत करने वाली सत्प्रवृत्तियों में नियोजित किये जाने चाहिये। नर से नारायण, पुरुष से पुरुषोत्तम, आत्मा से परमात्मा, पशु से देवता, क्षुद्र से महान् होने की महत्त्वाकाँक्षायें ही श्रेयस्कर हैं। दूरदर्शी दौलत जमा करने, अहंकार पुजवाने और वासना की आग में जल मरने के लिये नहीं जीते वरन् वे ऐसे अनुकरणीय पद चिन्ह छोड़ते हैं जिन पर चल कर असंख्य मनुष्य महानता की दिशा में अग्रसर हो सकें। ऐसा आदर्श जीवन बनाना ही कर्मयोग की साधना है।

भक्ति का अर्थ है--प्यार भक्ति योग का अर्थ है--प्यार का विकास। ईश्वर से प्रेम करने का--परमात्मा से भक्ति करने का उद्देश्य है, इस विराट ब्रह्म—विश्व मानव से प्रेम करना। यह समस्त संसार ही ईश्वर का विराट रूप है। सब में समाई हुई आत्मा का सम्मिलित रूप ही परमात्मा है। समष्टि—समाज एवं विश्व चेतना के रूप में हम ईश्वर का प्रत्यक्ष दर्शन कर सकते हैं। अर्जुन और यशोदा को दिव्य चक्षु देकर भगवान ने अपना वास्तविक विराट रूप इसी प्रकार दिखाया है। हमारे दिव्य चक्षु खुलेंगे तो समस्त संसार ईश्वर का रूप दिखाई देगा और उनके साथ आत्मीयता,सद्भावना,सेवा उदारता का प्यार भरा व्यवहार करने को जी मचलेगा। वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना जागेगी। जिस प्रकार अपने परिवार के प्राणियों को समुन्नत बनानेकी बात याद रहती है उसी प्रकार समस्त विश्व को सुखी समुन्नत बनाने के लिये अपने आप को जुटा देने, खपा देने की आशंका प्रबल होगी। तब लोक-मंगल के लिये बहुत से कष्ट श्रम प्रयत्न और त्याग कर गुजारना जीवन की पहली आवश्यकता प्रतीत होगी और इस उद्देश्य के लिये निरन्तर कटिबद्ध रहना दैनिक जीवन का एक अविच्छिन्न अंग बन जायेगा। यही भक्ति योग का वास्तविक स्वरूप है।

ज्ञान-योग, कर्म-योग, भक्ति-योग की जीवन साधना वस्तुतः अति उच्चकोटि का सर्वसुलभ योगाभ्यास है। इस त्रिविध योग की विचारणा और कार्य पद्धति यदि हमारे व्यावहारिक जीवनक्रम में घुल मिल जाय तो निस्सन्देह आत्मा को परमात्मा से मिला देने का--अपूर्णता को पूर्णता में परिवर्तित कर देने का जीवन लक्ष्य सहज ही पूर्ण हो सकता है। **'ज्ञान-योग, कर्म-योग, भक्ति-योग' पुस्तिका से।**

* * *

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आध्यात्मिक जीवन के पाँच कदम

क्र० ११

अध्यात्मवादी उज्ज्वल और उत्कृष्ट जीवन की गतिविधियाँ—सामान्य नर पशुओं की तरह पेट और प्रजनन, वासना तृष्णा पर आधारित नहीं होतीं। वरन् उच्च आदर्शवादिता ही उनकी आकांक्षाओं और प्रेरणाओं की जननी होती है। अध्यात्मवादी वह है जो आत्मा और शरीर को एक नहीं दो मानता है। दो नहीं एक को अधिपति और दूसरे को उपकरण समझता है। यह अन्तर जिसकी दृष्टि में स्पष्ट हो गया वह काया की सुख सुविधा, इन्द्रियों की लिप्सा और झूँठी वाहवाही, शानशेखी को महत्व न देकर इस बात को महत्व देता है कि आत्मकल्याण और आत्म विकास जैसे महान् प्रयोजन के लिए लाखों वर्षों बाद भूले हुए इस अमूल्य मानव जीवन का श्रेष्ठतम सदुपयोग कैसे करें ? इसी धुरी के इर्द गिर्द उसकी आकांक्षा, अभिलाषा, विचारणा घूमती हैं और इसी प्रयोजन के लिए इसकी क्रिया पद्धति और रीति नीति का निर्धारण होता है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए यदि शारीरिक सुविधाओं, भौतिक सम्पदाओं में कुछ कमी आती है तो उसे रत्ती भर भी रंज नहीं होता क्योंकि वह जानता है कि शरीर एक उपकरण मात्र है। इसकी सुविधायें घटती हैं तो आत्मा के उत्कर्ष का द्वार खुलता है। इससे हानि कम और लाभ अधिक है। इस मान्यता से प्रेरित जीवन को अध्यात्मवादी अथवा देव-जीवन कह सकते हैं।

इसके विपरीत भौतिकवादी पशु-जीवन वह है जिसमें सारी आकांक्षाएँ शारीरिक सुविधा और पार्थिव उपलब्धियों के लिए लालायित और नियोजित रहती हैं। हमारे पास पैसा अधिकाधिक हो, ऐशआराम के साधन अधिक बढ़ें, इन्द्रिय भोगों की पूरी छूट हो, शौक-मौज मनोरंजन के साधनों की कमी न रहे, लोग अपना रौब मानें और वाहवाही की झड़ी लगा दें। बस, इतनी भर लालसा जिनकी है वे इस स्तर का ताना बाना बुनते हैं। सारा समय, सारा श्रम, सारी क्षमता, सारी योग्यता इसी गोरखधन्धे में समाप्त हो जाती है। आत्म कल्याण की बात तो तब याद आये जब आत्मा नाम का कोई अलग तत्व या तथ्य उनके सामने हो। शरीर ही उनके लिए आत्मा है वही परमात्मा है, वही सर्वस्व है। शरीर और आत्मा के स्वार्थ भिन्न भिन्न हैं और आमतौर से एक दूसरे से टकराते हैं जो इस रहस्य को नहीं समझता उसे यह सोचने की फुर्सत कहाँ है कि आत्मा की आवश्यकताओं का हनन करके शरीर की सुविधाएँ बढ़ाने में बुद्धिमानी नहीं है। चन्द रोज की जिन्दगी में काया को क्षणिक सुख देने के प्रलोभन में जो जीवन लक्ष्य और आत्म कल्याण का उद्देश्य खो बैठेगा उसे दुनियादारी की दृष्टि से तो बुद्धिमान न कहा जायगा, पर जन्म जन्मान्तरों का भविष्य इतने भर के लिए अन्धकारमय बना लेने की दृष्टि से तो उसे महामूर्ख के अतिरिक्त कुछ कहा, समझा नहीं जा सकेगा।

अध्यात्मवादी जीवन मनुष्य के गौरव की दृष्टि से, उज्ज्वल भविष्य की दृष्टि से, सामाजिक सुव्यवस्था की दृष्टि से और सर्वोपरि आत्मशान्ति एवं आन्तरिक संतोष की दृष्टि से नितान्त आवश्यक और अति महत्वपूर्ण है। ऐसा जीवन जीने के लिए प्रेरणा प्राप्त हो और अभिलाषा जागे उसे सच्चे अर्थों में सौभाग्यशाली और दूरदर्शी कहना चाहिए। ऐसा दिव्य जीवन जीने के लिए किसी को कपड़े रंगने-घर छोड़ने या भीख माँगने या वेश बदलने की जरूरत नहीं है। न सारे दिन जप तप व्रत स्नान, देव दर्शन, कथा कीर्तन में संलग्न रहने की जरूरत है। थोड़े समय आत्म-चिन्तन और ईश्वरीय प्रकाश की प्राप्ति के लिए उपासना करना उचित है। पर इसका प्रभाव तो इस कसौटी पर आँका जायगा कि अध्यात्मवाद के सिद्धान्तों और आदर्शों का किस सीमा तक हमारी विचारणा, आस्था और कार्य-पद्धति में कितना स्थान मिला ? शरीर और मन को सुख देने वाली तृष्णाओं से मन को मोड़ कर उन्हें आत्म कल्याण के प्रयोजनों में किस सीमा तक लगाया जा सका, इस मार्ग पर चलने वाले को आरम्भिक कदम [१] सादा जीवन [२] उच्च विचार की संगति मिलाते हुए चलना पड़ता है। विलास और आडम्बर की पूर्ति के लिए जो ढेरों समय और ढेरों पैसा लगाता रहता है उसे बचा कर ही आदर्शवादी प्रयोजनों के लिए अपनी क्षमता का एक अंश लगाया जा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकना संभव हो सकता है । जो जितना खर्चीला और आडम्बर पूर्ण जीवन क्रम चला रहा होगा उसकी उतनी ही आवश्यकताऐं-उलझनें तथा चिन्ताऐं तथा व्यस्तताऐं बढ़ेंगी इसलिए दिव्यत्व का आरम्भ मितव्ययता से किया जाता है । उच्च विचारों का सीधा सम्बन्ध सदाचार, नम्रता, सादगी और साधना से है । औरों से अधिक अपना प्रदर्शन करने की या सुख भोगने की लिप्सा को जो जितना घटाता चलेगा उसे अपने तथा अपने परिवार के निरर्थक खर्च और आडम्बर अनावश्यक लगेंगे । और आत्म कल्याण के लिए–लोक कल्याण के लिए अधिक समय, मन और शक्ति लगा सकना संभव हो जाता है । यह परिवर्तन जहाँ भी दिखाई दे वहाँ आध्यात्मिकता की प्रकाश की किरणें अवतरित होना आरंभ हो गई यह माना जा सकता है ।

उपयुक्त दो चरणों के अतिरिक्त आध्यात्मिक जीवन के अगले तीन चरण और हैं जो (३) मातृवत् पर दारेषु (४) पर द्रव्येषु लोष्टवत (५) आत्मवत् सर्व भूतेषु. के रूप में उठते हैं । यदि साहस पूर्वक इन्हें अपना लिया जाय तो इस यात्रा का आगामी क्रम आसानी से चल पड़ेगा । जितनी कठिनाई है वह उपरोक्त आरम्भिक पांच चरणों में ही है । स्त्रियों के प्रति पवित्रता की उच्च भावनाऐं रखना अध्यात्मवादी के लिए आवश्यक और स्वाभाविक है । नर और नारी में तत्वतः कोई अन्तर नहीं । दोनों की शारीरिक मानसिक बनावट में यत्किंचित ही अन्तर है । प्रजनन की आवश्यकता पड़ने पर काम क्रीड़ा की उपयोगिता हो सकती है । पर सामान्य समय में जिस प्रकार पुरुष-पुरुषों के प्रति नारी-नारियों के प्रति काम विचार मन में नहीं लाते उसी प्रकार नर और नारी में भी परस्पर स्वाभाविक साधना बनी रह सकती है । कामुक दृष्टि विशुद्ध रूप से एक मनोविकार है जो संभव असंभव का विचार छोड़कर उच्छृंखल मृगतृष्णा में अकारण मन को भटकाता और सारे चिन्तनतंत्र को अस्तव्यस्त एवं दूषित करके रख देता है । नर-नारी की और नारी नर की शारीरिक, मानसिक, आत्मिक सुन्दरता एवं महानता को देखें समझें और प्रसन्नता व्यक्त करें इसमें हर्ज नहीं । पर यदि कामुकता, उपभोग, जुगुप्सा जैसी शोषक एवं पतनोन्मुख दृष्टि से एक दूसरे को देखें तो वह दृष्टि दोष असंख्य मानसिक एवं सामाजिक उलझनें, विकृतियाँ उत्पन्न करेगा । नारी को आयु की दृष्टि से माता, बहिन और पुत्री की दृष्टि से देखना चाहिए । अपनी पत्नी को सखा सहचर, मित्र और भाई जैसे समता वर्ग में रखा जा सकता है । कामुकता की पाप-दृष्टि नितान्त अनावश्यक और अस्वाभाविक है । प्रजनन के लिए उपयुक्त अवसर पर कुछ समय के लिए अपने दाम्पत्य जीवन में थोड़ी आवश्यकता पड़ सकती है । उसके अतिरिक्त शेष सारा समय और सारा मन भिन्न लिंग वाले व्यक्ति के प्रति स्वाभाविकता और पवित्रता में ही ओत-प्रोत रहना चाहिए । यह दृष्टि शोधन ही सच्चे अर्थों में ब्रह्मचर्य है । इसका विवाहित, अविवाहित सभी पालन कर सकते हैं और अपने आत्मबल और ब्रह्मवर्चस्व को अभीष्ट मात्रा में बढ़ा सकते हैं । धन ठीकरी के समान व्यर्थ और अनुपयोगी मानना आध्यात्मिकता का चौथा चरण है । हम केवल श्रमअर्जित, ईमानदारी और उचित साधनों से कमाये हुए धन की ही इच्छा करें और वह जितना भी न्यूनाधिक कमाया जा सकता हो उतने में ही निर्वाह का बजट बनायें ।

आध्यात्मिकता का पांचवा चरण यह है कि हम अपने समान सब के दुख सुख को समझें । दूसरों के सुख में अपने सुख की और दूसरे के दुःख में दुःख की अनुभूति जोड़ें । अपना सुख बाँटने और दूसरों का दुःख बाँट लेने की आकांक्षा हमें वसुधैव कुटुम्बकम् के उच्च आत्म-स्तर तक पहुँचा देती है । पीड़ित मानवता की सेवा करने की इस स्थिति में उत्कट अभिलाषा जागती है और अपने चारों ओर बिखरे पड़े पिछड़ेपन, अज्ञान, अनाचार पाप और पतन को हटाकर उसके स्थान पर मानवीय देव आदर्शों की प्रतिष्ठा करने का उल्लास उमड़ता है । आत्मवत् सर्व भूतेषु की भावना से ओत-प्रोत मनुष्य जिस तरह अपने व्यक्तिगत कष्टों और अभावों को दूर करने के लिए प्रयत्नशील रहता है उसी तरह व्यापक क्षेत्र में मानवता पर लगे कलङ्क को धो डालने और धरती पर स्वर्ग अवतरण जैसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करने के लिए व्याकुल रहता है । और क्षुद्र स्वार्थों की कीचड़ में से निकल कर लोकमत के लिए अपने आपको समर्पित कर देता है । आत्मिक जीवन जीने वाले को उपर्युक्त पांच कदम उठाने का जैसे ही साहस हुआ कि उसकी अगली मंजिल सहज ही पूरी होने लगती है और आत्मा को परमात्मा के रूप में परिणित करने का प्रत्यक्ष आनन्द इसी जीवन में मिलने लगता है ।

——— **'आत्मा की पुकार अनसुनी न करें' पुस्तिका से**

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हर दिन को एक नया जन्म समझें और उसका सदुपयोग करें।

क्र० १२

हमारा कितना सौभाग्य है कि सुर दुर्लभ मनुष्य शरीर मिला और कितना दुर्भाग्य कि उसे पेट-प्रजनन की पशु प्रवृत्ति से ही नष्ट भ्रष्ट नहीं किया वरन् पाप और पतन का वह कलंक और ओढ़ लिया जो कीट पतंग रहते तो न ओढ़ना पड़ता।

जीवन के सदुपयोग की समस्या—हमारी सबसे बड़ी, सबसे महत्वपूर्ण और सबसे सारगर्भित समस्या है। दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता का तकाजा है कि उसे सुलझाया जाय। उसे उलझी हुई छोड़कर बालक्रीड़ा में दिन गुजारते रहना इतनी बड़ी भूल है कि जिसके लिए चिरकाल तक असीम पश्चाताप करने के अतिरिक्त और उपचार न रह जायगा।

शरीर और परिवार के निर्वाह भर के लिए ही अपने पास शक्ति सामर्थ्य हो सो बात नहीं है। वरन् बारीकी से सोचा जाय तो प्रतीत होगा कि उसके अतिरिक्त भी हमारे पास कितना समय, धन एवं बल शेष रह ही जाता है जिसे चाहें तो आत्मिक प्रयोजन की पूर्ति के लिए—ईश्वर की इच्छा पूरी करने के लिए—जीवन लक्ष्य की प्राप्ति के लिए नियोजित कर सकते हैं। बाधा इतनी ही है कि अज्ञान के आवरण ने हमें इस बुरी तरह जकड़ रखा है कि इन्द्रियों की वासना, मन की तृष्णा एवं कुटुम्बियों की अवाँछनीय मोह ममता के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही नहीं। औचित्य का तकाजा यह है कि हम निर्वाह और सामाजिक कर्त्तव्य पालन जितनी शक्ति शरीर और परिवार के लिए लगावें उन्हें उचित प्रगति करते रहने लायक बनाये रहें और शेष सामर्थ्य को जीवनोद्देश्य के लिए लगावें। जीवन को शरीर और आत्मा का सम्मिलित व्यवसाय माना जाना चाहिए और दोनों को उसका समान लाभ मिलना चाहिए। शरीर और उसका परिवार तो उपार्जन का सारा लाभ उठाता रहे और आत्मा के हाथ कुछ भी न लगे तो इसे अनीति ही कहा जायगा। विवेकशीलता इसमें है कि दोनों के हित का ध्यान रखा जाय। शरीर की लालसाओं और आवश्यकताओं को पूरा किया जाय पर आत्मा की भूख,शान्ति और प्रगति को सर्वथा उपेक्षित न छोड़ दिया जाय। हमें अपने अन्तः-करण में बैठे भगवान की भी आवाज सुननी चाहिए और उस निर्देश के लिए भी अपना कुछ कर्त्तव्य निर्धारित रखना चाहिए। ऐसा उभयपक्षी संतुलित जीवन ही सार्थक कहा जा सकता है। अन्यथा आत्मा के हितों को पद्दलित करते रहने और सारा मनोयोग काया माया पर ही निछावर कर देने की रीति-नीति अन्ततः मूर्खतापूर्ण सिद्ध होगी और मँहगी ही पड़ेगी।

आध्यात्मिक प्रगति के दो पक्ष हैं—(१) अपने दोष दुर्गुणों, दुष्प्रवृत्तियों, दुर्भावों, कुविचारों एवं कुसंस्कारों की खोजें और उनके निराकरण का प्रबल प्रयत्न करें। साथ ही गुण, कर्म, स्वभाव में उत्कृष्टता एवं आदर्श वादिता का अधिकाधिक समावेश करते हुए पूर्णता प्राप्त करने के लिए अग्रसर हों। (२) इस संसार को भगवान का विराट रूप मानें और उसे अधिक सुरभित, सुगंधित, सुविकसित बनाने के लिए—निर्वाह से बची हुई सारी सामर्थ्य लगायें। ईश्वर की पूजा प्रसन्नता का केन्द्र लोक मंगल के लिए नियोजित परमार्थ प्रयोजनों को ही मानें। और फैले हुए पिछड़ेपन, अज्ञान एवं अनाचार को हटाने के लिए जो कष्ट सहना पड़े उसे उच्चकोटि की तपश्चर्या मानें। इन दोनों पक्षों पर जितना ध्यान दिया जायगा और प्रयत्न किया जायगा उसी क्रम से आत्मिक प्रगति होती हुई और आत्म-शक्ति मिलती हुई तत्काल दिखाई देने लगेगी।

जीवन और मृत्यु को सहचर बनाकर चलने की भावना यदि मन में बनी रहे तो यह ध्यान बना रहेगा कि वर्तमान अवसर सदा ही न बना रहेगा। जो सुविधा आज मिली है उसका अधिक से अधिक सदुपयोग किया जाय। इसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक प्रयोग यह है कि—सवेरे आँख खुलते ही—कुछ क्षण बिस्तर पर पड़े हुए यह विचारें कि आज हमारा नया जन्म हुआ है और रात को सोते समय तक समाप्त हो जाने वाला है। इसलिए उस एक दिन को जीवन मान कर उसके प्रत्येक क्षण का सदुपयोग कर लिया जाय। हर दिन नया जन्म हर रात नई मौत, इस मंत्र को जपने की जरूरत नहीं—इसे हृदयंगम किया जाना चाहिए और इसी आधार पर दिनचर्या एवं मनोदिशा निर्धारित की जानी चाहिए।

समय ही सम्पत्ति है, उसके मूल्य पर ही प्रगति और समृद्धि खरीदी जाती है। हमें एक क्षण भी आलस्य प्रमाद में बर्बाद नहीं करना चाहिए वरन् ऐसी दिनचर्या बनानी चाहिए जिससे सारा समय पूरी तरह व्यस्त बना रहे। मनोयोग पूर्वक किया हुआ श्रम और व्यवस्थित रूप से नियोजित किया हुआ समय हमारे सामने अगणित ऋद्धि, सिद्धियां और सफलताऐं सहज ही प्रस्तुत करता है। किसी हुई दिन चर्या जिसमें समय की बर्बादी के लिए कोई गुंजाइश न हो और शरीर तथा आत्मा के स्वार्थों का ध्यान रखते हुए क्रम निर्धारित किया गया हो, वस्तुतः उच्चकोटि की बुद्धिमत्ता है।

दिन भर के क्रिया कलाप के ऊपर बारीकी से ध्यान रखा जाय कि सांसारिक कर्तव्यों से कुछ अपेक्षा तो नहीं हुई और मानसिक दृष्टि से दोष दुर्गुणों को हाथ पैर फैलाने का तो मौका नहीं मिल गया। क्रोध, आवेश, ईर्ष्या, द्वेष, छल, अनाचार के भाव जब भी मस्तिष्क में आवें विरोधी उत्कृष्ट विचारों से उन्हें भिड़ा देना चाहिए। यह भिड़न्त जब भी होगी कुविचार तत्काल भाग खड़े होंगे। वे तो तभी विकसित होते हैं जब उन्हें बेरोक टोक बढ़ने दिया जाता है। जिस प्रकार शत्रु के आक्रमण का प्रतिरोध करने के लिए सेना सदा तैयार रहती है उसी तरह हमें हर कुविचारों से लड़ने के लिए स्तर के सद्विचार तैयार रखने चाहिए ताकि दुर्भावनाओं का आक्रमण होते ही उन्हें लड़ पड़ने के लिए जुटाया जा सके। साथ ही सद्विचारों के कार्यान्वित होने के लिए अपनी दिनचर्या में जुड़ा रहने का भी अवसर देना चाहिए, ताकि सत्प्रवृत्तियाँ सक्रिय एवं अभ्यस्त होती चली जाँय। पूरा समय इसी प्रकार शारीरिक और मानसिक सतर्कता से बिताया जाय तो उस एक दिन के नये जन्म में आश्चर्यजनक आत्मशाँति एवं आत्मिक प्रगति परिलक्षित होगी।

रात को सोते समय दिन भर की गतिविधियों का लेखा जोखा लेना चाहिए और पिछले दिनों की तुलना में जो प्रगति हुई है उसके प्रति संतोष अनुभव करे। साथ ही यह भी देखे कि आज शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से क्या-क्या भूलें हुई हैं जो चूक हुई हैं उन्हें भविष्य में अधिक सतर्कता के साथ रोकने के संकल्प के अतिरिक्त कुछ प्रायश्चित भी करना चाहिए। गाल में चपत, उठक, बैठक, खड़े रहना, भोजन का कुछ अंश जुर्माने में कम कर देना आदि शारीरिक दण्ड यदि एकान्त में देते रहा जाय तो भविष्य में वैसा न करने की याद बनी रहती है और प्रायश्चित भी हो जाता है। उसके बाद शान्त चित्त से सांसारिक रागद्वेषों से छुटकारा पाकर निर्मल मन से नींद की गोद में जाते हुए अनुभव करना चाहिए कि हमने निर्मल मन से विदाई ली और एक दिन का जन्म सार्थक बना लिया।

इस क्रम से यदि नित्य हर नया दिन नया जन्म—हर रात नई मौत की भावना करते हुए दिन बिताये जायें तो जीवनोद्देश्य के लिये आशाजनक प्रगति होती चली जायगी। (१) दोष दुर्गुणों का निवारण और गुण, कर्म, स्वभाव से सत्प्रवृत्तियों का समावेश (२) कुत्साओं और कुण्ठाओं में डूबे हुए मानव समाज का पिछड़ापन दूर करने वाले लोक मंगल प्रयत्नों में अधिकाधिक तत्परता, इन दो लक्ष्यों की ओर हम जितना ध्यान देंगे, उतनी ही जीवन की सार्थकता अनुभव होती चली जायगी।

———

'जीवन श्रेष्ठ व सार्थक बने' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वाध्याय दैनिक जीवन की अनिवार्य आवश्यकता।

क्र० १३

मनुष्य का मन कोरे कागज या फोटोग्राफी की प्लेट की तरह है जो परिस्थितियाँ, घटनायें एवं विचारणायें सामने आती रहती हैं उन्हीं का प्रभाव अंकित होता चला जाता है और मनोभूमि वैसी ही बन जाती है। व्यक्ति स्वभावतः न तो बुद्धिमान है और न मूर्ख, न भला है—न बुरा। वस्तुतः वह बहुत ही संवेदनाशील प्राणी है। समीपवर्ती प्रभाव को ग्रहण करता है और जैसा कुछ वातावरण मस्तिष्क के सामने छाया रहता है उसी ढाँचे में ढलने लगता है। उसकी यही विशेषता परिस्थितियों की चपेट में आकर कभी अधः पतन का कारण बनती है कभी उत्थान का।

आगरा जिले के खंदौली गाँव के निकट शिकारियों ने भेड़िये मारे और उनकी माँद में एक छै वर्षीय बालक पाया। मादा भेड़िये ने कहीं से उठाये इस बच्चे को खाया नहीं वरन् उसे अपना दूध पिलाकर पाल लिया। जब यह बच्चा पकड़ा गया तो भेड़िये कि तरह चार पैर से चलता, बोलता और सिर्फ कच्चा मांस खाता था। सर्वत्र यही सिद्धान्त लागू होता है। अपनी मौलिक प्रतिभा लेकर तो कोई विरले ही जन्मते है आमतौर से सामने प्रस्तुत परिस्थितियां ही विचारों और आकांक्षाओं का सृजन करती हैं। उसी आधार पर व्यक्तित्व का एक कार्य क्रम ढलने लगता है। विचारों को उच्च स्तर पर ढालना मानवीय विकास की आधारभूत आवश्यकता है। प्राचीन काल में सुसम्पन्न व्यक्ति भी अपने बालकों को निविड़ वन प्रदेशों में ऋषियों के समीप गुरुकुलों में सुशिक्षण के लिए भेजते थे। यों पढ़ाई लिखाई के लिए नौकर, ट्युटर राजमहलों में भी रहते थे, रखे जा सकते थे पर परिष्कृत वातावरण में रहने के कारण मनोभूमि का लाभ उन महान् व्यक्तित्वों के सान्निध्य में ही मिल सकता था। इसलिये हर विवेकवान सत्संग का लाभ उठाने के लिए न केवल बच्चों को ऋषिकुलों में भेजता था वरन् स्वयं भी तीर्थ यात्रा, वनवास, वानप्रस्थ आदि के बहाने उस वातावरण में रहने का प्रयत्न करता था ताकि उस प्राण प्रवाह में अपने को प्रभावित कर सकना संभव हो सके।

व्यक्तित्व की उत्कृष्टता के लिए सब से बड़ी आवश्यकता उस विचारणा की है जो आदर्शवादिता से ओत-प्रोत होने के साथ-साथ हमारी रुचि और श्रद्धा के साथ जुड़ जाय। यह प्रयोजन दो प्रकार से पूरा हो सकता है। एक तो आदर्शवादी उच्च चरित्र महा मानवों का दीर्घ कालीन सान्निध्य, दूसरा उनके विचारों का अवगाहन व स्वाध्याय वर्तमान परिस्थितियो में पहला तरीका काफी कठिन है। एक तो तत्वदर्शी महामानवों का एक प्रकार से सर्वनाश हो चला। श्रेष्ठता का लवादा ओढ़े कुटिल, दिग्भ्रान्त और उलझे हुए लोग ही श्रद्धा की वेदी हथियाये बैठे हैं। उनके सान्निध्य में व्यक्ति कोई दिशा पाना तो दूर, उलटा भटक जाता है। इससे जो उपयुक्त हैं वे समाज की वर्तमान परिस्थितियों को सुधारने के लिए इतनी तत्परता एवं व्यस्तता के साथ लगे हुए हैं कि सुविधा पूर्वक लम्बा सत्संग दे सकना उनके लिये भी संभव नहीं, फिर जो सुनना चाहता है वही कहाँ खाली बैठा है। इसलिए जिन सौभाग्यशालियों को प्रामाणिक महापुरुषों का सान्निध्य जब कभी मिल जाय तब उतने में ही संतोष कर लेना पड़ेगा। दीर्घकालीन सत्संग की संभावनाऐं आज की स्थिति में कम ही हैं।

दूसरा मार्ग ही इन दिनों सुलभ है। स्वाध्याय के माध्यम से मस्तिष्क के सम्मुख वह वातावरण देर तक अच्छादित रखा जा सकता है जो हमें प्रखर और उत्कृष्ट जीवन जी सकने के लिए उपयुक्त प्रकाश दे सके। स्वाध्याय बौद्धिक भूख और आध्यात्मिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए हमें पेट को रोटी और तन को कपड़ा जुटाने से भी अधिक तत्परता के साथ प्रयत्नशील होना चाहिए। स्वाध्याय दैनिक नित्य कर्मों में शामिल रखा जाय। क्योंकि चारों ओर की परिस्थितियां जो निष्कर्ष निकालती हैं उनसे हमें निकृष्ट मान्यतायें और गतिविधियाँ अपनाने का ही प्रोत्साहन मिलता है। यदि इस दुष्प्रभाव की काट न की गई तो सामान्य मनोबल का व्यक्ति दुर्बुद्धि अपनाने और दुष्कर्म करने में ही लाभ देखने लगेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्नान करने, दाँत माजने, कपड़े धोने और झाड़ू लगाने की नित्य आवश्यकता इसलिए पड़ती है कि निरन्तर मलीनता की जो पर्त जमा होती रहती है, उसे जल्दी-जल्दी हटाये बिना स्वच्छता खतरे में पड़ जाती है । इसी प्रकार मन के ऊपर चारों ओर के गर्हित वातावरण का प्रभाव पड़ते रहने से जो मलीनता जमती है उसके परिष्कार का एक मात्र उपाय स्वाध्याय ही रह जाता है । जीवित या मृत महामानवों के विचारों चरित्रों का प्रभाव जब चाहे तब जितनी देर तक चाहें उतनी देर तक उनके साथ सामीप्य सान्निध्य का लाभ ले सकते हैं । उनका साहित्य हमें हर समय उपलब्ध रह सकता है । और अपनी सुविधानुसार चाहे जितना सम्बंध उसके साथ जुड़ा रखा जा सकता है । यह सम्बंध माता का दूध पीने का लाभ उठाने वाले बच्चे तथा रक्तदान प्राप्त करने वाले रोगी की तरह हर किसी को स्वाध्याय द्वारा समुचित लाभ उठाने का अवसर मिल सकता है । पुस्तकों का मूल्य स्वल्प होता है पर उनके द्वारा जो प्रभाव उपलब्ध किया जा सकता है उसे बहुमूल्य या अमूल्य ही मानना पड़ेगा ?

सत्साहित्य ने अगणित व्यक्तियों को ऊंचे उठने और आत्मबल सम्पन्न हो सकने का अवसर दिया है । भगवान श्री कृष्ण गीता का ज्ञान सुनाकर एक अर्जुन को ही लाभ दे सके पर उस महाग्रन्थ ने न्यूनाधिक मात्रा में उस समय से लेकर अब तक करोड़ों अरबों मनुष्यों को प्रकाश दिया है और उस प्रकाश के माध्यम से असंख्यों ने जीवन लक्ष्य प्राप्त करने में सफलता पाई है ! प्रेरक साहित्य सदा व्यक्तित्व, चरित्र, मनोबल और आत्म निर्माण में सहायता करता रहा है । इस प्रेरणा से प्रभावित अगणित व्यक्ति तुच्छता के बन्धनों को तोड़कर महानता वरण करने में समर्थ हुए हैं । अस्तु उपासना, पूजा, अर्चन, तप, व्रत, दान आदि के समकक्ष ही 'स्वाध्याय' को भी पुण्य प्रयोजनों में अति आदर पूर्वक सम्मिलित किया गया है । तत्वदर्शियों ने इस बात पर बहुत जोर दिया है कि मनुष्य को स्वध्याय बिना प्रमाद किये नित्य नियमित रूप से करना चाहिए ।

इन दिनों इस संदर्भ में एक चिन्ता की बात यह बन गई है कि रूढ़वादिता ने इस क्षेत्र में भी गहराई तक अड्डा जमा लिया है । सड़ी गली, अप्रासंगक और बेतुकी पौराणिक कहानियों की पुस्तकों को ही लोग धर्मग्रन्थ मान बैठे हैं और जो पुराना सो अच्छा की पृष्ठ भूमि में उन्हें ही रोज रोज दुहरा कर स्वाध्याय की लकीर पीटने लगे हैं ।

इस निरर्थक विडम्बना से भला किसका क्या लाभ हो सकता है ? स्वाध्याय के लिए वह चुना हुआ साहित्य ही उपयुक्त होगा जो व्यक्ति के गुण, कर्म, स्वभाव को परिष्कृत करने का व्यावहारिक मार्ग दर्शन करे और समाज में प्रस्तुत उलझनों को सुलझाने का बुद्धिसंगत समाधान प्रस्तुत करे । आज व्यक्ति और समाज की परिस्थितियां प्राचीन काल से भिन्न हैं, सो उनके समाधान भी युग के अनुरूप ही होने चाहिये । हर युग में स्थिति के अनुरूप मार्ग दर्शन करने के लिए विचारक, तत्वदर्शी, युगदृष्टा और देवदूत अवतरित होते रहे हैं । समय की भिन्नता के कारण को ध्यान में रखते हुए ही बार-बार और नये-नये संदेश लेकर आने वाले संदेश वाहकों की आवश्यकता पड़ती है । आज की परिस्थितियों के अनुरूप मार्ग दर्शन इस युग के ऋषि ही दे सकते हैं और स्वाध्याय के लिए वैसे ही साहित्य की उपयोगिता हो सकती है ।

कहना न होगा कि युग-निर्माण योजना ने प्राचीनतम् और नवीनतम का अनुपम सम्मिश्रण किया है । सृष्टि के आदिकाल से लेकर चले आ रहे सनातन धर्म सिद्धान्तों को आधुनिक बुद्धिवाद और विज्ञानवाद के साथ जोड़ कर वर्तमान परिस्थितियों के उपयुक्त ऐसे समाधान प्रस्तुत किये हैं जिन्हें विवेकवानों ने अद्भुत और अनुपम कहा है । स्वाध्याय के लिए यह सस्ता और छोटा दीखने वाला साहित्य वस्तुतः तथाकथित पोथी पत्रों से हजार गुना अधिक महत्वपूर्ण है । स्वाध्याय के लिए उपयुक्त साहित्य जिसने व्यक्ति और समाज के सर्वाङ्ग विकास को साङ्गो-पाङ्ग दिशाऐं प्रस्तुत की हों शायद ही अन्यत्र कहीं उपलब्ध है । जो कुछ सर्वश्रेष्ठ इस संसार में उपलब्ध है उन फूलों का सार—मधुर मधु ही इसे कहा जाय तो कुछ भी अत्युक्ति न होगी । उचित यही होगा कि हम दिग्भ्रान्त करने वाली विभिन्न पुस्तकें पढ़ने की अपेक्षा स्वाध्याय के लिये युग-निर्माण साहित्य चुनें और उसे पढ़ने का क्रम नित्यकर्म की तरह अपनी दिनचर्या में सम्मिलित करलें ।

स्वाध्याय में प्रमाद न करें' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपना महान महत्व समझें और अपने को सुधारें ।

क्र० १४

हमें दुनियांदारी का बहुत ज्ञान है पर अपने संबंध में एक प्रकार से अनजान ही बने हुए हैं । भूगोल, इतिहास, वाणिज्य, शिल्प, कला, विज्ञान, कानून लोक व्यवहार आदि के सम्बन्ध में हमने बहुत कुछ जाना सीखा है । उसके बल पर आजीविका कमाने और प्रतिष्ठा पाने में भी एक हद तक सफल हुए हैं । पर उस सबसे महत्व पूर्ण जानकारी से वंचित ही हैं, जिसके बिना यह सारा सीखा जाना और सिखाया जाना निरर्थक है । बाहर की जानकारी और चमक दमक के आकर्षण में हम अपने को ही भूल बैठे हैं ।

अपना मकान बन जाने में कितनी सुविधा होगी यह कल्पना तो है पर अपना व्यक्तित्व बन जाने से प्रगति की संभावनायें कितनी प्रशस्त हो जाती हैं यह पता ही नहीं । घर, कपड़े, बर्तन फर्नीचर, एवं शरीर की सफाई का महत्व तो मालूम है पर अन्तः करण की स्वच्छता के फलस्वरूप हम कितने श्रद्धा भाजन बनते हैं यह तथ्य सूझता ही नहीं । शरीर और मस्तिष्क के बलवान और सुखी बनने के लिए हर संभव उपाय करते हैं । पर आत्मबल, मनोबल, प्रतिभा, दूरदर्शिता, आदि की भी कुछ उपयोगिता है, यह बात सूझ नहीं पड़ती । तृष्णा और वासना की तृप्ति में जो अधिक सुख मिलता है उसके लिए मन बहुत ललचाता है और उसे प्राप्त करने का ताना बाना निरन्तर बुनता रहता है पर यह समझ में नहीं आता कि आत्म संतोष और आन्तरिक आनन्द जैसी कुछ दिव्य अनुभूतियाँ भी होती हैं और उनका भी अपना कुछ मूल्य होता है ।

अपना आपा सबसे महत्वपूर्ण है । बाहरी दुनियां में जो कुछ दीखता अनुभव होता है उसकी अनुभूतियाँ अपनी आन्तरिक स्थिति पर निर्भर हैं । सूर्य चमकता रहे पर अपनी आँखें न हों तो उसकी रोशनी से क्या लाभ मिलेगा ? अन्धे के लिए दिन और रात समान है । सूर्य का अस्तित्व उसे सुन्दर शोभा भरी वस्तुओं का दर्शन नहीं करा सकता है । जीभ में कोई बीमारी हो जाय तो बोलने और चखने में बहुत साधन उपलब्ध होने पर भी उससे क्या कुछ लाभ मिलेगा ? कान बहरे हो जायँ तो मधुर भाषण, संगीत आदि की परिस्थितियाँ संसार में भरी पूरी रहने पर भी वे अपने लिए समान ही हो गईं । अपना दिमाग खराब हो जाय तो अपने पराये सभी का व्यवहार बदलते देर न लगेगी । और जो उपलब्धियां आज हाथ बाँधे खड़ी रहती हैं उनमें से एक का भी अवसर न मिलेगा । शरीर चला जाय, प्राण निकल जायँ तो समझना चाहिये कि प्रलय हो गई, न कोई हमारा न हम किसी के । जिस पर, जिन पर अधिकार समझते थे वे सभी पराये हो जायेंगे । उनसे संबंध टूट जायगा और प्रस्तुत वसुधा के उपयोग करने की कोई गुंजाइश न रहेगी ।

जो कुछ संसार में है उसकी अनुभूति हम अपने ही माप दंड से करते हैं । गुरु ने युधिष्ठिर को भेजा कि नगर में जो बुरे आदमी रहते हैं उनका पता लगाकर लाओ । वे कई दिन घूमे और तलाश करते रहे पर उन्हें सबमें अच्छाइयां ही दीखीं और लौट कर गुरु को अपनी असफलता बताई । दूसरे दिन दुर्योधन भेजे गये उन्हें नगर के अच्छे आदमी ढूढने के लिये कहा गया । कई दिन की तलाश के बाद उनने यही सूचना दी कि इस नगर में एक भी भला आदमी नहीं रहता । वैसे उस नगर में दोनो ही तरह के लोग रहते थे पर अपने दृष्टिकोण के अनुरूप उपर्युक्त दोनों छात्रों को केवल एक ही प्रकार के लोग मिले । संस्कार जैसा भी कुछ भला बुरा दीखता है उसमें मूलतः अपना ही दृष्टिकोण काम करता है । यदि उसे सुधार लिया जाय तो विक्षोभ भरी परिस्थितियाँ संतोषजनक बन सकती हैं । हर व्यक्ति और हर परिस्थिति में कुछ उज्जवल पक्ष रहता है । यदि उसे ही देखा जाय तो हमें सर्वत्र शुभेच्छा और शिक्षा बिखरी दिखाई पड़ेगी । लोगो मे जो मिलता है वह ही पर्याप्त दीखेगा । और क्षोभ असंतोष व्यक्ति करने के स्थान पर उस स्वल्प दीखने वाले सहयाग की तोल बढ़ जायगी और जो कृतज्ञता से भरा हुआ शोभाग्यशाली रहेगा और जीवन को अनुभव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संसार में काँटे कंकड़ बहुत हैं उन सबको हटा सकना बहुत ही कठिन है। पर यह सरल है कि अपने पैसे से जूते पहनने और बिना काँटे कंकड़ों से कष्ट पाये निश्चिन्तता पूर्वक विचरण करें। सारी दुनियां को अपनी इच्छानुकूल चलाने वाला नहीं बनाया जा सकता पर अपने सोचने का ढंग ऊँचा उठा कर लोगों से बिना टकराए, सरलता पूर्वक अपने को बचाकर रखा जा सकता है और बिना टकराये वक्त गुजारा जा सकता है। सज्जनता के आगे दुर्जनों को भी नत मस्तक होना पड़ता है। कम से कम वे अपनी शाँति भंग कर सकने में तो सफल कदाचित ही हो पाते हैं।

बीमारियाँ बाहर से नहीं आतीं, हमारी आहार बिहार सम्बन्धी बुरी आदतों और प्रकृति के प्रतिकूल चलने से आती हैं। यदि संयमी व्यवस्थित और प्राकृतिक जीवन जिया जाय तो प्रकृति की गोद में स्वच्छन्द विचरने वाले दूसरे पशु पक्षियों की तरह हम भी पूर्ण स्वस्थता और दीर्घ जीवन का आनन्द लाभ कर सकते हैं। अपनी भूलें ही हमें बीमारियों की आग में घसीट कर ले जाती हैं और असह्य कष्ट सहने के लिए विवश करती हैं। अपने शत्रु तथा निंदक अधिक बनते जाते हों और मित्र तथा प्रशंसक घटते जा रहे हों तो समझना चाहिए कि इसमें केवल बाहर वालों का ही सारा दोष नहीं है। वस्तुतः अपने में कुछ ऐसी कमियां आ गई हैं जिनके कारण लोग दूर हटते, खिन्न होते और विरोधी बनते चले जा रहे हैं। विद्या से हम वंचित रह गए। शिक्षा भी नगण्य ही बनी रही उसमें परिस्थितियों का कम और अपने आलस्य, अनुत्साह का दोष अधिक है। अन्यथा थोड़ा-थोड़ा समय नियमित रूप से पढ़ने के लिए लगाकर उन सहस्रों विद्वानों की पंक्ति में बैठा जा सकता था जिनकी स्कूली शिक्षा नगण्य है पर अपने निरन्तर और नियमित अध्यवसाय से अपने ज्ञान अनुभव को पहाड़ की तरह ऊँचा उठा लिया। निर्धनता के लिए भाग्य को दोष देना बेकार है मितव्ययता, दूरदर्शिता बजट बनाकर खर्च करना और अर्थ श्रोतों से संबन्ध रखने वालों के साथ उदार मधुर संबन्ध रखने पर कोई भी व्यक्ति आर्थिक उन्नति की संभावनायें बढ़ा सकता है। जिसे कठोर परिश्रम से प्यार है वह दरिद्री क्यों रहेगा ? जो हर काम को मनोयोग पूर्वक सोच समझ कर और प्रतिष्ठा का प्रश्न बना कर अच्छे से अच्छे ढंग से करता है उसे घाटा क्यों पड़ेगा और तंगी क्यों भुगतनी पड़ेगी ?

चिन्ता, निराशा, भय, शोक, आशंका, उद्वेग, आवेश आदि मनोविकारों में जकड़े हुए व्यक्ति निरंतर उदास, दुःखी, क्षुब्ध और रोते हुए दिखाई पड़ेंगे। पर जिसको यह मालूम है कि विवेक के आधार पर हर स्थिति में मस्तिष्क को संतुलित रखा जा सकता है और प्रतिकूलताओं से खिलाड़ियों की तरह हल्के मनसे लड़ा जा सकता है उसे हर सम्भावना और घटना बहुत स्वल्प महत्व की संसार में चलने वाले ढर्रे की तरह सामान्य प्रवृत्ति मात्र दीखती है। नाटक में विभिन्न अभिनय करने वाले नर जिस प्रकार खेल में प्रस्तुत किए जाने वाले हर्ष शोक के प्रदर्शनों से प्रभावित नहीं होते उसी प्रकार इस संसार की रंगस्थली में जो उतार-चढ़ाव आते हैं, उनमें कोई भी संतुलित मस्तिष्क वाला व्यक्ति अप्रभावित रह सकता है।

हमें बाहर कम और भीतर अधिक देखना चाहिए। दूसरों की समीक्षा कम और अपनी अधिक करनी चाहिए। दुनियां की गतिविधियों को पढ़ने समझने से भी ज्यादा अपनी आन्तरिक स्थिति और प्रकृति को समझना चाहिए। परिवार और संसार को सुधारने से ज्यादा अपने सुधार पर ध्यान देना चाहिए। आत्म चिन्तन, आत्मनिरीक्षण द्वारा अपना अन्वेषण करें और देखे कि अपने गुण, कर्म स्वभाव में क्या दोष दुर्गुण हैं जिनके कारण हमें पग-पग पर व्याधियों का सामना करना पड़ रहा है। प्रगति के पथ में बढ़ चलने के लिए जिस मनस्विता, प्रतिभा और चरित्र निष्ठा की आवश्यकता है उसमें जितनी कमी हो उसे पूरा करने के लिए क्रमबद्ध योजना बनानी चाहिए। अपने जीवनोद्देश्य को समझे। मनुष्य जन्म के पीछे छिपे ईश्वर के प्रयोजन को समझे। तदनुरूप विचारणा बदलने और तदनुकूल कार्य पद्धति अपनाने का साहस उत्पन्न कर सके तो समझना चाहिए कि आत्म बोध का लाभ मिला और आत्म-कल्याण का मार्ग प्रशस्त हो गया।

———

—'पहले अपने को सुधारें' पुस्तिका से।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर्त्तव्य परायणता—मानव-जीवन की आधार शिला

क्र० १५

आकाश में अधर लटके हुए ग्रह-नक्षत्र एक दूसरे की आकर्षण शक्ति के बल पर खिंचे हुए टँग रहे हैं। यदि यह आकर्षण शिथिल हो जाय तो अन्तरिक्ष के शोभायमान यह सितारे अपनी कक्षा में च्युत होकर किसी दूसरे ग्रह से जा टकरायें या अनन्त आकाश की किसी दशा में डूबकर विलीन हो जाँय। इन्हें अतीत काल से यथास्थान स्थिर रखने वाली और अपनी निर्धारित क्रिया प्रणाली में नियोजित किये रहने वाली शक्ति एक ही है—'ग्रहों की पारस्परिक आकर्षण क्षमता'। इसके बिना किसी नक्षत्र का अस्तित्व एवं क्रिया-कलाप एक क्षण भी स्थिर नहीं रह सकता।

मनुष्य जीवन की स्थिरता एवं प्रगति की आधार शिला है, उसकी कर्त्तव्य परायणता। यदि हम अपनी जिम्मेदारियों को छोड़ दें और निर्धारित कर्त्तव्यों की उपेक्षा करें तो फिर ऐसा गतिरोध उत्पन्न हो जाय कि प्रगति एवं उपलब्धियों की बात तो दूर मनुष्य की तरह जीवनयापन कर सकना भी सम्भव न रहें।

जीवन की हर विभूति कर्त्तव्य परायणता पर निर्भर है। हर उपलब्धि की स्थिरता एवं सुरक्षा, कर्त्तव्य-निष्ठा पर ही निर्भर है। हमें बहुमूल्य शरीर मिला है। उसे निरोग, परिपुष्ट एवं दीर्घजीवी तभी बनाया जा सकता है जब शौच, स्नान, स्वच्छता, कठोर श्रम, समय का पालन, आहार की सुव्यवस्था, इन्द्रिय संयम, विश्वास आदि की जिम्मेदारियों को ठीक तरह निबाहा जाय। मन की प्रखरता एवं समर्थता इस बात पर निर्भर है कि चिन्ता, शोक, निराशा, भय, क्रोध, आवेश आदि से उसे बचाये रखने और उत्साह, उल्लास, धैर्य, साहस, सन्तोष, विश्वास, संतुलन, स्थिरता, एकाग्रता जैसे सद्गुणों से सुसज्जित रखा जाय। यदि मन को वैसे ही जंगली घास-फूस और झाड़-झङ्काड़ की तरह चाहे जिस दिशा में बढ़ने दिया जाय तो वह आप ही आप अपने लिए सबसे बड़ा शत्रु सिद्ध होगा। मन को साधने और सुसंस्कृत बनाने की जिम्मेदारी उस प्रत्येक व्यक्ति की है, जिसे मानसिक क्षमता का वरदान मिला है।

परिवार से जीवन में बहुत सुविधा और सुव्यवस्था रहती है। पर वे उपलब्धियाँ केवल उन्हीं को प्राप्त होती हैं, जो परिवार के हर सदस्य के साथ अपनी जिम्मेदारियों को पूरी तत्परता, सावधानी और ईमानदारी के साथ निबाहते हैं। स्त्री केवल सेवा के लिए नहीं मिली है। उसके विकास, सुविधा, सन्तोष एवं स्वास्थ्य की हर आवश्यकता को पूरा करना भी कर्त्तव्य है। गाय उसी को दूध देगी, जो भरपेट चारा खिलायेगा। दाम्पत्य-जीवन का आनन्द उसे मिलेगा, जो अपना परिपूर्ण कर्त्तव्य पालन करते हुए उसका हृदय जीत लेगा। बच्चे उसी के सुसंस्कृत और सुविकसित होंगे, जो उन्हें प्यार, समय और सहयोग देकर विकासोन्मुख एवं सुसंस्कृत बनाने को निरन्तर तत्पर रहेगा। माता-पिता एवं गुरुजनों का वात्सल्य एवं आशीर्वाद उसे मिलेगा, जो उनकी सुविधा तथा इज्जत में कमी न आने देने का शक्ति भर प्रयत्न करेगा। भाई और बहिनों का अनन्त प्रेम और सहकार पाने की आशा उन्हें ही करनी चाहिये जो उनके लिये जान देता और भरपूर प्यार करता है। परिवार का आनन्द केवल कर्त्तव्यपरायण ही लेते हैं। इसके विपरीत जिन्होंने सुविधायें पाने का अधिकार तो जाना, पर कर्त्तव्य पालन की शर्त भूल गए, उनके लिए घर और नरक में कोई अन्तर नहीं रहेगा। मनोमालिन्य और कलह से घर का वातावरण विषाक्त बना रहेगा। न पत्नी जीवन संगिनी बनकर रहेगी, न बच्चे आज्ञानुवर्ती होंगे। माता-पिता का असन्तोष और भाई-बहिनों का द्वेष घर को मरघट बनाए रहेंगे। परिवार स्वर्ग उनके लिए है, जो पग-पग पर अपनी जिम्मेदारियाँ निबाहने में साथियों की कमियों सहन करने में तत्पर हों। नरक उनके लिए है, जो घर वालों से बड़ी-बड़ी आशायें रखते हैं, पर अपनी जिम्मेदारियाँ की ओर से आँखें मूँद बैठे हैं।

धन सबको अच्छा लगता है, उसे पाना और बढ़ाना सभी चाहते हैं पर कठोर श्रम, सतर्क जागरुकता, क्रमबद्ध सुव्यवस्था, हिसाब की स्वच्छता और मिलनसारी, ईमानदारी के गुण जिनमें हैं, उचित रीति से स्थिर सम्पदा वे ही कमा सकते हैं। उपार्जन, पुरुषार्थ और प्रतिभा पर निर्भर है। इन दोनों गुणों को बढ़ाते रहने की जिम्मेदारी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिसने समझी और उसके लिये सतत् प्रयत्न किया, वह सम्पन्नता का अधिकारी बना। जिसने मितव्ययता, बजट, हिसाब, धूर्तों से सतर्कता, सुरक्षा की सामर्थ्य, सदुपयोग की योजना बनाकर पैसा खर्च किया, वह यशस्वी हुआ और कमाने की तरह खर्च का आनन्द लेने का सौभाग्य भी प्राप्त किया। धन आकाश से नहीं बरसता और न जमीन में से निकलता है। चोरी चांडाली से जो धन आता है, वह हाथ-पांव चलाकर बारूद की तरह 'भक्क' से उड़ जाता है। उससे किसी को न शान्ति मिलती है, न आनन्द आता है। सम्पदा और सम्पत्ति के उपार्जन एवं उपयोग के साथ अनेक उत्तरदायित्व जुड़े हुए हैं, जो उन्हें निबाहना जानता है, उसी को सार्थक सम्पन्नता का लाभ मिलता है।

गैर जिम्मेदार, लापरवाह और अपने कर्त्तव्यों की उपेक्षा करने वाले अपना और सम्बन्धित व्यक्तियों का केवल अहित ही करते हैं। कर्मचारी जो निरन्तर अपनी जिम्मेदारियों की उपेक्षा किया करता है, मालिक के लिये केवल घाटा ही दे सकता है और दुत्कार का भाजन ही बन सकता है। चोर और चालाक होते हुए भी तत्पर व्यक्ति लाभदायक रहता है, किन्तु ईमानदार और भला व्यक्ति होते हुए भी लापरवाही और गैर जिम्मेदारी का व्यवहार करने वाला अधिक हानिकारक सिद्ध होता है। बेईमान नौकर भी मालिक की हानि करते हैं पर गैरजिम्मेदार तो जहां रहेंगे वहां का पट्टाढार करके रहेंगे।

महत्त्वपूर्ण कार्य सदा उन्हीं के द्वारा सम्पन्न होते हैं, जो कर्त्तव्य पालन को प्राणों से भी अधिक प्यार करते हैं। सैनिक का सबसे बड़ा गुण अनुशासन और अपने महान् उत्तरदायित्व को शानदार ढङ्ग से निर्वाह कर देना ही तो है। सन्त, ब्राह्मण पुरोहित, नेता और प्रवचनकर्त्ता अपनी जिम्मेदारियों के प्रति निष्ठावान् रहें तो मानव जाति का हित साधन कर सकते हैं।

शासन तन्त्र की गैर जिम्मेदारी ने इस देश को कितनी क्षति पहुँचाई है, उसका लेखा-जोखा लिया जाय तो वह अकाल, बाढ़, भूकम्प एवं दैवी प्रकोप से उत्पन्न होने वाली समस्त क्षति की अपेक्षा कई गुना संकट उत्पन्न करने वाली सिद्ध होगा। लाल फीताशाही, रिश्वत, कामचोरी, बेगार भुगतने और टालने की वृत्ति आदि दोषों ने शासनतन्त्र को लुंज-पुंज करके रख दिया है। इस गैरजिम्मेदारी ने अराजकता से भी बढ़कर क्षति पहुँचाई है। यदि हमारे शासकीय कार्यकर्त्ता अपने-अपने कर्त्तव्यों का पूरी ईमानदारी और जिम्मेदारी से पालन करें तो देश का कायाकल्प होने में देर न लगे।

समाज के सदस्य—राष्ट्र का नागरिक होना भी मानवीय उत्तरदायित्वों से लदा हुआ है। अपनी सुविधा भी उसी सीमा तक चाहे जिससे दूसरों की सुविधा में व्यवधान उत्पन्न न हों यह हर किसी की नैतिक जिम्मेदारी है। सड़कों पर केले और नारङ्गी के छिलके फेंककर हम दूसरों को फिसल कर गिरने की कठिनाई उत्पन्न करते हैं। बाईं ओर रहने की अपेक्षा सारी सड़क को घेरकर चलना, सड़क और गलियों में यों ही घर का कूड़ा फेंक देना, बच्चों का नालियों पर टट्टी करना, बहुत रात गये तक लाउडस्पीकर चलाना, सार्वजनिक स्थानों को घेरकर बैठ जाना या गन्दा करना. नियत समय पर वचन का पालन न करना आदि ऐसी बातें हैं, जो देखने में छोटी लगती हैं पर इन्हीं से पारस्परिक सद्व्यवहारों में भारी क्षति पहुँचती है। सभ्य समाज का हर नागरिक अपनी जिम्मेदारी को समझता है और नैतिक सामाजिक एवं राष्ट्रीय जिम्मेदारियों के प्रति सजग रहकर अपनी और अपने देश की प्रतिष्ठा बढ़ाता है।

अपने समाज के प्रति हर व्यक्ति की जिम्मेदारी है। हम समाज के एक सदस्य हैं। समाज का वातावरण हमें अतिशय प्रभावित करता है। वैयक्तिक और सामूहिक प्रगति का द्वार तब खुलता है, जब लोग अपने शरीर और परिवार की तरह सामाजिक सुव्यवस्था और उत्कर्ष का समुचित ध्यान रखें और उसके लिये कष्ट सहने और त्याग करने को तैयार रहें। सामूहिक उत्कर्ष में जो जितनी रुचि लेता है और लोक-मङ्गल के लिये जो जितना त्याग प्रस्तुत करता है, वह उतना ही बड़ा महामानव गिना जाता है।

आत्मा के प्रति हमारी जिम्मेदारी है, ईश्वर के प्रति भी। उन्हीं के कारण हमारा अस्तित्व है। आवश्यक है कि हम आत्मा की आवाज सुनें और परमात्मा द्वारा निर्धारित कर्त्तव्यों का पालन करते हुए मानव जीवन को सार्थक बनाने के लिये प्रयत्नशील रहें। —**'जो करें मन लगाकर करें' पुस्तिका से।**

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

असत्य व्यवहार–सद्भावना और सामाजिकता पर कुठाराघात

क्र० १६

भीतर और बाहर की एकता जिसे सत्य के नाम से पुकारा जाता है—मनुष्यता का सर्वप्रथम गुण है। हम जैसे हैं वैसा ही दूसरों के सामने अपने को प्रकट करें, जो मन में है वही वाणी से प्रकट करें इस सच्चाई से अन्तरात्मा की निर्मलता बनी रहती है और चित्त प्रफुल्ल रहता है। इस प्रकार के शुद्ध अन्तःकरण में ही शान्ति रहती है और ईश्वरीय प्रकाश की किरणों का उद्भव होता है।

हम वस्तुतः जैसे हैं उससे भिन्न प्रकार का घोषित करें तो यह लोगों के साथ धोखा करना है। हम एक दूसरे पर सहज विश्वास करें तो ही पारस्परिक सद्भावना से रह सकते हैं। समाज की सारी व्यवस्था एक दूसरे के विश्वास पर चल रही हैं। यह विश्वास नष्ट हो जाय तो न तो एक दूसरे पर भरोसा करेंगे और न समाज व्यवहार स्थिर रखा जा सकेगा। प्रेम, मित्रता, सहयोग, सहायता का आधार सज्जनता है। जिसे हम भला समझते हैं उसी से स्थिर सम्बन्ध बनाते हैं और उसी से कोई भरोसे का व्यवहार करते हैं, सज्जनता की परख यह है कि व्यक्ति अपनी असलियत यथावत प्रकट करता रहता है या नहीं। भले ही किसी ने अपनी शेखी जताने के लिए, रौब जमाने के लिये, बड़प्पन दिखाने के लिए बात बढ़ा चढ़ा कर कही हो, लोग उसके बारे में झूठा होने की मान्यता बना लेंगे और फिर कभी महत्व पूर्ण प्रसङ्ग में भी उसका भरोसा न करेंगे असलियत छिपती नहीं वह आज नहीं तो कल प्रकट होकर रहती है। झूठ में एक बड़ी कमजोरी है कि वह थोड़े समय तक प्रभावित किये रह सकता है वस्तु स्थिति देर सबेर में प्रकट होकर रहती है। तब इस असत्यभाषी को अप्रामाणिक और अविश्वस्त जान लिया जाता है। और उसकी सही बातें भी आशङ्का की दृष्टि से देखी और संदिग्ध मानी जाती हैं।

विश्वास खो बैठना संदिग्ध एवं अप्रामाणिक रहना मनुष्य का अशोभनीय पतन है। प्रतिष्ठा उसी की है जिसका विश्वास किया जाता है। जिसका विश्वास उठ गया जिसे अप्रामाणिक गिन लिया गया और जिसे दूसरों को भ्रम में डालने वाला मान लिया गया उसकी सामाजिक इज्जत चली गई ही मानी जाएगी। छल चाहे पैसा कमाने के रूप में किया गया हो या भ्रम में डाल कर किसी गलत निष्कर्ष पर पहुँचाने के लिए दोनों ही समान रूप से निन्दनीय हैं ठगी निष्कृष्ट स्तर का अनाचार है। चोर, उठाईगीर भी आकस्मिक लाभ दाव लगाने में दूसरे की लापरवाही और अपनी चतुरता से प्राप्त करते हैं। किसी को विश्वास दिलाकर झूठे सिद्ध नहीं होते। दूसरे प्रकार के जुआरी, लुटेरे, आक्रमण-कारी झगड़ालू को जो करना होता है अपना समझ और जता कर करते हैं, जो भरोसा कुछ दिलाता है और करता कुछ है बताता कुछ है और होता कुछ है उसे तो ऐसा कायर कहा जायगा जिसने दूसरे की भलमनसाहत का अनुचित लाभ उठाया। यदि वह पहले ही झूठ मान बैठता या बात को संदेह की दृष्टि से देखता और भरोसा न करता तो सम्भवतः वह ठगो में न आता पर उसकी सज्जनता ही कहिये कि आदमी को आदमी मानकर उसकी इन्सानियत पर भरोसा किया। इस प्रकार ठगा जाने वाला जितना नुकसान उठाता है ठगने वाला उससे अधिक घाटे में रहता है क्योंकि ठगे जाने वाले ने पैसे की या दूसरी तरह से हानि उठाई होगी जो सहज ही कुछ दिनों में पूरी की जा सकती है पर जिसने असत्य व्यवहार से अपना विश्वास खो दिया वह उस व्यक्ति की दृष्टि में तथा दूसरे जानकारों की दृष्टि में आजन्म अविश्वस्त रहेगा और कभी किसी की सच्ची घनिष्टता, आत्मीयता, मैत्री न प्राप्त कर सकेगा। असत्य व्यवहार से व्यक्ति की धूर्तता सिद्ध होती है और धूर्त से कोई मतलब के लिये ऊपरी मन से चापलूसी भले ही करे पर अन्तःकरण से कोई उसकी प्रामाणिकता स्वीकार न करेगा और न उसे गहरा मित्र बनायेगा। यह क्षति इतनी बड़ी है जिसकी पूर्ति आसानी से नहीं हो सकती।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूसरों को धोखा देना एक प्रकार से अपने आप को ही धोखा देना है, अन्तरात्मा इस गिरावट को स्वीकार करती है और निरन्तर धिक्कारती है । जिसमें अपनी वस्तुस्थिति तक प्रकट करने का साहस नहीं होता उस कायर का आत्मबल कहाँ टिकेगा । बहादुरी यहाँ से शुरू होती है कि व्यक्ति दूसरों से बिना डरे अपनी स्थिति ज्यों की त्यों प्रकट कर दे और फिर यथार्थता के कारण जो भी स्थिति सामने आये उसे सहन करे । वस्तुस्थिति के भिन्न बात बताकर यदि दूसरों को अन्धेरे में रखा और धोखेबाजी के फलस्वरूप कुछ लाभ उठा लिया तो यह प्रकारान्तर से मित्र बनकर विश्वास अर्जित करने और दूसरे क्षण उसकी पीठ में छुरा मारने की तरह विश्वासघात करके यदि कुछ कमा लिया जाय तो इस असत्य भाषण को कोई कमाई करने की कला नहीं मान लेना चाहिए । यह तो लुटेरेपन की तरह एक लौकिक अपराध ही कहा जायगा । ऐसी रीति-नीति अपनाने वालों को चतुरों की नहीं, अपराधियों की पंक्तियों में ही खड़ा किया जायगा ।

असत्य व्यवहार एवम् असत्य भाषण करना असत्य विश्वास दिलाना अपनी मान्यता के विपरीत कुछ का कुछ बता देना अपनी स्थिति को छिपाकर दूसरी तरह की प्रकट करना अपने इरादों को छिपाना यह सब असत्य भाषण के अन्तर्गत ही आता है । केवल झूठ बोलना ही असत्य नहीं है, अन्य प्रकार से अपने द्वारा किसी को भ्रम में डाल देना यह सारा क्रियाकलाप असत्य की परिधि में आता है । उसे चाहें तो दूसरे शब्दों में छल या ठगी भी कहते हैं । भले ही किसी का पैसा न ठगा गया हो पर विश्वास को ठग लेना भी कुछ कम पाप या अपराध नहीं है ।

असत्य को पातकों में मूर्धन्य माना गया है और हर कर्तव्य-निष्ठ नागरिक से आशा की गई है कि वह सत्य का ही अवलम्बन करे । यह मानवीय कर्तव्य का शुभारम्भ है कि हम परस्पर एक दूसरे को सही ही जानकारी दें और उचित ही विश्वास दिलायें । इसी आधार पर एक दूसरे पर भरोसा कर सकेगा और पारस्परिक सहयोग की उस शृङ्खला को अग्रगामी बना सकेगा जिस पर कि मानवीय प्रगति तथा समाज व्यवस्था पूर्णतया अवलम्बित है । यदि हम एक दूसरे को गलत जानकारी देने की रीति-नीति अपना लें तो फिर कोई किसी पर क्या और क्यों विश्वास करेगा । परस्पर सन्देह, आशंका, अविश्वास और प्रवंचना की बात ही सोचते रहें तो न सहयोग देते बनेगा न लेते । इस स्थिति में प्रेम और मैत्री नाम के अन्तरंग में पुलकन और उल्लास भरने वाले तत्वों का पनप सकना भी सम्भव न रहेगा । आशंका का आतंक हर बात में हर व्यक्ति के प्रति सन्देह और अविश्वास करने के लिए प्रेरित करेगा । उन परिस्थितियों में श्रद्धा भावना कौन किस पर आरोपित कर सकेगा । सज्जनता का व्यवहार करते हुए ठगे जाने का सन्देह यदि मन में बना रहा तो सभी में घृणा और धूर्तता की गन्ध आयेगी तब कोई किसी को अपना कैसे समझेगा और कैसे उसकीओर से निश्चिन्त रह सकेगा तब किसी को किसी से कुछ आशा भी न रहेगी । वचन का पालन और विश्वास जब मानवीय आचार का अंग ही नहीं रह गया तब फिर मनुष्य अपने को एकाकी ही अनुभव करेगा और यह समझेगा कि वह धोखे-बाज सियारों और भेड़ियों के बीच किसी प्रकार निर्वाह मात्र रह रहा है ।

दाम्पत्य जीवन से लेकर लेन-देन के व्यवसाय-व्यापार तक हर व्यवस्था के पीछे कुछ सुनिश्चित आश्वासनों को आधार माना जाता है । यदि उनकी आधारशिला हिल जाय, एक दूसरे को झूठा, ठग, जालसाज और विश्वासघाती जान बैठें तो परस्पर निर्वाह कैसे होगा और सहयोग की गाड़ी के पहिये साथ-साथ कैसे लुढ़केंगे ? एक झूठा व्यक्ति अपने दुर्व्यवहार से अनेकों को आतङ्कित एवम् आशंकित करता है इससे व्यापक क्षेत्र में अनिश्चितता फैलती है झूठ को इसीलिये सबसे बड़ा पातक माना गया है कि इससे आत्मा अपनी दृष्टि में आप पतित होती है । असत्य से दूषित व्यक्तित्व बनता है और मनोविज्ञान की दृष्टि में दुराव के कारण अगणित शारीरिक मानसिक रोग उत्पन्न होते हैं, परस्पर अविश्वास उत्पन्न होते हैं, परस्पर अविश्वास उत्पन्न होने के अतिरिक्त समाज व्यवस्था की नींव हिलती है जिसकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है । असत्य का अवलम्बन हम हँसी मजाक में भी न करें यही उचित है ।

'जीतता है सत्य हो, असत्य नहीं' पुस्तिका से ।

—※—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बेईमानी का नहीं, ईमानदारी का मार्ग अपनायें

क्र० १७

लगता ऐसा है कि जल्दी और अधिक कमाने के लिए बेईमानी का प्रयोग करना आवश्यक है। क्योंकि धनवान् लोगों में से अधिकांश ऐसे दीखते हैं, जिनके क्रिया-कलाप में बेईमानी का पुट रहता है। ईमानदार लोगों में से बहुत करके गरीब दीखते हैं, इसलिए सामान्य बुद्धि से यही प्रतीत होता है कि हम भी ईमानदार रहेंगे तो गरीब बन जायेंगे। चूँकि इन दिनों धन की प्रमुखता है। धन के आधार पर ही अधिक सुविधा-साधन और सफलता, सम्मान की उपलब्धि होती है। इसलिए मोटी बुद्धि से स्थिति का अवलोकन करने वाले और बहुसंख्यक जिस रास्ते चलें, उसी पर चलने वाले लोग आमतौर से उसी ढर्रे को अपना लेते हैं, जो पास-पड़ौस के लोग अपनाते दीखते हैं। आज की व्यापक क्षेत्र में फैली हुई बेईमानी का यही प्रधान कारण है।

वस्तुस्थिति को बारीकी से तलाश करने पर बुद्धि-भ्रम हो जाना स्वाभाविक है। बेईमानी की गरिमा स्वीकार करके लोग बुद्धि भ्रम से ही ग्रस्त हुए हैं। वास्तविकता वैसी है नहीं। बेईमानी से धन नहीं कमाया जा सकता। कमा लिया जाय तो स्थिर नहीं रखा जा सकता। लोग जिन गुणों से कमाते हैं, वे दूसरे ही हैं। बेईमानी की आड़ में कुछ अनुपयुक्त लाभ प्राप्त कर लिया जाय तो इसका अर्थ यह नहीं हो सकता कि उसका परिणाम लाभ दायक होता है। साहस, परिश्रम, सूझ-बूझ, मधुर भाषण, व्यवस्था आदि वे गुण हैं, जो उपार्जन करते हैं। बेईमानी तो अपयश, अविश्वास, घृणा, असहयोग, राजदण्ड, आत्म-ग्लानि आदि दुष्परिणाम ही उत्पन्न करती है। वस्तुतः लोग सद्गुणों के आधार पर कमाते हैं। बेईमानी का तात्पर्य है दूसरों को धोखा देना, यह तभी सम्भव है जब उस पर ईमानदारी का आवरण चढ़ा हो। किसी को ठगा तभी जा सकता है, जब उसे अपनी ईमानदारी एवं विश्वसनीयता के बारे में आश्वत कर दिया जाय। यदि किसी को यह शक हो जाय कि हमारे साथ बेईमानी करने के लिए ताना बाना बुना जा रहा है तो वह ठगाई में न आयेगा और चालाकी से मिलने वाला लाभ न मिल सकेगा। बेईमानी तभी लाभदायक हो सकती है, जब वह ईमानदारी की आड़ में भली प्रकार छिपा ली जाय। असलियत जैसे ही प्रकट हुई, बेईमानी करने वाला न केवल उस समय के लिए वरन् सदा के लिए उन लोगों से अपना विश्वास खो बैठता है और लाभ कमाने के स्थान पर उल्टा घाटा उठाता है।

बेईमानी का प्रतिफल घृणा, अविश्वास, असहयोग, राजदण्ड और आत्मदण्ड हैं, उसमें उपार्जन की कोई क्षमता नहीं। उपार्जन तो सद्गुण करते हैं। उन्हीं में उत्पादन तत्वों का समावेश है। संसार में बड़े काम, बड़े व्यापार, बड़े आयोजन ईमानदारी के आधार पर जमे, बढ़े और सफल हुए हैं। जिसने अपनी विश्वस्तता का सिक्का दूसरों पर जमा दिया, अच्छी, सही, खरी चीजें उचित मूल्य पर दीं और व्यवहार में प्रमाणिकता सिद्ध कर दी, लोग उस पर मुग्ध हो गए और सदा-सर्वदा के लिए उसके ग्राहक, प्रशंसक एवं सहयोगी बन गए। उन्नति का रहस्य यही है। जिसकी प्रामाणिकता है, उसका भविष्य उज्ज्वल है। किन्तु जो अपनी मूर्खता के कारण बदनाम हो गया उसका ईश्वर ही रक्षक है। आज के मित्र, कल के दुश्मन बनेंगे, कल के मित्र परसों घृणा करने लगेंगे और अन्ततः उसका कोई सच्चा सहयोगी न रह जायेगा। स्वार्थ के लिए चापलूसी करने वाले भी आड़े वक्त काम न आयेंगे। विश्वास करके कोई जोखिम उठाने के लिए वे 'चापलूस' मित्र भी समय पड़ने पर तैयार नहीं होते।

हमें यह भ्रम निकाल ही देना चाहिए कि बेईमानी कुछ कमा सकती है। वह शराब की तरह उत्तेजना मात्र है, जिससे ठगने वाला और ठगा जाने वाला दोनों बुद्धि भ्रम में ग्रस्त हो जाते हैं। नशा उतरने पर नशेबाज की जो खस्ता हालत होती है, वही पोल खुलने पर बेईमानी की होती है। उसका न कारोबार रहता है, न कोई ग्राहक सहयोगी। दूध में पानी और घी में बेजीटेबिल मिलाने वाला तभी कमा सकता है जब वह कसम खा-खाकर अपनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ईमानदारी और चीज के असलीपन का विश्वास दिलाता रहे। यह ईमानदारी और विश्वास की विजय है। जो कमाया गया उसका आधार यही था। यदि वे लोग अपनी दुकान पर पानी और अरारोट मिला दूध, मिलावटी घी का साइनबोर्ड लगावें और अपनी वस्तु के दोषों को प्रकट कर दें, तब पता चले कि क्या बेईमानी अपने विशुद्ध रूप में कुछ कमा सकने में समर्थ है।

वेस्ट एण्ड वाच कम्पनी की घड़ियाँ, फोर्ड मोटरें, पार्कर के पैन लोग मँहगे होने पर भी खुशी-खुशी खरीदते हैं, क्योंकि वस्तु की प्रमाणिकता पर हर कोई भरोसा करता है। उनकी दिन प्रतिदिन उन्नति होती चली जा रही है। इसके विपरीत नकली, कमजोर, खराब चीजें बेचने वाले आये दिन दिवालिया होते रहते हैं। पूँजी गँवा बैठते हैं और फिर उस बदनामी के कारण नया काम कर सकने में भी सफल नहीं होते। बेईमानी देर तक छिपी नहीं रह सकती। पारे को पचाया नहीं जा सकता और पाप छिपाया नहीं जा सकता है। प्रकट होते समय दोनों ही भारी कष्ट देते हैं।

व्यापार की ही भाँति जीवन के हर क्षेत्र को सफलता का स्थायित्व कठोर श्रम, सद्गुण, सद्व्यवहार, सचाई, ईमानदारी एवं प्रामाणिकता पर निर्भर रहता है। चालाकी से एक बार ही किन्हीं को चमत्कृत करके अपना उल्लू सीधा किया जा सकता है पर उस लाभ को स्थिर नहीं रखा सकता। चोर, डाकू, जुआरी, गिरहकट आये दिन बहुत पैसा कमाते रहते हैं पर उस कमाई को स्थिर रखना या सदुपयोग करना उनके बस की बात नहीं होती। बादल की छाँह की तरह अनीति की कमाई भी अपव्यय और दुर्व्यसनों में देखते-देखते समाप्त हो जाती है।

सम्पत्ति से नहीं, सद्बुद्धि और सत्प्रवृत्तियों से उन्नति होती है। धनवान् नहीं, चरित्रवान् सुख पाते हैं। ईमानदारी से यदि कम भी कमाया जाय तो वह अनीति से अधिक कमाने की अपेक्षा अधिक श्रेयष्कर है। पसीने की कमाई फलती-फूलती है और हराम का पैसा पानी के बबूले की तरह नष्ट हो जाता है। इतना ही नहीं, विदाई के बाद वह बहुत पश्चाताप, सन्ताप और अपयश छोड़कर जाता है।

यदि बेईमानी से ही धन कमाया जाता है तो आवश्यक नहीं कि धनवान् ही बना जाय। संसार में अधिकांश गरीब ही रहते हैं। हम भी उन्हीं में से एक रहें तो क्या हर्ज है? किन्तु वास्तविकता यह है कि धन ही नहीं, स्वास्थ्य, सन्तोष और सम्मान के क्षेत्रों में भी समृद्ध और सफल चरित्रवान् एवं ईमानदार लोग ही बनते हैं। सफलता प्राप्त कर लेना ही काफी नहीं, उससे आत्म-सन्तोष और जन-कल्याण एवं स्वस्थ्य परम्परा का अभिवर्धन होना चाहिये। सही तरीके से प्राप्त की हुई सफलता ही वास्तविक सफलता है। यदि किसी ने कोई उन्नति या उपलब्धि अनुपयुक्त रीति से प्राप्त की है तो उससे अनेकों को वैसा ही करने की इच्छा उत्पन्न होगी और समाज में एक ऐसी प्रथा चल पड़ेगी, जो हर किसी के लिये अहितकर परिणाम ही उत्पन्न करती रहे।

सद्गुणों की खाद और सचाई का पानी पाकर ही व्यक्तित्व का पौधा बढ़ता और फलता-फूलता है। जादू से हथेली पर सरसों जमाई तो जा सकती है, कौतुक तो देखा जा सकता है पर उसका तेल निकालकर धन कमाया जा सके, ऐसा सम्भव नहीं होता। बेईमानी का चमत्कार तो देखा जा सकता है पर उसके सहारे सच्ची प्रगति और स्थिर सम्पदा का लाभ नहीं उठाया जा सकता। यदि हम वस्तुतः कुछ कहने लायक और आनन्द दे सकने लायक उपलब्धियाँ प्राप्त करना चाहते हैं तो एक ही रास्ता है कि हम ईमानदारी और भलमनसाहत को जीवन-नीति की तरह हृदयङ्गम करें सद्गुणों की सम्पदा से अपने व्यक्तित्व को सुसज्जित करते चलें। जिस प्रकार रुपये के बदले दुकानों पर बिकने वाली चीजें आसानी से खरीदी जा सकती हैं, उसी प्रकार सद्गुणों के मूल्य पर प्रगति की किसी भी दिशा में द्रुतगति से अग्रसर हुआ जा सकता है।

बेईमानी की रीति-नीति स्वीकार करने का प्रतिफल अपने लिये विपत्ति और समाज के लिये दुर्गति के रूप में ही प्रस्तुत होगा। हमें इस कंटकाकीर्ण पगदण्डी पर चलने की अपेक्षा ईमानदारी के राजमार्ग पर ही चलना चाहिये। बेईमानी के दुष्परिणामों के अनुभव के आधार पर चलने की अपेक्षा यही अच्छा है कि इस मार्ग पर चलने वालों की दुर्गति देखें और उतने से ही सावधानी बरतने लग जाँय। इतिहास के किसी भी पृष्ठ पर यह तथ्य देखा जा सकता है कि विभूतियों और सम्पत्तियों का लाभ केवल उनके लिये सुरक्षित रहता है, जो सद्गुणी, चरित्रवान् और ईमानदार हैं।

 'ईमानदारी का परित्याग न करें' पुस्तिका से।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हँसती और हँसाती जिन्दगी ही सार्थक है।

क्र० १८

अपने पास दूसरों को देने के लिये धन-दौलत न हो, किसी को कुछ देने की स्थिति न हो तो भी हम एक वस्तु सदा सबको देते रह सकने में समर्थ हो सकते हैं और निरन्तर पुण्य और सन्तोष लाभ करते रह सकते हैं। उस वस्तु का नाम है—प्रसन्नता। यदि अपने स्वभाव में प्रसन्न रहने का समावेश कर लिया जाय, हंसने मुस्कराने की आदत डाल ली जाय तो आप जहाँ कहीं रहेंगे, वहीं प्रसन्नता बिखेरते रहेंगे और जो कोई भी सम्पर्क में आवेगा प्रसन्न और प्रभावित होता चला जायगा। अपने आपकी सन्तुष्टि भी प्रसन्नता की मनोदशा पर निर्भर है।

यह अनुमान सही नहीं है कि जो सुखी एवं साधन सम्पन्न होता है वह प्रसन्न रहता है। वस्तु स्थिति इससे बिलकुल उल्टी है। जो प्रसन्न रहता है, वह सुखी और साधन सम्पन्न बनता है। प्रसन्नता विशुद्ध रूप से एक ऐसी मनोदशा है, जो पूर्णतया आन्तरिक सुसंस्कारों पर निर्भर रहती है। गरीबी में भी मुस्कराने और कठिनाइयों के बीच भी जी खोलकर हँसने वाले असंख्य व्यक्ति देखे जा सकते हैं। इसके विपरीत ऐसे भी अगणित लोग हैं, जिनके पास प्रचुर मात्रा में साधन सम्पन्नता भरी पड़ी है पर उनकी आँखें, नसें तेवर तने और मुखाकृति इठी रहती है। क्रुद्ध, चिन्तित, असंतुष्ट और उद्विग्न रहना एक मानसिक दुर्बलता मात्र है, जो अन्तःकरण की दृष्टि से पिछड़े हुए लोगों में ही पाई जाती है। परिस्थितियां नहीं, मनोभूमि का पिछड़ापन ही इस क्षुब्धताका कारण है। उदात्त और सन्तुलित दृष्टिकोण वाले व्यक्ति हर परिस्थिति में हँसते-हँसाते रहते हैं। वे जानते हैं कि मानव जीवन सुविधाओं असुविधाओं—अनुकूलताओं और प्रतिकूलताओं के ताने बाने से बुना गया है। संसार में अब तक एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं जन्मा, जिसे केवल सुविधायें और अनुकूलतायें ही मिली हों एवं कठिनाइयों का सामना न करना पड़ा हो।

हर किसी के जीवन में कुछ अनुकूलतायें रहती हैं, कुछ प्रतिकूलतायें। प्रश्न इतना भर है कि कौन किसको कितना महत्व देता है। जो अपनी प्रतिकूलताओं पर ही विचार करता रहेगा, इन्हीं की बाबत सोचेगा, उन्हें ही महत्व देगा, उसे प्रतीत होगा कि वह मात्र कठिनाइयों से घिरा हुआ है। अस्तु, उसे दुःखी रहना पड़ेगा। इन कठिनाइयों के निमित्त कारण जो भी प्रतीत होंगे, उन पर क्रुद्ध रहेगा। अधिक सम्पन्न लोगों के साथ अपनी तुलना करेगा तो अपने दुर्भाग्य पर चिढ़ आयेगी। इस स्तर पर अपनी मनोभूमि जमा देने वाला व्यक्ति सदा क्षुब्ध ही दिखाई पड़ेगा उसके स्वभाव में चिड़चिड़ापन जुड़ जायगा और जब भी अवसर मिलेगा, वह अपनी व्यथा अथवा नाराजगी व्यक्त करते हुए अपनी मानसिक अस्त-व्यस्तता प्रकट कर रहा होगा।

इसके प्रतिकूल जिसने अपनी अनुकूलताओं पर विचार करना आरम्भ किया और अपनी तुलना पिछड़े हुए लोगों के साथ करना आरम्भ की, उसे लगेगा कि हम करोड़ों से अच्छे हैं हमारे पास जो है उसके लिए भी लाखों करोड़ों तरसते हैं। इस तथ्य को जो समझ लेगा, वह अपने को सौभाग्यवान् मानेगा और संतोष का बहुत बड़ा आधार प्राप्त कर लेगा। सभी सुविधायें किसे मिली हैं ? हर दृष्टि से सुखी यहाँ कौन है ? कुछ न कुछ अभाव हर किसी को रहेंगे, इस अपूर्णता के कारण ही हम मनुष्य हैं। जिसे हर सुविधा मिले तो उसे देवता या भगवान् कहा जायगा।

प्रसन्नता एक ईश्वरीय वरदान है। और यह हर सुसंस्कृत मनोभूमि के व्यक्ति को प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो सकती है। जिसे शुभ देखने की आदत है वह प्रियदर्शी सर्वत्र आनन्द मङ्गल देखेगा, ईश्वर की अनुकम्पा और लोगों की सद्भावना पर विश्वास रखेगा। ऐसी दशा में हँसने और हँसाने के लिए उसके पास बहुत कुछ होगा। किन्तु जिन्हें अशुभ चिन्तन की आदत है, दूसरों के दोष गुण और अपने अभाव अवरोध ढूँढ़ने की आदत है, जो इसी शोध में लगे रहते हैं और जो प्रतिकूलतायें दीखती हैं, उन्हे बढ़ा-चढ़ा कर सोचते हैं, अपने चारों ओर केवल दुष्टता और विपन्नता ही दिखाई देती हैं, ऐसे लोगों को क्षुब्ध ही रहना पड़ेगा। वे असमंजस, खिन्नता और उद्विग्नता ही अनुभव करते रहेंगे। रोष उनकी वाणी से और असंतोष उनकी आकृति से टपकता रहेगा, ऐसे व्यक्ति स्वयं दुखी रहते हैं और अपने सम्पर्क में आने वाले दूसरों को दुखी करते रहते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य जीवन की एक भारी विडम्बना है कि वह सृष्टि का मुकुटमणि और संसार के समस्त प्राणियों की तुलना में अधिक साधन सम्पन्न होते हुए भी अपने को दुर्भाग्यग्रस्त माने और दुःखी रहे। यह विपन्नता ही है कि दूसरों की सद्भावना, सज्जनता और सहकारिता को भुला कर कोई केवल दोष-दुर्गुणों को ही ढूँढ़ता रहे। कठिनाइयों को सोचे और सुविधाओं को भुला दे, लाभ की ओर ध्यान न दे और हानि को सोचता रहे। यह एकांकी मनोभूमि अर्धांग पक्षाघात के रोगी की तरह है, जिसका एक ओर का आधा शरीर तो काम करता है पर दूसरी ओर निर्बलता, रुग्णता और पीड़ा की स्थिति बनी रहती है। हम जितनी देर जितनी बढ़ा-चढ़ाकर अपनी प्रतिकूलताएँ सोचेंगे, उसी अनुपात से अपने रोष और विक्षोभ को बढ़ा लेंगे।

हमें क्रुद्ध, रुष्ट, असन्तुष्ट और क्षुब्ध नहीं रहना चाहिए। इससे मस्तिष्क में नई विकृतियाँ उत्पन्न होती और बढ़ती चली जाती हैं। आग जहाँ रहेगी, वहीं जलायेगी। असन्तोष जहाँ रहेगा, वहीं विक्षोभ क्षोभ पैदा करेगा और उससे सारा मानसिक ढाँचा लड़खड़ाने लगेगा। चिड़चिड़ा मनुष्य एक प्रकार का पागल ही है। दुःखी, निराश और चिन्तित रहने वाले को सनकी और मूर्खों की पंक्ति में बिठाया जायगा। ऐसा व्यक्ति अपने ही दुर्गुणों से अपने आपको जलाता-गलाता रहता है और अनेक शारीरिक-मानसिक रोगों से ग्रस्त होकर घोर अशान्ति की उद्विग्न जिन्दगी जीता है।

हँसते रहना एक दैवी गुण है, जिस पर अमीरों की सुविधायें निछावर की जा सकती हैं। हँसने की आदत चित्त को हल्का बनाती है और शरीर को निरोग-दीर्घजीवी एवम् सुन्दर बनने की सुविधा उत्पन्न करती है। अपना सबसे बड़ा उपहार यही हो सकता है कि प्रसन्न रहने, मुस्कराने और हँसने की आदत को अपने स्वभाव का अंग बना लें। यह व्यक्ति को आकर्षक बनाने का बहुमूल्य गुण है। खिले हुए फूल के आस-पास जिस तरह तितलियाँ और मधु-मक्खियाँ घिरी रहती हैं, उसी प्रकार हँसते हँसाते रहने वाले व्यक्ति से, समीपवर्ती लोग अनायास ही आकर्षित और प्रभावित होते हैं। प्रसन्नता की आवश्यकता सभी को है, हँसी का आनन्द हर कोई लेना चाहता है। मुस्कराहट के साथ बिखरने वाला सौंदर्य हर किसी को भाता है। इस प्रकार की आकृति और प्रकृति जिस किसी की भी दिखाई पड़ती है, लोग उसकी ओर खिंचते चले आते हैं। मिठाई खरीदने वाले हलवाई की दूकान पर पहुँचते हैं। हर्ष और उल्लास को—प्रसन्नता और मुस्कान की भूख हर किसी को प्रसन्न चित्त मनुष्य के पास खींच कर ले आती है। उसके मित्रों, समर्थकों, प्रशंसकों और सहयोगियों की कमी नहीं रहती।

दूसरों को हम सर्वथा निर्धन और अक्षम होते हुए भी जो बहुमूल्य उपहार निरन्तर देते रह सकते हैं, वह प्रसन्नता की अभिव्यक्ति ही है। चन्दन अपने चारों ओर सुगन्ध और पुष्प आस-पास शोभा सौंदर्य बिखेरता है। हँसमुख और प्रसन्नचित्त मनुष्य अपने समीपवर्ती वातावरण में, परिवार और परिचितों में हर्ष-उल्लास की लहरें उत्पन्न करता रहता है। संसार में दुःख बहुत है, दुःखियों की कमी नहीं। रोने और रुलाने वालों की भीड़ लगी है। चिढ़ने और चिढ़ाने वाले अगणित है। खोज उनकी है, जो हँसने और हँसाने की विभूतियाँ बिखेरते हुए अपनी आन्तरिक समर्थता और मानसिक प्रौढ़ता का परिचय दे सकें। ऐसे ही लोग इस संसार में आनन्द की अभिवृद्धि कर सकते हैं, उन्हीं का अनुदान समीपवर्ती लोगों की हृदय कालिका को खिला सकता है। कठिनाइयाँ अपने पुरुषार्थ से हल होती हैं पर दूसरों को उल्लास एवं उत्साह प्रदान कर हम किसी का भी चित्त हलका कर सकते हैं और निराश जीवन में आशा की नई किरण बिखेर सकते हैं।

हँसना एक दैवी गुण है, हँसाना एक उत्कृष्ट स्तर का उपकार है। मुसकराता हुआ चेहरा भले ही काला-कुरूप क्यों न हो सदा अतिसुन्दर लगेगा। प्रसन्नता एक आदत है, जो कुछ समय के निरन्तर अभ्यास से अपने अन्दर उत्पन्न की जा सकती है। अपनी सुविधाओं को देखें और प्रसन्न रहें। शुभ और प्रिय देखें। उज्ज्वल भविष्य की कल्पना करें, सद्भावना और सत्प्रवृत्तियों का चिन्तन करें, हमें हँसने के लिये, प्रसन्न रहने के लिये बहुत कुछ मिलेगा। यदि हम हँसने और हँसाने का जीवन जी सकें तो समझना चाहिए कि हमने एक सच्चे कलाकार जैसी मंगलमयी सफलता एवं उल्लास भरी उपलब्धि प्राप्त कर ली।

 'जिन्दगी हँसते खेलते जियें' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपना ही नहीं, कुछ समाज का भी हित साधन करें

क्र० १०

अन्य जीव अपने आप में पूर्ण हैं। अपनी आवश्यकतायें, अपने बलबूते स्वयम् पूरी कर लेते हैं। आहार, निवास आदि के लिये वे किसी दूसरे पर निर्भर नहीं। पर मनुष्य की स्थिति ऐसी नहीं, उसका निर्वाह, विकास एवं स्थायित्व दूसरों की आशा पर पूर्णतया आश्रित है। अन्य जीवों के बच्चे जन्म के कुछ ही समय बाद अपने पैरों खड़े हो जाते हैं, पर मनुष्य का बालक दूध पीने, करवट लेने तक में समर्थ नहीं होता। उसकी विभिन्न व्यवस्थायें माता न जुटाए तो जीवित रह सकना सम्भव नहीं। अपने पैरों पर खड़ा होने लायक तो वह बीस-पच्चीस वर्ष की आयु में बनता है, तब तक उसे अभिभावकों की कृपा पर अवलम्बित रहना पड़ता है। भोजन, वस्त्र, चिकित्सा, शिक्षा विवाह आदि का प्रबन्ध वे ही करते हैं। बोलना, बात करना वह दूसरों का उच्चारण सुनकर करता है। शिक्षा दूसरों के संग्रहीत ज्ञान के आधार पर होती है। किसी की लड़की आकर अपना घर बसाती है। चिकित्सा के लिए दूसरों के ज्ञान पर अवलम्बित रहना पड़ता है। कला-कौशल दूसरे सिखाते हैं। लाखों वर्षों से करोड़ों मनुष्यों द्वारा उपार्जित एवम् संग्रहीत ज्ञान हमें मिलता है और तब कहीं कुछ सीख-समझकर किसी योग्य बन पाते हैं।

रेल, तार, डाक, प्रेस आदि आविष्कारों के आधार पर हमारी सुविधायें टिकी हुई हैं। व्यापार जिन साधनों से चलता है, वे अगणित मनुष्यों की सूझबूझ, मेहनत के परिणाम हैं। छोटी-सी दियासलाई बनाने में जितने यन्त्र, श्रम, साधन एवम् ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है, उनकी एक-एक प्रक्रिया का विकास लाखों करोड़ों के सहयोग से हो सम्भव हुआ, होता है। जङ्गलों, गुफाओं में रहने वाले साधु-महात्माओं को भी वस्त्र, माला, कमण्डल, कुल्हाड़ी, दियासलाई, कम्बल, खड़ाऊँ आदि की आवश्यकता पड़ती है। इसके बिना उनका निर्वाह नहीं होता। यह वस्तुएँ भी समाज के असंख्य व्यक्तियों के सहयोग, श्रम, ज्ञान से ही उपलब्ध होती हैं। कहने का तात्पर्य इतना भर है कि मनुष्य ने जो कुछ पाया, कमाया, बढ़ाया है वह सब कुछ दूसरों के सहयोग एवम् अनुग्रह का फल है। मनुष्य पूर्णतया सामाजिक प्राणी है। उसकी स्थिति एवम् प्रगति सब कुछ सामाजिक परिस्थितियों पर निर्भर है, इसलिये उसका स्वार्थ इस बात में समाया हुआ है कि सामाजिक वातावरण उत्तम बना रहे। यदि समाज में किसी तरह विपन्नता उत्पन्न होगी तो उसका प्रभाव अपने ऊपर पड़े बिना भी न रहेगा। मुहल्ले में दुष्ट, दुराचारी भरे पड़े हों तो अपनी इज्जत-आबरू तथा सुरक्षा खतरे में है। गाँव में हैजा फैले तो उसका प्रभाव अपने घर में भी जान-जोखिम खड़ी करेगा। पड़ोसी के छप्पर में आग लगे तो अपना छप्पर भी सुरक्षित न रहेगा। इसलिए हमें अपने-अपने बच्चों के स्वार्थों की रक्षा के लिए सामाजिक जीवन के वातावरण को उत्कृष्ट बनाये रखने का प्रयत्न करते रहना चाहिए। ऐसे प्रयत्न इसलिये भी आवश्यक हैं, कि जिस समाज की सहायता से हमने अनेक सुविधायें प्राप्त की हैं, स्थिरता एवम् प्रगति के उपहार पाए हैं, उसके प्रत्युपकार में प्रवृत्त होकर अपनी मानवोचित कृतज्ञता प्रकट करें। जिससे कुछ पाया है उसे देना भी चाहिए, तभी ऋण से मुक्ति मिलती है। समाज-सेवा के लिये कुछ निरन्तर करते रहने का व्रत लेकर हमें समाज-ऋण से किसी कदर उऋण होने का प्रयत्न करते रहना चाहिए।

पेट पालने के प्रयत्नों में जीवन की बहुमूल्य विभूति समाप्त नहीं कर दी जानी चाहिए। स्त्री-बच्चों की आवश्यकताएँ पूरी करते रहने में हमारी सारी क्षमता खर्च नहीं हो जानी चाहिए। पेट और परिवार से बाहर भी अपनत्व का विस्तार होना चाहिए। आत्म-विकास का यही रास्ता है कि हम अपनी आत्मीयता को व्यापक क्षेत्र में विस्तृत करें। दूसरे के सुख को अपना सुख और दूसरों के दुःख को अपना दुःख मानकर कुछ ऐसा भी सोचें, कुछ ऐसा भी करें जिससे दूसरों का दुःख घटे और सुख बढ़े। निश्चय ही किसी को इतनी सामर्थ्य नहीं कि लोगों के अभाव अपनी सारी सम्पत्ति देकर भी पूरी कर सके। इसी प्रकार चौबीसों घण्टे का समय लोगों की सेवा करने में लगा दिया जाय तो भी बहुत थोड़े लोगों की तनिक सी आवश्यकताएँ पूरी हो सकेंगी। इसलिए अन्न, वस्त्र, जल, दवा आदि बाँटकर समाज का पिछड़ापन, कष्ट, अभाव एवम् अवसाद दूर होने की कल्पना नहीं की जा सकती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संसार में सारे कष्ट दुर्बुद्धि एवम् दुष्प्रवृत्तियों के कारण हैं । इसलिए रोग के कारण को समझकर जड़ पर ही कुठाराघात करना चाहिए । समाज-सेवा का सर्वोत्तम तरीका यह है कि लोगों की विचारणा एवम् प्रवृत्तियों को निकृष्टता की स्थिति से उबारकर उत्कृष्टता की दिशा में मोड़ा जाय । लोग अपना रवैया और ढर्रा बदल दें तो अपने भीतर भरी हुई प्रचण्ड सामर्थ्य के आधार पर वे स्वयं ही अपने पिछड़ेपन एवम कष्टों का निवारण कर सकते हैं । हमें अपना सहयोग उनकी प्रवृत्तियों को इस ओर मोड़ने के लिये देना चाहिए । उनका ऐसा नेतृत्व करना चाहिए कि विघातक प्रवृत्तियों को छोड़कर वे रचनात्मक प्रवृत्तियों में रस लेने लगें और उनके अभ्यस्त बनकर अपना तथा असंख्य दूसरों का भला कर सकें ।

आज संसार ने उत्कृष्टता के आभूषण उतार दिये हैं और निकृष्टता का चोला धारण कर लिया है । विचार-पद्धति और कार्य-प्रणाली में निकृष्टता घुस पड़ने के कारण प्रेत-पिशाचों जैसे जीवन बन गये हैं और मरघट जैसा वीभत्स वातावरण बन गया है । धीरे-धीरे हम अन्तर्द्वन्दों में—गृह-कलह में—परस्पर उत्पीड़न में निरत होकर सामूहिक आत्म-हत्या की ओर बढ़ते चले जा रहे हैं । इन परिस्थितियों में मानव-जाति की एक ही सेवा हो सकती है कि उसे बुद्धि-भ्रम, अविवेक एवम् अशुभ चिन्तन से बचाकर नीर-क्षीर विवेचना, ऋतम्भरा प्रज्ञा का आश्रय लेने के लिये तत्पर किया जाये । आज की स्थिति में समाज की यही सबसे बड़ी सेवा है । विचार क्रांति ही वर्तमान दुर्दशा को पलटकर धरती पर स्वर्ग का अवतरण सम्भव कर सकेगी ।

विचार-क्रांति के लिये आदर्शवादी विचार-धारा का प्रतिपादन करने वाले पुस्तकालयों की सबसे बड़ी आवश्यकता है । देव-मन्दिरों की तरह आज ज्ञान-मन्दिरों की—पुस्तकालयों की स्थापना नितान्त आवश्यक है जिनसे जीवन को आदर्शमय बनाने और सामयिक उलझनों को सुलझाने वाला प्रकाश मिल सके । ऐसी पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएँ जहाँ आती हैं, लोगों के पास तक उस साहित्य को पहुँचाने और लाने का प्रबन्ध सम्भव हो, ऐसे पुस्तकालयों की हर जगह भारी आवश्यकता है । धनीमानी इस कार्य में अपना दान देकर अपनी कमाई को धन्य बना सकते हैं । पूर्वजों की स्मृति किसी को बनानी हो तो उनके नाम पर पुस्तकालय ही स्थापित करना चाहिए । परस्पर मिल-जुलकर चन्दे से भी ऐसी संस्था स्थापित की जा सकती है । कोई ऐसा प्रबन्ध न हो सके तो व्यक्तिगत रूप से भी 'झोला-पुस्तकालय' बनाकर घर-घर ऐसा प्रेरक साहित्य पहुँचाने का पुण्य परमार्थ किया जा सकता है ।

अपने देश में शिक्षा की बड़ी कमी है । लोग अभी भी शिक्षा की उपयोगिता समझ नहीं पाये हैं । देहातों में बहुत लोग अपने लड़कों को पढ़ने नहीं भेजते । लड़कियों को पढ़ाने का रिवाज तो बहुत कम है । हमें टोलियां बना कर घरों में जाना चाहिए और शिक्षा योग्य लड़के-लड़कियों को स्कूल भिजवाने की प्रेरणा देनी चाहिए । सरकारी और गैर सरकारी स्कूल खुलवाने चाहिये । वयस्क पुरुषों के लिये तथा महिलाओं के लिये तीसरे पहर अथवा रात्रि को चलने वाली प्रौढ़-पाठशालायें स्थापित करनी चाहिये, पैसा या श्रम देकर ऐसी शिक्षा-संस्थायें लोग हर जगह चला सकते हैं । इन कार्यों के लिए सार्वजनिक धन-संग्रह भी किया जा सकता है । काम से लगे हुए व्यक्ति आगे पढ़ने के लिए जिनमें सुविधा प्राप्त कर सकें, ऐसे रात्रि-विद्यालय तथा छात्रों की सहायता करने वाले कोचिंग स्कूल हर जगह चलने चाहिये । छोटे बच्चों के लिये मुहल्ले-मुहल्ले में शिशु-मन्दिर होने चाहियें । शिक्षा का जितना विकास सम्भव हो सके सरकारी और गैर-सरकारी दोनों स्तरों पर इसके लिये पूरा-पूरा प्रयत्न करना चाहिये । अपने ८० प्रतिशत अशिक्षित देशवासियों को साक्षर बनाकर ही हम उन्हें अविवेक, रूढ़िवादिता के चंगुल से निकाल सकते हैं ।

आज की ज्वलन्त समस्याओं का स्वरूप समझने और उनका हल प्राप्त करने के लिये समय-समय पर स्थान-स्थान पर विचार-गोष्ठियों के आयोजन होते रहने चाहिए, जिनमें प्रश्न और उत्तर के रूप में आज की वैयक्तिक और सामाजिक समस्याओं का निराकरण समझने की सुविधा सर्वसाधारण को मिल सके ।

समाज-सेवा का सबसे पहला कार्य जन-मानस में विवेकशीलता जगाना है, ताकि लोग अपनी अवांछनीय आदतें और अवांछनीय रूढ़ियों को छोड़कर औचित्य अपनाने और सन्मार्ग पर चलने के लिये तत्पर हो सकें । यह कार्य जिन प्रयत्नों से हो सकता हो उन्हें सर्वोत्तम समाज-सेवा माना जायेगा । हममें से हर भावनाशील व्यक्ति को मन से इस प्रकार के कार्यों की व्यवस्था करने में संलग्न होकर अपना परम पवित्र कर्त्तव्य पालन करना चाहिए ।

'व्यक्तिवाद नहीं समूहवाद' पुस्तिका से ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सज्जनता और मधुर व्यवहार—मनुष्यता की पहली शर्त

क्र० २०

किस के भीतर क्या है, इसका परिचय उसके व्यवहार से जाना जा सकता है। जो शराब पीकर और लहसुन खाकर आया होगा, उसके मुख से बदबू आ रही होगी। इसी प्रकार जिसके भीतर दुर्भावनाएँ, अहङ्कार और दुष्टता का ओछापन भरा होगा, वह दूसरों के साथ अभद्रतापूर्ण व्यवहार करेगा। उसकी वाणी से कर्कशता और असभ्यता टपकेगी। दूसरे से इस तरह बोलेगा जिससे उसे नीचा दिखाने, चिढ़ाने, तिरस्कृत करने और मूर्ख सिद्ध करने का भाव टपके। ऐसे लोग किसी पर अपने बड़प्पन की छाप नहीं छोड़ सकते, उल्टे घृणास्पद और द्वेषभाजन बनते चले जाते हैं। कटुवचन मर्मभेदी होते हैं, वे जिस पर छोड़े जाते हैं, उसे तिलमिला देते हैं और सदा के लिए शत्रु बना लेते हैं। कटुभाषी निरन्तर अपने शत्रुओं की संख्या बढ़ाता और मित्रों की घटाता चला जाता है।

दूसरे के साथ असज्जनता और अशिष्टता का बरताव करके कई लोग सोचते हैं, इससे उनके बड़प्पन की छाप पड़ेगी, पर होता बिलकुल उल्टा है। तिरस्कारपूर्ण व्यवहार करने वाला व्यक्ति घमण्डी और ओछा समझा जाता है। किसी के मन में उसके प्रति आदर नहीं रह जाता। आश्रित परिवार के सदस्यों और कुछ स्वार्थ-सिद्धि के लिये कानाफूसी करने वालों के अतिरिक्त और किसी की उसमें दिलचस्पी नहीं रह जाती। उद्धत स्वभाव के व्यक्ति अपना दोष आप भले ही न समझें दूसरे लोग उन्हें उथला, हलका मानते हैं और उदासीनता, उपेक्षा का व्यवहार करने लगते हैं। समय पड़ने पर ऐसा व्यक्ति किसी को अपना सच्चा मित्र नहीं बना पाता और आड़े वक्त कोई उसके काम नहीं आता। सच तो यह है कि मुसीबत के वक्त वे सब लोग प्रसन्न होते हैं, जिनको कभी तिरस्कार सहना पड़ा था। ऐसे अवसर पर वे बदला और कठिनाई बढ़ाने की ही बात सोचते हैं।

हमें संसार में रहना है तो सही व्यवहार करना भी सीखना चाहिये। सेवा, सहायता करना तो आगे की बात है पर इतनी सज्जनता तो हर व्यक्ति में होनी चाहिये कि जिससे वास्ता पड़े उससे नम्रता सद्भावना के साथ मीठे वचन बोले, थोड़ी-सी देर तक कभी किसी से मिलने का अवसर आये, तब शिष्टाचार बरते। इसमें न तो पैसा व्यय होता है, न समय। जितने समय में कटुवचन बोले जाते हैं और अभद्र व्यवहार किया जाता है उससे कम समय में मीठे और शिष्ट तरीके से भी बरता जा सकता है। जो बात कड़वेपन और रुखाई के साथ कही गई थी, उसे ही मिठास के साथ उतनी ही देर में कहा जा सकता है। उद्धत स्वभाव दूसरों पर बुरी छाप छोड़ता है और उसका परिणाम कभी न कभी बुरा ही निकलता है। अकारण अपने शत्रु बढ़ाते चलना, कुछ बुद्धिमानी की बात नहीं। इस प्रकार के स्वभाव का व्यक्ति अन्ततः घाटे में रहता है। जिसके साथ दुर्व्यवहार किया गया, अप्रसन्न केवल वही नहीं होता वरन् जिनने उस प्रसङ्ग को देखा, सुना है, वे भी दुःखी और असन्तुष्ट होते हैं। उद्धतता के ओछेपन की बुरी छाप उन सुनने, देखने वालों पर पड़ती है और उनके मन में भी ऐसा व्यक्ति हेय स्तर का ही जँचता है। ऐसे लोग किसी का सच्चा सम्मान नहीं पा सकते और उसके बिना सहयोग भी किसे मिलता है? एकाकी मनुष्य जिसे दूसरों का सहयोग न मिल सके, कभी कोई बड़ी प्रगति न कर सकेगा।

श्रेष्ठ, उदार और सज्जन प्रकृति के मनुष्य सदा दूसरों का आदर करते हैं और हर किसी से सम्मान और मिठास भरे शब्द बोलते हैं। इसमें उनका जाता कुछ नहीं—अपने बड़प्पन की छाप ही दूसरों पर पड़ती है। उद्धतता से नहीं, सज्जनता से हम दूसरों का आदर पा सकते हैं उन्हें अपना बना सकते हैं और ऐसे ही शिष्ट व्यवहार की आशा उनसे भी कर सकते हैं। सज्जनता में ही मनुष्य का वास्तविक बड़प्पन छिपा है और उसका प्रमाण मीठे वचन और शिष्ट व्यवहार से ही पाया जा सकता है। यह संसार कुँए की आवाज की तरह प्रतिध्वनित करता है। जैसा व्यवहार हम दूसरों के साथ करते हैं, लगभग उसी स्तर की प्रतिक्रिया उनसे हमें प्राप्त होती है। कटुवादी अहम्मन्य और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तिरस्कार का व्यवहार करने वाले लगभग वैसा ही व्यवहार बदले में पायेंगे। हो सकता है तत्काल किसी कारणवश लोग वैसा ही बरताव न करें पर उनके मन में वही भाव दूने-चौगुने वेग से अवश्य ही उठ रहे होंगे। अच्छा होता वे लड़ाई-झगड़े के रूप में तत्काल निकल जाते, पर यदि वे दबे पड़े रहे तो कालांतर में ब्याज समेत छूटेंगे, तब और भी अधिक घातक सिद्ध होंगे। कटु व्यवहार की घातक प्रतिक्रिया जो दूसरों पर होती है, वह लौटकर अन्ततः अपने ही ऊपर आती है। हम दूसरों को तिरस्कृत, अपमानित करके वस्तुतः अपने को ही तिरस्कृत, अपमानित करते हैं। अपने ही ओछेपन और निकृष्ट व्यक्तित्व को दुनियां के सामने प्रसिद्ध करते हैं।

सज्जनता, मनुष्यता का ही दूसरा नाम है। जिसमें सज्जनता नहीं उसे नर-पशु ही कहना पड़ेगा। हम सच्चे अर्थों में मनुष्य हैं इसको प्रमाणित करने के लिए ही सज्जनता की रीति-नीति अपनानी चाहिए। इसका आरम्भ मधुर भाषण और विनम्र एवं शिष्ट व्यवहार से होता है। छोटे या बड़े किसी से भी बात करनी हो, तो हमें यह नहीं भूल जाना चाहिए कि कटु या ओछे वचन बोलकर जहाँ उसे तिरस्कृत करते हैं, वहाँ अपने को भी ओछा सिद्ध करते हैं। हमें पहले अपनी चिन्ता करनी चाहिए। अपना स्वभाव, स्तर और अभ्यास गिराकर यदि किसी की भर्त्सना की गई तो वह अपने लिये ही मँहगी पड़ेगी। दूसरे लोग गन्दे हैं, इसलिए हम क्यों गन्दे बनें? हमें अपना स्तर हर हालत में ऊँचा उठाये रहना चाहिए और जिससे भी--जो कुछ भी कहना हो—उसे कहें तो, पर सज्जनता और शिष्टता की भाषा में ही बोलें। अच्छे शब्दों में भी हर बुरी-भली बात कही जा सकती है। इस कला को सीख लेना भलमनसाहत का पहला चिन्ह है।

घर में छोटों से भी 'आप' या 'तुम' कहकर बोलना चाहिए। जहाँ आवश्यकता हो तहाँ नाम के आगे 'जी' भी लगाना चाहिए। 'तू' कहना अधिक निकटवर्ती स्त्री, पुत्र, पौत्र आदि के लिए ही चलता है। इसमें आत्मीयता का पुट माना जाता है। पर इसमें दोष अपनी आदत बिगाड़ने का है। दूसरे वे लोग जिन्हें 'तू' से सम्बोधन किया जाता है, देखा देखी दूसरों से भी वैसा ही कहने लगेंगे। आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य एकमात्र दूसरे की आयु, शिक्षा, धन अथवा पद विचार किये बिना एक दूसरे के प्रति नम्रता और आदर भरा व्यवहार एवम् वार्तालाप करें।

जब हम किसी से मिलें या कोई हमसे मिले, प्रसन्नता व्यक्त की जानी चाहिए। मुस्कराते हुए अभिवादन करना चाहिए और बिठाने बैठने, कुशल समाचार पूछने और साधारण शिष्टाचार बरतने के बाद आने का कारण पूछना, बताना चाहिये। यदि सहयोग किया जा सकता हो तो वैसा करना चाहिए अन्यथा अपनी परिस्थितियाँ स्पष्ट करते हुए सहयोग न कर सकने का दुःख व्यक्त करना चाहिये। इसी प्रकार यदि दूसरा कोई सहयोग नहीं कर सका है तो भी उसका समय लेने और सहानुभूति रखने के लिये धन्यवाद देना चाहिये तथा नाराजगी एवं अविश्वास उस हालत में भी व्यक्त नहीं करना चाहिये। साधारण पूछताछ का उत्तर भी मीठे और सहानुभूतिपूर्ण शब्दों में ही देना चाहिये। रूखा, कर्कश, उपेक्षापूर्ण अथवा झल्लाहट, तिरस्कार भरा उत्तर देना ढीठ और गँवार को ही शोभा देता है। हमें अपने को इस पंक्ति में खड़ा नहीं करना चाहिए।

बड़े जो व्यवहार करेंगे बच्चे वैसा ही अनुकरण सीखेंगे। यदि हमें अपने बच्चों को अशिष्ट, उद्दण्ड बनाना हो तो हमें असभ्य व्यवहार की आदत बनाये रहनी चाहिये अन्यथा औचित्य इसी में है कि आवेश, उत्तेजना, उबल पड़ना, क्रोध में तमतमा जाना, अशिष्ट वचन बोलना और असत्य व्यवहार करने का दोष अपने अन्दर यदि स्वल्प मात्रा में हो तो भी उसे हटाने के लिए सख्ती के साथ अपने स्वभाव के साथ संघर्ष करें और तभी चैन लें, जब अपने में सज्जनता की प्रवृत्ति का समुचित समावेश हो जाय।

हम अपनी और दूसरों की दृष्टि में सज्जनता और शालीनता से परिपूर्ण एक श्रेष्ठ मनुष्य की तरह अपना आचरण और व्यक्तित्व बना सकें तो समझना चाहिए कि मनुष्यता की प्रथम परीक्षा में उत्तीर्ण हो गये। उसके आगे के कदम नैतिकता सेवा, उदारता, संयम, सदाचार, पुण्य, परमार्थ के हैं। इसमें भी पहली एक अति आवश्यक शर्त यह है कि हम सज्जनता की सामान्य परिभाषा समझें और अपनायें, जिसके अन्तर्गत मधुर भाषण और विनम्र शिष्ट एवं मृदु व्यवहार अनिवार्य हो जाता है। * * * **—'अशिष्टता न कीजिये' पुस्तिका से।**

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साहस जुटायें-औचित्य अपनायें

क्र० २१

भय हमारी स्थिरता और प्रगति में सबसे बड़ा बाधक है। कितने ही काम ऐसे हैं जिन्हें बहुत आसानी से किया जा सकता है पर भावी कठिनाइयों, असुविधाओं और अवरोधों की मिथ्या कल्पना करके हम आगे कदम बड़ाने की हिम्मत ही नहीं करते और उस लाभ से अकारण ही वंचित रह जाते हैं जो सहज ही उठाया जा सकता था।

आन्तरिक दुर्बलता का बड़ा प्रमाण मनुष्य की भीरुता है और कायर मनुष्य उनसे अकारण डरता है। जिन बातों का हँसते खेलते सामना किया जा सकता है या सहा जा सकता है उनकी भयावह कल्पना गढ़कर डरपोक व्यक्ति राई को पहाड़ बना देता है और फिर उस स्वनिर्मित भूत से डर-डर कर प्राण सुखाता चला जाता है। भीरुता एक मानसिक रोग है और वह इतना कष्टकारक है कि ज्वर, दस्त, खाँसी, दमा आदि की अपेक्षा शरीर को कहीं अधिक क्षति पहुँचाता है। मन तो उसके कारण हर घड़ी उद्विग्न रहता है। ध्यान से देखा जाय तो राई रत्ती भर होती है और यदि वह आशंका मूर्तिमान हो जाय तो उससे उतनी विपत्ति नहीं आती जितनी कि कल्पना की गई थी।

हमें शारीरिक रुग्णता और दुर्बलता की तरह ही मानसिक दुर्बलता से बचना चाहिए। काया कष्ट अपने अंग की पीड़ा को देखकर समझा जाता है। मानसिक अस्वस्थता की परख इस आधार पर करनी चाहिए कि हमें कहीं कायरता और भीरुता ने तो नहीं आ घेरा है। भविष्य की अशुभ कल्पनायें करके कहीं अपना चित्त विक्षुब्ध या उद्विग्न तो नहीं बना रहता। यदि ऐसा हो तो हमें अपने आपको भर्त्सना करनी चाहिए और उन बहादुरों के साथ तुलना करनी चाहिए जिनने भयंकर विपत्तियाँ सामने आ खड़ी होने पर भी संतुलन नहीं खोया और साहस पूर्वक सामना करके अन्धकार को प्रकाश में बदल दिया।

अवरोध हर कार्य में आते हैं। प्रगति का कोई क्षेत्र ऐसा नहीं जहाँ सहज ही अभीष्ट उपलब्धियाँ प्राप्त हो जाती हों। किसी वर्ग के मनुष्य ऐसे नहीं हैं जिनमें केवल सज्जनता ही भरी पड़ी हो। घटना क्रम अपनी इच्छानुकूल हो ऐसा नियम इस सृष्टि का नहीं है। प्रतिकूलताओं और विपरीतताओं से टकराकर अपने लिए रास्ता बनाने की प्रक्रिया हर अग्रगामी को अपनानी पड़ी है। दुर्जनों को सज्जन अनायास ही नहीं बना लिया जाता। वरन् उन्हें बार-बार नरम गरम करना पड़ता है। उनके आतंक की उपेक्षा करके साहस पूर्वक उन्हें यह बताना पड़ता है कि उन्हीं की मर्जी सब कुछ नहीं, न्याय और औचित्य का भी कोई स्थान है। आतंक की व्यर्थता और औचित्य की समर्थता अनुभव कराये बिना दुर्जनों को रास्ते पर लाने का और कोई मार्ग नहीं है, पर इस पर केवल साहसी ही चल सकते हैं। डरपोक तो अपनी कायरता को भाग्य के पर्दे में छिपा कर रोते कलपते रहते हैं।

प्रतिकूल को अनुकूलता में बदलने के लिए प्रबल पुरुषार्थ करना पड़ता है। निर्धनता को सम्पन्नता में बिना कठोर श्रम किए कैसे बदला जा सकता है? दुर्बल शरीर को परिपुष्ट बनाने केलिए स्वास्थ्य साधना करनी पड़ती है और अशिक्षित अविकसित मस्तिष्क को विद्वानों, मनीषियों जैसा सुविकसित बनाना हो तो मनोयोग पूर्वक अध्ययन के तप में संलग्न होना पड़ता है। जिसके भीतर से इस प्रकार का पराक्रम करने की हिम्मत न उठती हो उसके लिए सफलता और सम्पन्नता के सारे द्वार सदा के लिए अवरुद्ध ही पड़े रहेंगे।

ईश्वर उनकी सहायता करता है जो अपनी सहायता आप करने को खड़े होते हैं। कहते हैं कि हिम्मत वाले के लिए पहाड़ रास्ता देते हैं। मानवीय अन्तरात्मा में अपार शक्ति के स्रोत और सामर्थ्य के भंडार भरे पड़े हैं। पर इन्हें जगाने के लिए साहस का सम्बल चाहिए। संसार के अगणित महापुरुषों की जीवन गाथा पढ़कर निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि जन्मजात सिद्धियाँ साथ लेकर कोई नहीं आया। हर एक को कठिन परिस्थितियों से धैर्यपूर्वक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org
स्वयं लड़ना पड़ा है और अपने लिए अपने हाथों स्वयं रास्ता बनाना पड़ा--अपनी मंजिल अपने पैरों चलनी पड़ी है। दूसरों ने तभी सहयोग दिया है जब देख लिया है कि इसमें बहादुरी कम नहीं। जब लोग किसीमें कायरता भरी देखते हैं तो सहज ही अनुमान लगा लेते हैं कि इनकी नाव पार पहुँचने वाली नहीं। डूबने वाले के साथ कौन अपनी कीमती सहायता डुबोना पसंद करेगा ? ऐसे लोगों को हर दिशा में असहयोग ही मिलता है। यद्यपि इस संसार में उदार सहायता की कोई कमी नहीं है।

अपने भीतर अनेक दोष दुर्गुण भरे पड़े हैं यदि उन्हें जैसे का तैसा पड़ा रहने दिया जाय, उखाड़ने की हिम्मत न की जाय तो निश्चय ही अपना व्यक्तित्व औंधा और औछा ही बना पड़ा रहेगा। इसे बाजार में कौड़ी मोल भी कोई नहीं खरीदेगा। शोषकों का एक विशाल घेरा अपने चारों ओर घिरा पड़ा है जो उचित अनुचित लाभ ही पूरा लेना चाहते हैं पर बदले में सहानुभूति तथा कृतज्ञता तक व्यक्त करना नहीं चाहते इनके चंगुल में यदि ऐसे ही फँसे पड़े रहे तो हाड़ मांस कुछ बचने वाला नहीं है। औचित्य का प्रतिपादन और अनीति का प्रतिरोध यदि न किया जाय तो फिर न्याय की आशा नहीं रखनी चाहिए और अपने आप को उस शोषण में ही गलाने के लिए तैयार करना चाहिए। यदि न्याय और औचित्य की आकांक्षा हो तो अपनी कठिनाई को साहस पूर्वक कहना चाहिए। कहना ही नहीं—सुधार के लिए अड़ना भी चाहिए। परिवर्तन इसी क्रम से होते रहे हैं आगे होंगे, पर यह है हिम्मत वालों का काम। कायर तो खोल्हू में पिलने वाले तिलों की तरह अपनी हड्ढी पसली के तेल निकलवाने के लिए ही जन्मते मरते हैं। भाग्य भी केवल बहादुरों की सहायता करता है कायरों की बात सुनने की तो शायद उसे भी फुरसत नहीं।

नैतिक अनाचार, राजनैतिक भ्रष्टाचार और सामाजिक कुरीतियों का एक चक्रव्यूह सा बन गया है उसे तोड़ा न जायगा तो हम सब रोते कलपते ही दिन गुजारेंगे। हिम्मत न जमी, अनौचित्य का प्रतिरोध न किया गया तो यह सघन अन्धकार ऐसे ही हजारों वर्षों तक चलता रहेगा। घर परिवार के लोगों को अपने-अपने कर्तव्य पालने के लिए इंगित न किया गया तो उसी में इतनी अवाँछनीयता जम जायगी कि दम घुटने जैसी स्थिति को सहन करना कठिन हो जायगा। हर अवांछनीय स्थिति बदली जा सकती है। पर उसके सुधार और प्रतिरोध की तो आवश्यकता पड़ेगी ही।

प्रचलित ढर्रे को बदले बिना अपना वर्तमान मायामोह निष्ठ जीवन उत्कृष्टता और आदर्शवादिता के अनुरूप न ढाला जा सकेगा। शरीर की आदतें, मन की अभिरुचि,तृष्णा वासना में डूबी पड़ी गतिविधियाँ जीवन की बर्बादी ही करेंगी। आत्मिक उत्कर्ष के लिए कुछ नया ढर्रा, कुछ नया क्रम, कुछ नई रीति-नीति अपनानी पड़ती है इससे अपने को भी अनोखा सा लगता है और घर वाले भी व्यंग विरोध करते हैं। यदि उस परिवर्तन के लिए साहस न जुटाया जाय तो वही पुराने ढर्रे की अस्त-व्यस्त जिन्दगी जीनी पड़ेगी।

मस्तिष्क में न जाने कितने प्रकार के असंबद्ध, अनर्गल और अनुपयुक्त विचार चिरकाल से ऐसा अड्डा जमाये बैठे हैं कि अब उनके प्रति मोह और पक्षपात तक जुड़ गया है। यह सूझता तक नहीं कि इनमें कुछ अनौचित्य भी है। दूसरों को जिस ढर्रे पर चलते देखते हैं उसी पर चलने की अपनी भी इच्छा होती है। उचित अनुचित का वर्ण भेद कौन करे ? जो चल रहा है वह उचित है इस मानसिक आलस्य ने हमारी मनोभूमि का अधिकांश भाग मूढ़ता एवं अविवेक भरे विचारों से ही घेर लिया है और हम ऐसी रीति-नीति अपनाये रहते हैं जो अपने को ही भले अच्छी लगे पर हर विचारशील उसे अशोभनीय और अग्राह्य ही प्रतिपादित करेगा। यदि औचित्य और न्याय पूर्ण मान्यताएँ अपनानी हों तो नीर-क्षीर विवेक की नीति अपनानी पड़ेगी और जो अनुपयुक्त है उसे छोड़ने और जो उपयुक्त है उसे ग्रहण करने का साहस जुटाना पड़ेगा।

हिम्मत एक आध्यात्मिक गुण है सो हर प्रगतिशील के लिए उसे अपनाना ही उचित है। हम अपने स्वरूप को समझें, निर्मल रहें--प्रगति के लिए पुरुषार्थ करने और अनौचित्य से जूझने के लिए साहस पूर्वक कटिबद्ध हों तो इसी में अपनी महानता है।

——— **'अपना उत्साह शिथिल न होने दें' पुस्तिका से**

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आलस्य त्यागें–सुसम्पन्न बनें

क्र० २२

छोटे से बीज में वृक्ष की विशालता सूक्ष्म रूप से छिपी रहती है। उसी प्रकार मानव-जीवन की महान सम्भावनाएं उसकी श्रमशीलता में छिपी हुई हैं। अगणित विभूतियाँ, समृद्धियाँ, सफलता और महान सम्भावनायें मानव-जीवन में सन्निहित हैं पर सभी सुप्त रूप में पड़ी हैं,उन्हें जगाने के लिए श्रमशीलता की आवश्यकता है। जिन्हें परिश्रम से प्रेम है, जो मेहनत करने में—व्यस्त रहने में—रस लेता है वह किसी भी दिशा में आशाजनक प्रगति कर सकता है। जिसने परिश्रम से जी चुराया उसके लिए प्रगति का हर द्वार बन्द होता चला जायगा।

आलस्य और दुर्भाग्य एक ही वस्तु के नाम हैं। जो आलसी है, न श्रम का महत्व समझता है, न समय का मूल्य–ऐसे मनुष्य को कोई सफलता नहीं मिल सकती। सौभाग्य का पुरुस्कार उनके लिए सुरक्षित है, जो उसका मूल्य चुकाने को तत्पर हैं। यह मूल्य कठोर श्रम के रूप में चुकाया जाता है। समय ही भगवान की दी हुई संपदा है। हमारी हर श्वाँस बड़ी मूल्यवान है। यदि प्रस्तुत क्षणों का ठीक तरह उपयोग करते रहा जाय तो बूँद-बूँद से घट भरने की तरह अगणित सफलतायें और समृद्धियाँ, अनायास ही इकट्ठी होने लगेंगी। पर यदि समय को आलस्य में व्यर्थ गँवाते रहा गया तो फूटे बर्तन में से बूँद-बूँद टपकने वाले दूध की जैसी दुर्गति होगी। हम सुख-सुविधाओं और सम्पदाओं से वंचित होते चले जायेंगे और केवल दरिद्रता और दुर्भाग्य भरा पश्चाताप हाथ रह जायगा। विजयलक्ष्मी केवल पुरुषार्थी का वरण करती है। आलसी का भविष्य तो दुर्भाग्य का रोना रोने के लिए है।

भगवान् ने मनुष्य जीवन में असंख्य महान् सम्भावनाओं का समावेश किया है। हर क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने की सुविधा प्रस्तुत की है, पर साथ ही यह भी नियन्त्रण रखा है कि उन विभूतियों का लाभ सत्पात्र ही उपलब्ध करें। सत्पात्रता का पहला चिन्ह है—श्रमशीलता। कई अनैतिक और असदाचारी भी सफलतायें प्राप्त कर लेते हैं, भले ही पीछे उन्हें कुमार्गगामिता का दण्ड भुगतना पड़े। पर संसार में एक भी उदाहरण ऐसा न मिलेगा, जिसमें परिश्रम के बिना बड़ी सफलतायें प्राप्त की गई हों। इसलिए सद्गुणों की पंक्ति में नैतिकता से भी पहला नम्बर श्रमशीलता का आता है।

जिन्हें अपना भविष्य उज्ज्वल बनाने में दिलचस्पी हो, जिन्हें कुछ महत्वपूर्ण सफलतायें पानी हों, उन्हें कठोर परिश्रम करने की आदत डालनी चाहिए और समय के एक-एक क्षण को व्यस्त रखने के लिए तत्पर रहना चाहिये। प्रगतिशील राष्ट्रों के नागरिक घोर परिश्रमी होते हैं। जिन समाजों ने अपना वर्चस्व प्रतिपादित किया है, उनका जातीय गुण कठोर श्रम करने में रस लेना रहा है। जिन व्यक्तियों ने उत्कर्ष किया है, उनने अपना एक-एक क्षण कड़ी मेहनत के साथ गुजारा है।

आलसी का भविष्य अन्धकारपूर्ण है। जिसे श्रम करने में रुचि नहीं, जो मेहनत से डरता है, आरामतलबी जिसे पसन्द है, जो समय को ज्यों-त्यों करके अस्त-व्यस्त करता रहता है, समझना चाहिए दुर्भाग्य उसके पीछे लग गया। वह कुछ उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकना तो दूर यदि संयोगवश उत्तराधिकार में कुछ मिल गया है तो उसे भी स्थिर न रख सकेगा। कहते हैं—लक्ष्मी आलसी के घर नहीं रहती और दारिद्रय वहीं घोंसला बनाता है, जहाँ आलस्य की सघनता छाई रहती है।

संसार में अनेक महत्वपूर्ण व्यक्तियों ने अनेक महान् महान् सफलतायें सम्पादित की हैं। उनमें मूलतः कोई विशेषता एवं प्रतिभा न थी। सामान्य मनुष्यों जैसा ही शरीर और मन उनका भी था, पर एक गुण उन्होंने अपने में उत्पन्न किया—श्रम में रस लेना और निरन्तर मेहनत में संलग्न रहना। बस इस एक गुण ने ही उनकी प्रतिभा को निखारा, अनेक सद्गुण पैदा किए और विद्या, बुद्धि, धन, अनुभव, स्वास्थ्य, सहयोग एवं सुविधा-साधनों से उन्हें भरा-पूरा बना दिया। जिस काम को हम मेहनत, लगन और दिलचस्पी के साथ हाथ में लेते हैं, वह चमकने लगता है। जिसे बेगार भुगतने की तरह आधे मन से करते हैं, वह बिगड़ता और घटिया होता है। यही प्रगति का रहस्य है। जो आगे बढ़ना चाहता हो, ऊँचा उठना चाहता हो, उसे यह गुरु-मन्त्र गांठ बाँध लेना चाहिए कि, "निरन्तर कठोर श्रम करने में रस लिया जाय और एक क्षण भी व्यर्थ बर्बाद न किया जाय।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आराम की ऐसी जिन्दगी जिसमें कुछ काम न करना पड़े केवल निर्जीव, निरुद्देश्य और निकम्मे लोग को रुचिकर हो सकती है। वे ही उसे सौभाग्य गिन सकते हैं। प्रगतिशील महत्वकांक्षी लोगों की दृष्टि में तो यह एक मानसिक रुग्णता मात्र है, जिसके कारण व्यक्ति का भाग्य, भविष्य, बल और वचस्व निरन्तर घटता ही जाता है। अपने देश का दुर्भाग्य श्रम के प्रति उपेक्षा करने की दुष्प्रवृत्ति के साथ आरम्भ हुआ है और वह तब तक बना ही रहेगा जब तक कि हम प्रगतिशील लोगों की तरह परिश्रम के प्रति प्रगाढ़ आस्था उत्पन्न न करेंगे।

अपने यहाँ लड़कियाँ वे सुखी मानी जाती हैं, जिन्हें हाथ से कुछ काम न करना पड़े। नौकर नौकरानी सब काम किया करें और उन्हें आराम के दिन गुजारने का अवसर मिले। ऐसी महिलायें सदा शारीरिक और मानसिक दृष्टि से रुग्ण ही बनी रहेंगी। प्रसव के समय उन्हें बहुत कष्ट सहना पड़ेगा। आये दिन जुकाम, बदहजमी, सिर-दर्द आदि दूसरी किस्म की बीमारियां घेरे रहेंगी। डाक्टरों के मँहगे बिल चुकाने पड़ेंगे और इन्जेक्शनों के दर्द—दण्ड सहने पड़ेंगे। श्रमशील महिलायें निरोग रहती और स्वस्थ एवं दीर्घजीवी सन्तानें उत्पन्न करती हैं। आरामतलबी को भ्रमवश सौभाग्य भले ही मान लिया जाय, अन्तः यह गरीब मजदूरों के पल्ले पड़ने वाली असुविधाओं से भी अधिक मँहगी पड़ती है।

अपने यहाँ रईस, अमीर, सन्त, महन्त, विद्वान, कलाकार अक्सर शारीरिक श्रम से बचना चाहते हैं, फलतः वे रुग्ण बने रहते हैं और प्रस्तुत प्रतिभा से जो अपना और दूसरों का हित साधन कर सकते थे, नहीं कर पाते। धोबी, मोची, राज, मजूर, चमार, कुम्हार, श्रमजीवी वर्ग को अपने यहाँ नीच समझा जाता है। मेहनत करने वाले नीच —आराम तलब ऊँच। इस मान्यता ने हमारे समाज में हरामखोरी को प्रोत्साहन दिया। फलस्वरूप हम दरिद्र होते चले गये। दूसरी ओर रूस, ब्रिटेन, जापान और अमेरिका आदि समृद्ध देशों के नागरिकों में कठोर श्रम में भारी अभि-रुचि लेने की प्रवृत्ति को देखते हैं तो सहज ही यह पता चल जाता है कि उनकी समृद्धियों और सफलताओं का कारण क्या है? हालैण्ड, डेनमार्क, यूगोस्लोविया आदि कितने ही देशों की समृद्धि वहाँ के महिला वर्ग की श्रमशीलता पर ही निर्भर है। हमें भी यदि वर्तमान अज्ञान और दरिद्रता के दुःखदायी चंगुल से छूटना हो तो देश के हर नागरिक में कठोर श्रम करने की—आलस्य से घृणा करने की—और समय का एक भी क्षण व्यर्थ न गँवाने की—प्रवृत्ति उत्पन्न करनी चाहिए।

हम विद्या से वंचित इसलिए नहीं रहते कि अमुक साधन नहीं। अशिक्षा का एक मात्र कारण इस ओर बरती जाने वाली उपेक्षा है। कोई व्यक्ति यदि एक दो घण्टा भी नियमित रूप से पढ़ने में लगाता रहे तो कुछ ही दिनों में अच्छा विद्वान बन जायगा। परिश्रमी मनुष्य कभी भूखा-नङ्गा नहीं रह सकता। उपार्जन के अनेक द्वार उद्योगी के लिए खुले रहते हैं। जो मेहनत करेगा, निरोग रहेगा। बेकार पड़े हुए चाकू को जंग खा जाती है, पर जो काम में आता रहता है, उसकी जिन्दगी बढ़ती है। तलवार वही तेज रहती और चमकती है, जो शान के पत्थर पर घिसी जाती है। हीरा खराद पर चढ़कर कीमती बनता है। जिसे चमकना हो—जीवन का वास्तविक आनन्द लेना हो—उसे चाहिए कि तन्मयता, तत्परता और मनोयोगपूर्वक सामने प्रस्तुत कार्यों को पूरी मेहनत और दिलचस्पी के साथ करना सीखे।

'खाली मस्तिष्क शैतान की दुकान' की कहावत सोलह आने सच है। जो फालतू बैठा रहेगा उसके मस्ति-ष्क में अनावश्यक और अवाँछनीय बातें घूमती रहेंगी और कुछ न कुछ अनुचित, अनुपयुक्त करने तथा उद्विग्न, संतप्त रहने की विपत्तियाँ मोल लेगा। जो व्यस्त हैं, उसे बेकार की बातें सोचने की फुरसत नहीं। गहरी नींद भी उसी को आती है, कुसङ्ग और दुर्व्यसनों से भी वही बचा रहता है। जो मेहनत से कमाता है, उसे फिजूलखर्ची भी नहीं सूझती। इस प्रकार परिश्रमी व्यक्ति अनेक दोष-दुर्गणों से बच जाता है।

प्रगतिशील वर्गों का जातीय गुण श्रमशीलता है। हमें अपने आपको कड़ी मेहनत करने का अभ्यस्त बनाना चाहिए। जो भी लक्ष्य प्रयोजन एवं कार्य सामने हों उनमें तत्परतापूर्वक दिलचस्पी के साथ लगे रहना चाहिए। एक क्षण का भी समय बर्बाद नहीं करना चाहिए। यदि यह प्रकृति अपने में—अपने परिवार में और अपने समाज में हम उत्पन्न कर सकें तो अगले दिनों हर दिशा में हम बहुत ही समृद्ध और समुन्नत बन सकते हैं।

 ——— 'आलस्य छोड़िए, परिश्रमी बनिए' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समय का सदुपयोग सफलता के लिए अमोघ वरदान

क्र० २३

समय मनुष्य जीवन की वह मूल्यवान सम्पत्ति है जिसकी कीमत पर संसार की कोई भी सफलता प्राप्त की जा सकती है। भगवान ने मनुष्य को अपने राजकुमार के रूप में भेजा है और साथ ही समय नाम की ऐसी बहुमूल्य सम्पदा प्रदान की है कि उसके बदले वह संसार का जो भी सुख वैभव चाहे खरीद सकता है।

मनुष्य का समय मनोयोग और परिश्रम के साथ जिस दिशा में भी लग जाय उसी में चमत्कार पैदा करेगा। संसार के महापुरुषों की प्रधान विशेषता यही रही है कि उन्होंने अपने जीवन का एक-एक क्षण निरन्तर काम में लगाये रखा है। वह भी पूरी दिलचस्पी और श्रमशीलता के साथ। यह रीति-नीति जो भी आदमी अपनाले और अपने जीवन-क्रम की दिशा निर्धारित करले वह हर क्षेत्र में सफलता की ऊँची मंजिल पर सहज ही पहुँच सकता है। मनुष्य की सामर्थ्य का अन्त नहीं, पर कठिनाई इतनी ही है कि वह चारों तरफ बिखरी, छितरी और अस्त-व्यस्त पड़ी रहती है। इसका एकीकरण, केन्द्रीकरण जो व्यक्ति कर लेगा अपनी प्रचुर शक्ति का परिचय सहज ही दे सकेगा। सूर्य की किरणें बिखरी पड़ी हैं इसलिए उनके महत्व का पता नहीं चलता पर यदि एक इंच परिधि में फैली हुई धूप को आतिशी शीशे द्वारा एक केन्द्र पर इकट्ठा कर लिया जावे तो तत्काल आग जलने लगेगी और उसे थोड़ा भी ईंधन मिल जाय तो भयंकर अग्निकाण्ड प्रस्तुत कर देगी। ठीक उसी तरह मनुष्य की बिखरी शक्तियों को यदि किसी विषय पर एकाग्रता और दिलचस्पी के साथ केन्द्रित कर दिया जाय और परिश्रम पुरुषार्थ पूर्वक तन्मयता के साथ जुट पड़ा जाय, तो आश्चर्यजनक सफलता सहज ही सामने उपस्थित हो सकती है।

यों देखते-देखते जिन्दगी के कितने वर्ष ऐसे ही हँसते, रोते, खाते, खेलते व्यतीत हो जाते हैं और शरीर यात्रा सम्पन्न करते चलने के अतिरिक्त और कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं हो पाता। पर यदि दिनचर्या बनाकर समय के एक-एक क्षण का ठीक तरह उपयोग करने वाला क्रम बना लिया जाय, तो पता चलेगा कि थोड़े ही समय में अभीष्ट दिशा में कितनी बड़ी प्रगति संभव हो जाती है। निरन्तरता और नियमितता के प्रतिबन्धों में बँधा हुआ समय कितनी अधिक प्रगति सम्भव कर सकता है, इस पर कहने सुनने से नहीं अनुभव करने से ही विश्वास होता है।

विदेशों में लोग अपने दैनिक कार्यों से निवृत्त होकर दो घंटा रोज रात्रि पाठशालाओं में पढ़ने जाते रहते हैं। मामूली श्रमिक और छोटी स्थिति के लोग यह क्रम चलाते रहने पर दस-बीस वर्ष में एम० ए० आदि की उच्च परीक्षाएँ पास कर लेते हैं। जर्मनी के प्रसिद्ध विद्वान एण्डरसन ने एक घण्टा रोज अन्यान्य भाषा सीखने के लिए निर्धारित किया, और वे तीस वर्ष में संसार की प्रायः सभी प्रमुख भाषाओं के विद्वान बन गए। अपने देश में सन्त विनोवा भावे २३ भाषाओं के विद्वान कहे जाते हैं। यह ज्ञान उन्होंने अपने व्यस्त कार्य-क्रम में से थोड़ा सा समय उपर्युक्त ज्ञान सम्पादन के लिए नियमित रूप से लगा कर ही उपलब्ध कर लिया। यह रास्ता हर किसी के लिए भी खुला पड़ा है।

आलस्य और प्रमाद में हम बहुत समय गँवाते हैं। जो काम जितनी देर में हो सकता है, सुस्ती और आधे मन से करने पर वह उससे दूने चौगुने समय में होता है। मुस्तैद और फुर्तीला मनुष्य एक घण्टे में दालरोटी बना खाकर निश्चित हो सकता है पर आलसी ढीला और मंदचर व्यक्ति उसी काम को अव्यवस्थित ढंग से करते रहने पर आधा दिन गुजार देगा। लोग ऐसे ही ऊँघते, सुस्ताते जैसे-तैसे करते धरते, छोटे-छोटे थोड़े से कामों में अपना सारा समय बर्बाद कर लेते हैं। जब कि मुस्तैद और समय का मूल्य समझने वाले व्यक्ति उतने से समय में दसगुने काम निपटा कर रख देते हैं। शिथिलता से समय सिकुड़ता और मुस्तैदी से फैलता है, रबड़ खींचने से लम्बी हो जाती है और छोड़ने से सिकुड़ जाती है। इसी प्रकार ढीले पोले मन और शरीर को लेकर काम करने से बहुत थोड़ा ही परिणाम निकलता है पर मन और शरीर को एक जुट करके उत्साह के साथ तत्परता दिखाई जाय तो थोड़े समय में कितना अधिक काम कितनी खूबसूरती के साथ सम्पन्न होता है उसका चमत्कार कहीं भी देखा जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समय के प्रतिफल का सच्चा लाभ उन्हें मिलता है जो अपनी दिनचर्या बना लेते हैं, और नियमित रूप से निरन्तर उसी क्रम पर आरूढ़ रहने का संकल्प लेकर चलते हैं। एक दिन एक सेर घी खालें और एक महीने तक जरा भी न खायें, एक दिन सौ दंड पेलें और बीसदिन तक व्यायाम का नाम भी न लें, तो उस ज्वार भाटे जैसे उत्साह के उठने व ठंडे होने से क्या परिणाम निकलेगा ? नियत समय पर काम करने से अन्तर्मन को उस समय वही काम करने की आदत भी पड़ जाती है और इच्छा भी होती है। चाय, सिगरेट, आदि नशे जो लोग नियमित रूप से पीते हैं उन्हें नियत समय पर उसकी तलब उठती है और न मिलने पर बेचैनी होती है। इसी प्रकार नियत समय पर कुछ काम करने का अभ्यास डाल लिया गया है तो उस समय वैसा करने की इच्छा होगी, मन लगेगा और काम ठीक तरह पूरा होगा। मंदी चाल से चलने वाले कछुए ने तेज उछलने वाले किन्तु क्षणिक उत्साही खरगोश से बाजी जीत ली थी। यह कहानी नियमित और निरन्तर काम करने वालों पर अक्षरशः लागू होती है। मंदबुद्धि और स्वल्प साधनों वाले कालीदास सरीखे लोगों ने एक कार्य में दत्तचित होकर नियमित रूप से निरन्तर काम करते रहने का क्रम बनाकर उच्चकोटि का विद्वान और कवि बनने में सफलता पाई। इस तरह की सफलता कोई भी प्राप्त कर सकता है। उसमें कोई जादू चमत्कार नहीं, केवल व्यवस्थित और नियमित रूप से मनोयोग पूर्वक क्रमबद्ध काम करने का ही प्रतिफल था। यह मार्ग कोई भी अपना सकता है और उन्नति के उच्च शिखर तक पहुँच सकता है।

सामान्यतः रोटी कमाने के लिये आठ घंटे, सोने के लिए सात घंटे, नित्य कर्म के लिए २ घंटे माने जायें तो कुल मिला कर १७ घंटे हुए। २४ घंटे में से भी ७ घंटे फिर भी बचते हैं, जो लगभग एक पूरे काम के दिन के बराबर होते हैं। व्यक्ति चाहे तो इन ७ घंटों को किसी भी अभिरुचि के विषय में लगाकर आशातीत सफलता प्राप्त कर सकता है। दो-तीन घटे नियमित व्यायाम में लगाने वाले कुछ ही दिन में पहलवान बन जाते हैं। दो-तीन घंटा रोज स्वाध्याय करने वाले अपने विषय में कुछ ही वर्षों में निष्णात हो जाते हैं। स्कूली परीक्षाऐं पास करते जाने के लिए सामान्य बुद्धि के व्यक्ति का तीन घंटे का परिश्रम काफी है। रोजी रोटी कमाते हुए उतना समय आसानी से निकाला जा सकता है। शर्त इतनी है कि किसी विषय में सच्ची रुचि हो और समय को नियमित रूप से लगाने का दृढ़ संकल्प कर लिया गया हो।

लोक सेवा, आत्मिक आकांक्षाओं की तृप्ति के लिए, जीवनोद्देश्य की पूर्ति के लिए, कुछ समय लगाया जाना आवश्यक है। यह भी यदि कोई चाहे तो इसी बचे हुए सात घंटे के समय में से आसानी के साथ लगा सकता है। पिछले स्वाधीनता संग्राम के नेताओं तथा कार्य कर्त्ताओं में से अधिकांश ऐसे थे जो अपनी रोजी रोटी भी कमाते थे और उस आन्दोलन में बढ़चढ़ हाथ बटाते थे। अभी भी युग-निर्माण आन्दोलन के अनेक कार्य कर्त्ता अत्यधिक व्यस्त कार्यक्रम में से बहुत सारा समय निकालकर उतना काम कर डालते है जितना कि पूरे आठ घंटे काम करने वाला कर्मचारी भी नहीं कर सकता। यह केवल लगन और मनोयोग का चमत्कार हैं। समय सबके पास २४ घंटे होता है। पर जो उसके सदुपयोग का महत्व समझते हैं। और थोड़े से भी समय की बर्बादी को अपनी भारी क्षति समझते हैं, उनके लिये उतने ही समय में आश्चर्यजनक मात्रा में काम कर सकना संभव होता है।

फुरसत न मिलने की बात का सिर्फ इतना ही तात्पर्य है कि उस कार्य में दिलचस्पी कम है अथवा हलके दर्जे का बेकार काम माना गया है। जिस काम को हम महत्वपूर्ण समझते हैं उसे अन्य कामों से आगे की पंक्ति में रखते हैं और उसके लिए पर्याप्त समय आसानी से निकल आता है। थकान भी उन्हीं कार्यों में आती है जिन्हें बेकार समझकर किया जाता है। किसान १४ घंटे काम करता है सो भी एक दिन नहीं जीवन भर। पान और दूध की दुकान वाले १४ घंटे दुकान खोले बैठे रहते हैं सो भी एक दिन नहीं जीवन भर। पर न उन्हें थकान आती है न ऊब, कारण उनकी दिलचस्पी भर है। यदि हम जीवनोत्कर्ष के महत्वपूर्ण कार्यों में दिलचस्पी पैदा करें तो उसके लिए समय की कमी न रहेगी। नियमितता और व्यवस्था से भरी दिनचर्या बनाकर कोई भी व्यक्ति समय का सदुपयोग कर सकता है और अभीष्ट दिशा में आश्चर्यजनक प्रगति कर सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अवरोध हमें अधीर न बनाने पावें

क्र० २४

भगवान ने यह संसार हमारे लिये ही नहीं बनाया इसमें अनेक लोगों का साझा है । सबको कुछ न कुछ सुविधायें मिल सकें, जिससे थोड़ा सन्तोष बना रहे और कुछ न कुछ असुविधाएँ भी बनी रहें, जिनको हल करने के लिये शारीरिक एवं मानसिक पुरुषार्थ में संलग्न रहें । लगता है यही तरीका मनुष्य की प्रगति और सुव्यवस्था के लिये ठीक जँचा होगा ।

हमारी इच्छानुसार सारी परिस्थितियाँ बनती चलें और हर आदमी हमारी मनमर्जी का बनकर रहे यह असम्भव है । धूप-छाँह की तरह—दिन और रात की तरह, हमारा जीवनरूपी वस्त्र सुविधा और असुविधा के, अनुकूलता और प्रतिकूलता, सफलता और असफलता के ताने-बाने से बुना हुआ है । सरसता और शोभा—प्रगति और स्पर्धा यहाँ इसी कारण है कि संसार में विशेषतायें बहुत हैं । यदि यहाँ केवल सुविधायें, सफलताऐं, अनुकूलताऐं ही बनाई गई होतीं और असुविधा, असफलता एवं प्रतिकूलता का किसी को सामना न करना पड़ता तो यह संसार बड़ा नीरस हो जाता । केवल मिठाई ही खाने को मिले, नमक, मिर्च, खटाई आदि कोई स्वाद चखने को न मिले तो भोजन का सारा आनन्द ही चला जाय । भगवान को अपना संसार सरस बनाना है, अतः उसमें प्रतिस्पर्धा, पुरुषार्थ, सूझ बूझ एवं संतुलन को विकसित करने के लिए ऐसी गुँजायश रखी है कि हर किसी को कुछ करने और कुछ सोचने की आवश्यकता अनुभव होती रहे । प्रगति का मार्ग संघर्ष हो तो है । संघर्ष परिस्थितियों में किया जाता है। यदि प्रतिकूलता न हो तो संघर्ष किससे किया जाय ? सूझ-बूझ, संतुलन एवं समाधान के लिये प्रतिभा कसे विकसित हो । इस आंतरिक विकास के बिना अपूर्णता से संघर्ष करते हुए पूर्णता का लक्ष्य कैसे पूरा हो ? उलझनों को सुलझाने के बहाने मनुष्य अपने बुद्धि-कौशल को बढ़ाने, संसार की वस्तुस्थिति को समझने, धैर्य और साहस का परिचय देने एवं परिस्थिति के अनुरूप अपने को लचकदार बनाने की महान मानसिक प्रगति उपलब्ध करता है । यही उपलब्धियाँ तुच्छ मनुष्य को महामानव बनाने एवं व्यक्तित्वको प्रखर एवं ज्योतिर्मय बनाने में समर्थ होती हैं । चाकू शान के पत्थर पर घिसे बिना न तो तेज होता है न चमकता है । कठिनाइयों, अभावों, प्रतिकूलताओं और संघर्षों का सृजन इसी लिये हुआ है कि उससे टकराकर मनुष्य अपनी क्षमता और प्रतिभा का विकास करते हुए आत्म-बल और मनस्विता की महान विभूतियाँ अधिकाधिक मात्रा में संग्रह करता रहे ।

देखा यह जाता है कि कितने ही व्यक्ति अपनी आकांक्षा पूरी न होने, तनिक सा व्यवधान आने पर बुरी तरह दुःखी होने लगते हैं । लगता है उन्हीं पर कोई बज्र गिरा हो । परीक्षा में फेल होने पर, मामूली-सा गृह कलह होने पर, व्यापार में घाटा आने पर, प्रतिस्पर्धा में पुरस्कृत न होने पर अधीर हो जाते हैं और उस असंतुलित स्थिति में घर छोड़कर निकल भागने, आत्म-हत्या करने के लिए उतारू हो जाते हैं । कइयों को छोटी-छोटी असफलतायें इतना निराश कर देती हैं कि वे फिर कुछ बड़ा काम करने की हिम्मत ही हार बैठते हैं । छुईमुई का पौधा किसी के उँगली छूने मात्र से मुरझा जाता है, दुर्बल मनःस्थिति के मनुष्य अवरोध का एक हलका झटका लगने मात्र से अपना अपना उत्साह खो बैठते हैं और फिर ऐसे खिन्न रहने लगते हैं मानो इसका सब कुछ डूब गया हो ।

कई व्यक्ति भविष्य की कठिनाइयों ,विपत्तियों की आशङ्कायें करके चिन्तित बने रहते हैं । मन में केवल कुकल्पनायें ही उठती रहती हैं । लगता रहता है मानो अब विपत्ति आई, अब मुसीबत में फँसे । कर्मक्षेत्र में प्रवेश करने वाला कभी अनुकूलता का लाभ लेता है और कभी प्रतिकूलता का सामना करता है । लाभ मिलने पर हर्षोन्मत्त होकर उछलने वाले और हानि होने पर सिर धुन-धुनकर रोने वाले लोग दयनीय हैं । प्रकृति उन्हीं को जीवित रखती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है जो अवरोधों का सामना करने में समर्थ हैं। गर्मी का सामना न कर सकने वाली घास अल्पायु होती है, और सर्दी का सामना न कर सकने वाले मक्खी-मच्छर बेमौत मरते हैं। जिन्हें केवल सफलता, केवल लाभ, केवल अनुकूलता ही चाहिये वे संघर्षशील संसार में अपनी समर्थता एवं दृढ़ता सिद्ध नहीं कर सकते और हवा के एक ही झोंके में इधर से उधर उड़ जाते हैं।

चिन्ता, भय, निराशा, आशङ्का एवं अधीरता की मानसिक दुर्बलतायें हमारा इतना अहित करती हैं जितना सौ शत्रु मिलकर नहीं कर सकते। दुर्बल मन सदा अन्धकारमय भविष्य और सम्भावित विपत्तियों की ही कुकल्पना करता रहता है और इस प्रकार की अशुभ विचारणायें मनुष्य को घबरा देने के लिये पर्याप्त हैं। आधी शक्ति आशङ्कायें खा जाती हैं। चिन्ता एक प्रकार की ठण्डी आग है जो मनुष्य को भीतर ही भीतर जलाती रहती है। आधी से अधिक आशङ्कायें निर्मूल होती हैं। साहसी व्यक्ति हिम्मत से काम लेते हैं, और सोचते हैं, जो होगा सो देखा जायगा। समय पर आगत कठिनाई का मुकाबला कर लेंगे। उसका कोई हल ढूँढ़ लेंगे। ऐसी हिम्मत वालों को यदाकदा ही सम्भावित आशङ्काओं से जूझना पड़ता है। यदि कोई अवरोध आ खड़ा भी हुआ तो उसे शान्ति चित्त, व्युत्पन्न मति एवं मानसिक सूझ बूझ से हल कर लेते हैं। धैर्यवान और साहसी मनुष्य मानसिक शक्ति के उस अपव्यय से बच जाते हैं जो सफलता का पथ प्रशस्त करने में महत्वपूर्ण योगदान करती है।

पेड़ की जड़ें निरन्तर बढ़ती हैं। रास्ते में कोई पत्थर आ जाता है और वे उसे तोड़कर पार नहीं कर सकतीं तो दूसरी ओर मुड़ जाती हैं, अपना रास्ता दूसरा बना लेती हैं। यह मुड़ने और बदलने की कला जिन्हें मालूम है वे लचकदार तरीका अपनाते हैं और अपने लिये दूसरा रास्ता तलाश कर लेते हैं। अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राहम लिङ्कन को अपने जीवन में १८ बार तिलमिला देने वाली असफलतायें मिलीं। कोई कमजोर तबियत का आदमी रहा होता तो टूट गया होता। निराश होकर हिम्मत खो बैठा होता। पर उन्होंने हर अवरोध के बाद दूनी-चौगुनी हिम्मत से काम लिया और अपनी रीति-नीति में जो परिवर्तन आवश्यक था सो तुरन्त कर लिया। एक व्यक्ति एक कार्य में आज असफल हुआ है तो वह सदा सब कार्यों में असफल ही नहीं होता रहेगा। दूसरे काम में उसकी प्रतिभा बड़े-बड़े चमत्कार दिखा सकती है। एक बार सफलता न मिली तो कई बार प्रयत्न किया जा सकता है। राजा ब्रूसो १३ बार लड़ाई में हारा किन्तु उसने हिम्मत न छोड़ी, चौदहवीं बार वह सफल हुआ। हर व्यक्ति के लिये मनोबल बढ़ाने का यही रास्ता है कि अवरोध या असफलता के आगे सिर न झुकाये, हिम्मत न हारे, वरन् दूने उत्साह और उल्लास के साथ आगे बढ़ें और उन त्रुटियों को दूर करें जिनके कारण पिछली बार सफलता न मिल सकी।

शोक-सन्ताप में व्यथित हो बैठना व्यर्थ है। इस संसार का यही क्रम है कि एक की हानि दूसरे का लाभ बनती रही है। एक घर के बच्चे के जन्म की खुशी तभी मनाई जा सकेगी जब किसी के घर मृत्यु का शोक छाये। एक तभी जीतेगा जब कोई दूसरा हारे। हार-जीत की आँख-मिचौनी यहाँ अनादि काल से चलती रही है। ताश की बाजी की तरह जो उसमें क्षुब्ध नहीं होते केवल आनन्द भर लेते हैं ऐसे ही खिलाड़ी की मनोवृत्ति रखने वाले लोग हँसते और हँसाते हुए आनन्द और सन्तोष का जीवन जी सकते हैं।

हमें सफलता की बड़ी-बड़ी आशायें रखनी चाहिये और मनोरथों की पूर्ति के बड़े-बड़े सपने देखने चाहिये पर साथ ही इसके लिये तैयार रहना चाहिये कि बुरी से बुरी परिस्थितियों का सामना करना पड़े। दिन और रात का—सर्दी और गर्मी का अपना-अपना आनन्द है। सफलता और असफलता भी अपनी-अपनी विशेषतायें और विभूतियों से सम्पन्न हैं। सफलतायें जहाँ हमारा उत्साह बढ़ाती हैं और प्रगति के लिये सुविधायें उत्पन्न करती हैं वहाँ असफलतायें हमारे धैर्य, साहस, सन्तुलन, पौरुष और विवेक को चुनौती देकर हमारा आत्म बल बढ़ाती हैं, जो किसी भी साधारण सफलता की अपेक्षा कहीं अधिक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सिद्ध होती हैं।

'प्रतिकूल परिस्थितियों में उद्विग्न न हों' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवेश-ग्रस्त न हों—शांति और विवेक से काम लें

क्र० २५

शरीर में बुखार आने पर उसका तापमान बढ़ जाता है और कई तरह की विकृतियाँ-गड़बड़ियाँ पैदा हो जाती हैं। देह जलती है, प्यास लगती है, सिर दर्द होता है, पैर भड़कते हैं, नींद नहीं आती, भूख नहीं लगती, बेचैनी होती है आदि कितने ही कष्ट कारक लक्षण होने से रोगी को बुखार के कारण बहुत असुविधा होती है। कमजोरी बहुत आ जाती है, कुछ काम करते नहीं बन पड़ता, सोचना और बोलना भी ठीक तरह सम्भव नहीं होता। इस कमजोरी और शारीरिक अस्त व्यस्तता की क्षति-पूर्ति काफी समय लेकर आती है। थोड़े दिन का बुखार भी देह को तोड़-मोड़ कर रख जाता है।

शरीर की तरह मन, मस्तिष्क को भी बुखार आता और वह शरीरगत उस बुखार व्यथा की अपेक्षा अधिक हानिकारक सिद्ध होता है। इस सन्तान का नाम है—'आवेश' तनिक-सी बात पर उत्तेजित हो जाना और मानसिक सन्तुलन खो बैठना, आवेश में भरा जाना, मस्तिष्क को बुखार चढ़ जाना ही कहा जायगा। मनुष्य का जीवन क्रम और संसार का क्रिया-कलाप कुछ ऐसे ही ढंग का है कि इसमें हर बात अपनी इच्छानुकूल नहीं हो सकती। दूसरे लोग वही करें जो हम चाहते हैं, वे अपने स्वभाव और संस्कार को हमारी मन-मर्जी के अनुरूप तत्काल बदल लें, यह आशा करना अनुचित है।

जो उपरोक्त वास्तविकता को नहीं समझते, वे तनिक-सी प्रतिकूलता आने पर, मर्जी से भिन्न किसी का व्यवहार देखकर आग-बबूला हो उठते हैं, आवेश में आ जाते हैं और मानसिक संतुलन खोकर इतने विक्षुब्ध हो जाते हैं कि अपने को—सम्बन्धित व्यक्तियों तथा समीपवर्ती वातावरण को अस्त-व्यस्त बनाकर ही रहते हैं।

आवेश एक प्रकार का मस्तिष्कीय बुखार है। इसे मानसिक दुर्बलता भी कह सकते हैं। उत्तेजना सारे आन्तरिक ढाँचे को लड़-खड़ाकर रख देती है। क्रोध का आवेश जब चढ़ता है, तब मनुष्य आधा पागल जैसा हो जाता है। इनके हावभाव, चेष्टायें, मुख-मुद्रायें ऐसी हो जाती हैं, जैसे वह आपे से बाहर हो। न सोचने लायक बात सोचता है और न बोलने लायक वाणी बोलता है, कटुता, व्यङ्ग, तिरस्कार, अहङ्कार, अशिष्टता आदि न जाने कितने विष उसमें घुले रहते हैं। दूसरों का राई भर दोष पर्वत जैसा दीखता है, बहुत बार तो उस आवेश-ग्रस्त स्थिति में इतनी कुकल्पनायें और आशङ्कायें उठती हैं कि दूसरा बुरे-से-बुरा दीखने लगता है। और प्रतीत होता है, मानो उसने जान-बूझकर द्वेषवश हानि पहुँचाने या नीचा दिखाने के लिये ही सब कुछ किया है। मस्तिष्क उत्तेजना में सही बात सोच नहीं पाता, वस्तुस्थिति समझने और वास्तविकता जानने की बुद्धि ही नहीं रहती। अस्तु, सामने वाला दोषी ही नहीं शत्रु भी दीखता है और जिस प्रकार किसी पर आक्रमण किया जाता है, उसी तरह की गतिविधियाँ बन जाती हैं। इससे सामने वाले को भी प्रत्युत्तर और प्रतिशोध में खड़ा होना पड़ता है। बात बढ़ती है और कई बार तनिक-सी बात पर इतना बड़ा विग्रह खड़ा हो जाता है कि उसकी क्षति-पूर्ति कर सकना कठिन हो जाता है। मित्र शत्रु बन जाते हैं और जहाँ से सहयोग की आशा थी, वहाँ से विरोध और अवरोध प्राप्त होने लगता है इन परिस्थितियों में कई बार ऐसा कटु व्यवहार बन पड़ता है, जिसका घाव आजन्म नहीं भरता और अपने पराये हो जाते हैं।

आवेश में दुर्व्यवहार करके दूसरों को जितनी क्षति पहुँचाई जाती है, उससे बहुत गुनी अपनी हो जाती है। किसीके बुखार से घर परिवार वालों को जितनी कठिनाई उठानी पड़ती है, उससे कहीं अधिक हानि अपनी करता है। इसी प्रकार आवेशग्रस्त क्रोध में दूसरों को जितनी चोट पहुँचाता है, उससे कहीं अधिक हानि अपनी कर लेता है। शरीर विष से भर जाता है और अगणित मस्तिष्कीय तथा नाड़ी संस्थान के रोग उठ खड़े होते हैं। एक घण्टे के क्रोध में एक दिन के तेज बुखार से अधिक शक्ति नष्ट होती है। क्रोधी व्यक्ति कभी पनपता नहीं। उसकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवन शक्ति आवेश की आग में ही जलती, भुनती रहती है और ठीक तरह सोच सकने की क्षमता दिन-प्रति-दिन कम होने लगने से वह अर्ध-विक्षिप्त एवं सनकी जैसी मनोदशा में जा पहुँचता है ।

उचित यह है कि हम सन्तुलित स्वभाव रखना सीखें । यदि किसी का व्यवहार अप्रिय है तो तलाश करें कि उसमें उसका कितना दोष था । कई बार परिस्थितियाँ, मजबूरियाँ एवं वस्तुस्थिति समझने की भूल के कारण लोग ऐसी गलतियाँ कर बैठते हैं, जिनसे पीछे तो पछताते हैं पर समय पर वैसी कल्पना नहीं होती । मनुष्य जहाँ श्रेष्ठ है, वहाँ त्रुटियों और दुर्बलताओं से भी भरा है । पूर्ण निर्दोष, परम सज्जन एवं निर्भ्रान्ति व्यक्ति आज तक इस संसार में पैदा नहीं हुआ । आगे अभी हो सकेगा इसकी संभावना कम ही है । इस वास्तविकता को समझते हुए यदि हमें इसी संसार में रहना है तो काम चलाऊ समझौता की नीति अपना कर ही चलना होगा । अप्रिय व्यवहार जिनका लगता हो उनसे शान्ति और प्रेम पूर्वक वस्तुस्थिति पूछनी चाहिये और जो कारण रहा हो उसकी हानि समझा कर उसे उसके लिये तैयार करना चाहिये कि भविष्य में वैसी गलती न करे । यदि हमें ही समझने में भूल हुई है और कुछ का कुछ समझ लिया है तो अपनी भूल तुरन्त स्वीकार करने और सुधारने को तैयार रहना चाहिये । सज्जनता की पहिचान सन्तुलन से की जाती है । दूरदर्शी, विवेकवान् व्यक्ति की पहिचान यह है कि वह तर्क और विवेक से काम लेता है । अप्रिय प्रसंगों के कारण बारीकी से ढूँढ़ता है और उनके समाधान का शांत चित्त से उपाय निकालता है । हर रोग की दवा है और हर अप्रिय प्रसङ्ग का समाधान । सज्जन समाधान ढूँढ़ते हैं और उसे निकालकर रहते हैं । वे जानते हैं कि क्रोध और आवेश से, लड़ाई-झगड़े से, कटु वचन और अशिष्टता से कोई प्रयोजन पूरा नहीं होता— उलटी उलझनें बढ़ती हैं ।

जिस व्यक्ति के दुर्व्यवहार से या भूल से हमें चोट पहुँचती है उसके सम्बन्ध में यही सोचना चाहिये कि यह अपनी भूल सुधार कर भविष्य में हमारे अनुकूल हो जाय । इसके लिये क्रोध या दुर्व्यवहार करना व्यर्थ है । आतंक और आक्रमण से रोष और विक्षोभ से सम्भव है सामने वाला कुछ समय के लिये चुप हो जाय या डरकर सहमत हो जाना स्वीकार करले । पर यह केवल उतनी बाह्य प्रक्रिया मात्र ही होगी । भीतर से रोष की प्रतिक्रिया निश्चित रूप से प्रतिकूल ही होगी । प्रताड़ना और तिरस्कार को वह घायल साँप की तरह चोट को भीतर ही छिपाये रहेगा और जब अवसर मिलेगा उस दुर्व्यवहार का बदला लेगा । सुधार के लिये सज्जनतापूर्ण सद् व्यवहार ही कारगर उपाय है । क्रोध का उद्देश्य यदि भूल करने वाले को सुधारना और क्षति की पूर्ति करना हो तो समझ लेना चाहिए कि यह तरीका गलत है जो बात हम चाहते हैं, वह तो गलती करने वाले को अनुकूल बनाकर ही पूरी हो सकती है और उसके लिये जो भी उपाय कारगर होंगे, वे निश्चित रूप से क्रोध के अतिरिक्त ही कोई होंगे ।

शारीरिक स्वास्थ्य की तरह हमें मानसिक स्वास्थ्य का भी ध्यान रखना चाहिए । अन्यथा मानसिक रुग्णता हमारे लिये रोगी शरीर से भी अधिक घातक सिद्ध होगी । मनोविकारों में सर्व प्रथम है क्रोध । भय सबसे बुरे किस्म का रोग है । चोरी, छल, बेईमानी, व्यभिचार, आदि से दूसरों को अधिक हानि होती है । अपनी पीछे भले ही होती रहे पर तत्काल तो कुछ लाभ ही होता है किन्तु क्रोध से सारी-की-सारी हानि अपनी ही है । लाभ रत्ती भर भी नहीं । खून अपना सूखा, मस्तिष्क अपना खराब हुआ, स्वास्थ्य गिरा, शत्रुता बढ़ी और जो चाहते थे, उससे ठीक उल्टी प्रतिक्रिया हुई । इन सब बातों का ध्यान रखते हुये हर विवेकवान् व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि आत्म-निरीक्षण करके हम यह देखें कि अपना मानसिक सन्तुलन सही रहता है या नहीं । लोग बुरे हैं, गलती करते हैं तो उनके दण्ड के लिये प्रेम और सहानुभूति के साथ उनकी कठिनाई समझनी चाहिए और सदाशयता एवं सज्जनता के साथ यह बताना चाहिए कि क्या न करके क्या किया जाना चाहिये था । अपना सन्तुलन बनाए रहकर शांति-चित्त सौम्य मुद्रा हितैषी, मित्र के रूप में यदि कुछ परमार्थ किया जायगा तो गलती करने वाले अपने को बहुत कुछ सुधार लेंगे और यदि अपनी ही भूल से दूसरों की गलती मान ली गई है तो विवेक उसे भी सुधार देगा और क्रोध का कोई कारण शेष न रह जायगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विचार शक्ति का महत्व समझें और सदुपयोग करें । क्र० २६

मनुष्य का विकास और भविष्य उसकी मनः स्थिति पर निर्भर है । जैसा बीज होगा वैसा ही पौधा उगेगा । जैसे विचार होंगे वैसे कर्म बनेंगे । जैसा कर्म करेंगे वैसी परिस्थितियाँ बन जायेंगी । भली बुरी परिस्थितियाँ अनायास ही सामने नहीं आ खड़ी होतीं । उनका अपने कर्तव्य से बड़ा सम्बन्ध होता है । वृत्तियों की प्रतिक्रिया परिस्थितियों के रूप में सामने आती हैं । यह तथ्य है कि कृतियाँ अनायास ही नहीं होने लगतीं वरन चिरकाल से मन में स्थित विचार पद्धति का परिणाम होती हैं ।

वास्तविक पूँजी धन नहीं विचार है । वास्तविक शक्ति साधनों में नहीं, विचारों में सन्निहित है । व्यक्तित्व का निखार विचार शीलता पर अवलम्बित है । सोचने के ढंग से जीवन को दिशा मिलती है और दिशा निर्धारण पर भविष्य का भला बुरा होना निश्चित है । सच तो यह है कि आज कोई व्यक्ति जिस भी स्थिति में है वह उसके अब तक के विचारों का ही परिणाम है । और भविष्य में जैसा कुछ बना सकेगा उसका आधार उसकी विचार शैली ही होगी ।

कहा जाता है कि खोपड़ी में मनुष्य का भाग्य लिखा रहता है । इस भाग्य को ही कर्म लेख भी कहते हैं । मस्तिष्क में रहने वाले विचार ही जीवन का स्वरूप निर्धारित करते और सम्भावनाओं का ताना बाना बुनते हैं । इसलिए प्रकारान्तर से भी यह बात सही है कि भाग्य का लेखा जोखा कपाल में लिखा रहता है । कपाल अर्थात् मस्तिष्क । मस्तिष्क अर्थात् विचार । अतः मानस शास्त्र के आचार्यों ने यह उचित ही संकेत किया है कि भाग्य का आधार हमारी विचार पद्धति ही हो सकती है । विचारों की प्रेरणा और दिशा अपने अनुरूप कर्म करा लेती है । इसलिए करम में लिखा हो, जैसी भाषा का प्रयोग पुरातन पंथ से करते हुए भी तथ्य यही प्रगट होता है कि कर्तृत्व अनायास ही नहीं बन पड़ता उसकी पृष्ठभूमि विचार शैली के अनुसार धीरे-धीरे मुद्दतों में बन पाती है ।

हाड़ मांस के खोखले में जो जादू भरा है वह उसकी विचार शक्ति ही है । अब तक के मानवीय विकाश का सारा श्रेय उसकी उसी विशेषता को दिया जा सकता है । आज व्यक्ति की स्थिति क्या है ? उसे देखकर उसके भूतकाल की विचार शैली को बताया जा सकता है । और आगे उसका भविष्य क्या होगा ? इसकी भविष्य वाणी इस आधार पर की जा सकती है कि उसका विचार प्रवाह किस दिशा में प्रवाहित हो रहा है । मोड़ आने पर परिवर्तन हो सकता है । वह चमत्कार भी विचार परिवर्तन का ही माना जायगा । विचार निस्संदेह मनुष्य जीवन का अतिशय महत्व पूर्ण तथ्य एवं ईश्वरीय अनुदान है इसे यदि ठीक तरह संभाला सुधारा जा सके तो नर पशु या नर पिशाच की स्थिति में पड़ा हुआ व्यक्ति देखते-देखते महामानवों की पंक्ति में खड़ा हो सकता है । महत्वपूर्ण सफलताओं का अधिकारी बन सकता है और उज्ज्वल व्यक्तित्व उपलब्ध करके अपना ही नहीं असंख्य, अनेकों का भी उद्धार उत्कर्ष कर सकता है । मानव के भौतिक शरीर में दिव्य तत्व का जो महान अंश विद्यमान है उसे 'विचार' ही कहा जा सकता है । अध्यात्म की भाषा में उसे ही मन बुद्धि, चित्त, अहंकार का अन्तःकरण चतुष्टय कहते हैं ।

अध्यात्म का सारा ढाँचा हमारी विचारणा, मान्यता, आस्था निष्ठा और आकांक्षा को परिष्कृत करने के लिए ही खड़ा किया गया है । ईश्वर कर्मफल, पुनर्जन्म, पाप, पुण्य, स्वर्ग नरक आदि की मान्यतायें और पूजा उपासना, धर्म कर्म आदि के सारे कर्मकाण्ड, धर्मानुष्ठान इसी प्रयोजन के लिए विनिर्मित हुए हैं कि आदमी के सोचने का ढंग उच्च आदर्शों पर अवलम्बित हो । कथा वार्ता स्वाध्याय, सत्संग धारणा, ध्यान शास्त्रदर्शन के पीछे छिपे तथ्य को समझा जाय तो उसका मूल प्रयोजन विचारों को अस्तव्यस्त दिशा में भटकने न देकर उन्हें सुसंस्कृत बनाने का ही दृष्टिकोण होगा । लोग स्वास्थ्य, शिक्षा, धन-वैभव, प्रभाव, पद आदि सम्पत्तियों का महत्व तो जानते हैं पर न जाने क्यों अभी तक यह समझ नहीं पाये कि वास्तविक सम्पदा तो विचारणा ही है और उसी के बल पर विभिन्न स्तर की सफलताओं तथा समृद्धियों का ताल मेल बैठता है ।

हमें अत्यन्त बारीकी के साथ अपनी विचार श्रृङ्खला पर गौर करना चाहिए और यह देखना चाहिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कि उनका स्तर क्या है यह प्रवाह किस दिशा में बह रहा है। यदि वासना, तृष्णा, क्रोध, लालच, आवेश, ईर्ष्या, द्वेष, अंहकार जैसी आकांक्षाओं की प्रधानता है तो समझना चाहिये कि हमें उलझाने वाली परिस्थितियों में जकड़ा रहना पड़ेगा। अपने दोष दुर्गुणों को समझने और उन्हें सुधारने की आकांक्षा यदि जाग पड़े तो समझना चाहिये कि विचारों का महत्व समझ में आने लगा। कुविचार और असंस्कृत विचार ही मनुष्य के सबसे बड़े शत्रु हैं। और वे ही पतन के गर्त में गिराते तथा प्रगति के पथ में अवरोध उत्पन्न करने के कारण हैं इसलिये दूरदर्शी लोग अपनी परिस्थिति को सुधारने से पूर्व मानसिक स्थिति को निष्पक्ष भाव से समझने और तीखी दृष्टि से यह देखने की कोशिश करते हैं कि किन अवांछनीय, असामाजिक और अनैतिक विचारों ने मनोभूमि पर कब्जा जमा रखा है। जिस प्रकार शत्रुओं और दुष्टों द्वारा अपने ऊपर होने वाले आक्रमणों को निरस्त करने के लिये हम सतर्कता बरतते और सुरक्षात्मक तैयारी करते हैं उसी प्रकार कुविचारों की मन क्षेत्र में कितनी जड़ जम गई हैं उसे देखने और उखाड़ने के लिये प्रबल प्रयत्न किया जाना चाहिये। आत्मशोधन को सबसे बड़ा पुरुषार्थ माना गया है। जिससे चित्तवृत्तियों की चंचलता और कुपथगामिता पर नियंत्रण कर लिया जाना चाहिये। बाहरी शत्रुओं से निपटना सरल है क्योंकि वे दिखाई पड़ते हैं किन्तु आन्तरिक शत्रु समझ में नहीं आते, दीखते भी नहीं, इसलिये उनकी ओर ध्यान भी नहीं जाता और निपटने की आवश्यकता भी अनुभव नहीं होती इसी उपेक्षा में वे अपनी जड़ें गहराई तक जमाते चले जाते हैं और क्रमशः सारे चिन्तन तंत्र पर कब्जा करके मनुष्य को गई गुजरी स्थिति में ला पटकते हैं।

जिस प्रकार हम दूसरे लोगों की समीक्षा करते हैं दोष ढूढ़ते और आलोचना निन्दा किया करते हैं। इसी तरह वरन् उससे भी अधिक कड़ाई के साथ अपने विचार संस्थान की—गुण कर्म, स्वभाव की परख करनी चाहिये। यह क्रम आत्म चिन्तन के लिये एक नियत निर्धारित समय पर नित्य ही चलाना चाहिये। असत्य, छल, निष्ठुरता, व्यभिचार, बेईमानी आदि असामाजिक अपराधों पर ही नहीं आलस्य, प्रमाद, आवेश, असहिष्णुता, कटुभाषण अशिष्टता अधीरता, चिन्ता, निराशा कायरता आदि व्यक्तिगत दुर्गुणों पर भी नजर रखनी चाहिये और उन्हें हटाकर प्रतिपक्षी सद्विचारों और सद्भावना को मनोभूमि में प्रतिष्ठापित करने का वैसा ही प्रयत्न करना चाहिए जैसे चतुर किसान अपने सबसे अच्छे खेत में सबसे अच्छा बीज बोकर सबसे अच्छी फसल उगाने का लाभ प्राप्त करता है।

चोर पर निगाह रखने में उसे चोरी करने का अवसर नहीं मिलता और अपनी हानि बच जाती है। उसी प्रकार अपने अनुदार दुर्गुणों पर भी सतर्क रहा जाय और उनके आक्रमण का अवसर न आने देने के लिये पहले से ही सावधानी रखी जाय तो वे ईधन न मिलने पर बुझ जाने वाली आग की तरह समाप्त हो जाते हैं जो विचार अभ्यास में आते-और क्रियान्वित होते हैं उन्हीं की जड़ जमती है। बुरे विचारों को चित्त क्षेत्र में प्रवेश न करने दिया जाय—करें तो उनके स्थान पर तुरंत प्रतिरोधक उच्च विचार प्रस्तुत कर दिये जायँ तो चोर जैसी स्थिति के आसुरी विचारों को पलायन करते ही बनेगा। वे तभी तक ठहरते हैं जब तक कि उनका प्रबल प्रतिरोध नहीं होता, श्रेष्ठ विचारों को चिन्तन क्षेत्र में स्थान मिले और उन्हें कार्यान्वित होने के अवसर मिलते रहें तो कोई कारण नहीं कि वे हमारे गुण, कर्म, स्वभाव, सम्मिलित--हो जायँ और उज्ज्वल भविष्य के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत न करें।

विचार निर्माण में सहायता करने वाले सत्साहित्य का क्रमवद्ध स्वाध्याय इस प्रयोजन के लिये नितान्त आवश्यक है। सद्विचार सम्पन्न, चरित्रवान उत्कृष्ट गतिविधियों में संलग्न व्यक्तियों का सत्संग भी बहुत सहायक सिद्ध होता है। भूलों के लिये अपने आपको एकान्त में कान ऐंठने, उठक बैठक करने, चांटे लगाने, मुर्गा बनने, भोजन में कटौती करने जैसे शारीरिक दंड दिये जा सकते हैं। अगले दिन उन पिछले दिन वाली भूलों को न देने के लिये प्रातः काल में ही निश्चय कर लिया जाय, दिन भर सतर्कता रखी जाय और रात को भूलों का लेखा जोखा लेकर प्रायश्चित किया जाय तो यह प्रक्रिया थोड़े ही दिनों में हमारी विचार शक्ति को परिष्कृत कर देगी। विवेक, औचित्य, तर्क, प्रमाण वस्तुस्थिति का निष्पक्ष भाव से पता लगाने का क्रम यह चलता रहे तो बहुत सी भ्रांतियाँ सहज ही दूर हो सकती हैं। और सुसंतुलित विचारणा के आधार पर शान्ति, समृद्धि, प्रगति, और महानता की दशा में तेजी से बढ़ा जा सकता है।

 'विचारों की उत्कृष्टता प्रगति का मूल मंत्र' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

—आरोग्य रक्षा के लिए संतुलन आवश्यक है--

क्र० २७

भौतिक या आध्यात्मिक कोई भी पुरुषार्थ स्वस्थ शरीर से ही सम्भव है । शारीरिक सामर्थ्य बनाये रहकर ही हम जीवितों में गिने जा सकते हैं । अस्वस्थ, रुग्ण और दुर्बल तो अर्धमृतक ही बने रहते हैं । देहगत पीड़ा के साथ असफलता और असमर्थता की मनोव्यथा भी जुड़ी रहती है । अस्तु उचित यही है कि स्वास्थ्य के सम्बन्ध में उपेक्षा न बरती जावे ।

स्वास्थ्य दवा दारू पर निर्भर नहीं है । वह पैसों से भी नहीं खरीदा जा सकता, कीमती चीजें खाकर आरोग्य रक्षा की बात सोचना भी व्यर्थ है । यह सुरक्षा तो आहार, बिहार, श्रम सन्तुलन पर निर्भर रहती है । जो इनकी विधि व्यवस्था बनाये रहता है वही स्वास्थ्य का आनन्द लेता है और वही कमजोरी एवं बीमारी से अपनी रक्षा करने में समर्थ होता है ।

काम में न आने वाले चाकू को जङ्ग खा जाता है, काम में न आने से शरीर भी अपनी क्षमता खो बैठता है । जो खाते हैं, उसे पचाने एवं शरीर के कलपुर्जों को गतिशील बनाये रखने के लिए परिश्रम करते रहना आवश्यक है । जो कड़ी मेहनत करते हैं, उनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग मजबूत बनते हैं जब कि आरामतलब और काम-चोरों की काया अशक्त होती चली जाती है न उनका अन्न पचता है और न गहरी नींद आती है । अभ्यास न होने से जरा-सा काम आ पड़ने पर थक जाते हैं । बाहर से ठीक दिखते हुए भी कड़ी मेहनत न करने वाले लोग भीतर से खोखले होते चले जाते हैं, भूख घटती है और रस रक्त भी कम बनता है । उतने भर से जीवन यात्रा को दूर तक खींचते ले जाना सम्भव नहीं रहता । आरामतलबी एक अभिशाप है । शारीरिक मेहनत से जी चुराना और अस्वस्थता को आमन्त्रण देना एक ही बात है ।

लोग दिमागी काम को महत्व देने और शारीरिक मेहनत की उपेक्षा करने लगे हैं । लिखा-पढ़ी देर तक करते रहना पसन्द है, पर देह का श्रम बेइज्जती की निशानी मानी जाती है । पुरुष खेतीवाड़ी आदि कड़ी मेहनत के कार्यों से बचना और कलम घिसने की नौकरी करना पसन्द करते हैं । महिलायें चक्की पीसने जैसे पसीना लाने वाले कार्यों से कतराती हैं, उन्हें करने में अपनी हेटी समझती हैं । यही कारण है कि सार्वजनिक स्वास्थ्य दिन-दिन गिरता चला जाता है, और लोग बीमारी व कमजोरी के चंगुल में बुरी तरह ग्रसित होते चले जा रहे हैं ।

स्वास्थ्य रक्षा के लिए यह नितान्त आवश्यक हो गया है, कि हर किसी के मन में शारीरिक श्रम की महत्ता एवं उपयोगिता भली प्रकार बैठा दी जावे । उसके बिना न हमारी गरीबी दूर होगी न बेकारी । न बीमारी से बचेंगे न कमजोरी से । प्रगति तथा सफलता पाने के लिए परिश्रम और पुरुषार्थ आवश्यक है, और इसे वही कर सकता है जिसके शरीर में पर्याप्त सामर्थ्य है । उक्त तथ्य जिस दिन हमारी समझ में आयगा, उसी दिन से शारीरिक श्रम व व कड़ी मेहनत के पसीना बहाने वाले कार्यों के प्रति रुचि पैदा हो जावेगी । उन्हें आरोग्य का मूल समझते हुए अपनी नियमित दिनचर्या में उपयुक्त स्थान दिया जाने लगेगा । शरीर उचित परिश्रम से घिसता नहीं वरन् सशक्त और मजबूत ही होता है । आलसी मन इसे स्वीकार न करे तो भी उसे बलपूर्वक समझाना चाहिये । स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन की सम्भावना देहगत परिश्रम पर बहुत कुछ निर्भर करती है । मेहनत से बचने का दण्ड मनुष्य को बीमारी व कमजोरी से उत्पन्न परेशानियों के रूप में भुगतना पड़ता है ।

पशु-पक्षी अपने आहार की खोज में, विनोद के लिए स्वभावतः इधर-उधर भागते दौड़ते हैं, फलतः उनका शरीर सुदृढ़ और समर्थ बना रहता है । प्रकृति की इच्छा यही है, कि हर जीव कड़ी मेहनत का अभ्यासी बने और स्वास्थ्य एवं पूर्ण आयुष्य का सुख भोगे । मानसिक श्रम से अधिक पैसा कमाया जा सकता है, पर शारीरिक श्रम की अपनी उपयोगिता है । कम कमाया जाय या न कमाया जाय तो भी स्वास्थ्य व आरोग्य की दृष्टि से मेहनत हर हालत में करनी चाहिये जिससे पसीना निकले और गहरी नींद का आनन्द मिले ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिन्हें सुविधा हो, व्यायामशाला जाकर दण्ड बैठक, डम्बल, मुग्दर, कुश्ती आदि का व्यायाम करें। जिनमें नर नारी बाल वृद्ध सभी को अपने-अपने साथियों के साथ खेलने-कूदने, भागने-दौड़ने ड्रिल, कवायद, लाठी बनेठी चलाने आदि का शिक्षण प्राप्त करके मनोरंजन एवं स्वास्थ्य संवर्धन का अवसर मिले, ऐसे सङ्गठित प्रयत्न आज की महती आवश्यकता है। समाजसेवियों को जगह-जगह ऐसी व्यवस्थायें बनानी चाहिए। व्यक्तिगत रूप से आसन प्राणायाम, सूर्य नमस्कार आदि किये जा सकते हैं। सवेरे ३—४ मील तेज चाल से भ्रमण सामान्य स्वास्थ्य और शरीर वाले के लिए उपयोगी है। जिनका धन्धा बैठे ठाले का है, उनके लिए तो टहलने का व्यायाम नितान्त आवश्यक है। घर के पास पौधे लगाकर उनकी गुड़ाई, निराई, सिंचाई का काम भी किया जा सकता है। महिलायें कपड़े धोने, चक्की चलाने जैसे पसीना बहाने वाले कार्य स्वयं कर सकती हैं। स्वेटर बुनने, भोजन बनाने जैसे कार्यों में कड़ी मेहनत और सारे शरीर के अङ्गों का संचालन न होने से शारीरिक परिष्कृतता का उद्देश्य पूरा नहीं होता। शरीर के हर अंग को पूरी मेहनत मिले और पसीना निकले ऐसा कार्य हर व्यक्ति को अपने लिये निकाल ही लेना चाहिए। स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि से यह प्रक्रिया अति आवश्यक है।

स्वास्थ्य को चौपट करने वाले मनोविकारों से सतर्कता पूर्वक बचना चाहिए। बुखार, खाँसी, जुखाम आदि बीमारियाँ तो प्रत्यक्ष दीखती हैं, पर चिन्ता भय, उत्तेजना, आशङ्का, ईर्ष्या द्वेष जैसी मानसिक बीमारियाँ दिखाई तो नहीं पड़तीं, समझ में नहीं आतीं, पर हानि बुखार खाँसी से भी अधिक पहुँचाती हैं। चिन्ता एक तरह की आग है, जो भीतर-भीतर ही हाड़-मांस जलाती रहती है। जरा-जरा सी बात में गरम और उत्तेजित हो उठने की आदत रक्त को विषैला करती है, और मस्तिष्क का संतुलन बिगाड़ देती है। इसका प्रभाव नाड़ी-संस्थान पर पड़ता है, जिससे कितने ही रोग उठ खड़े होते हैं। खाया-पिया सब क्रोध की गर्मी से जल जाने से आहार का लाभ भी नहीं मिल पाता, निराशा और घुटन की मनोभूमि पाचन क्रिया को चौपट कर देती है। सारे अंग शिथिल पड़ जाते हैं, रक्त संचार, मल-विसर्जन और श्वाँस-प्रश्वांश की क्रिया, उनकी कुछ ही दिनों मे ढीली पड़ जाती है,जो अपने भविष्य को अन्धकारमय देखते हैं, और अप्रिय प्रसङ्गों को याद करके दुःख, शोक में डूबे रहते हैं। अवांछनीय परिस्थितियों का सामना करने के लिए मानसिक सन्तुलन एवं सूझ-बूझ की आवश्यकता पड़ती है। चिन्ता, निराशा, आवेश, घुटन जैसे मनोविकार उस आवश्यकता की पूर्ति में तो सहायक होते ही नहीं बल्कि सोचने की मशीन में गड़बड़ी कर समाधान ढूँढ़ना और भी कठिन बना देते हैं।

दूसरों की बढ़ोत्तरी देखकर कुढ़ना, दूसरों के दोष दुर्गुण को ही ढूँढ़ते रहना, भविष्य में कोई विपत्ति आने या अशुभ घटना घटित होने की आशंका करके डरते रहना, यह देखने में बुरी आदतें मात्र मालूम होती हैं, पर बहुत कम लोग जानते हैं कि उनका स्वास्थ्य को नष्ट करने में कितना बड़ा हाथ रहता है। सदा असन्तुष्ट रहने वाले व्यक्ति अनिद्रा, शिरदर्द, दिल की धड़कन, मधुमेह जैसे अकाल मृत्यु बुलाने वाले रोगों के चंगुल में फँसते और स्वास्थ्य को बर्बाद करते रहते हैं। आठ घण्टे शारीरिक श्रम में उतनी शक्ति नष्ट नहीं होती जितनी आधा घण्टा तक मनोविकारों का उद्वेग बने रहने पर हो जाती है।

जिन्हें स्वस्थ रहना हो वे मन को हलका रखें। हँसने की आदत डालें और चित्त को प्रसन्न व संतुष्ट रखा करें। जो अभाव तथा कठिनाइयाँ सामने हैं उनका धैर्य, साहस और सूझ-बूझ के साथ मुकाबला करें। अनुपयुक्त परिस्थितियों को बदलने और समस्याओं को सुलझाने के लिए जो उपाय सम्भव हों उन्हें योजनाबद्ध ढंग से करने में लग जावें। जो कठिनाइयाँ न टाली जा सकें उन्हें धैर्यपूर्वक सहन करें। समझदार और दूरदर्शी व्यक्ति ऐसी ही रीति-नीति अपनाते हैं और हानि-लाभ के क्षणों से बने जीवन के पहिए को लुढ़काते हुए अपना काम चलाते हैं। इसके विपरीत छिछोरी प्रकृति के व्यक्ति जरासी बात को आकाश पाताल जैसा महत्व देकर स्वयं दुःखी होते, साथियों को उद्विग्न करते तथा अपना शारीरिक या मानसिक स्वास्थ्य चौपट करते रहते हैं। स्वस्थ रहने के लिए निश्चिन्त, संतुष्ट, श्रमशील और प्रसन्न रहना आवश्यक है। यह गुण अपने में न हों तो पैदा करने चाहिए अन्यथा मनोविकार शरीर को गलाते और परिस्थितियों को उलझाते चले जावेंगे। ———

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य रक्षा के लिए प्रकृति का अनुसरण आवश्यक

क्र० २८

प्रकृति ने हर प्राणी को वह स्वाभाविक क्षमता और बुद्धि दी है जिसके आधार पर वह निरोग दीर्घ-जीवन प्राप्त कर सके। उस क्षमता और बुद्धि का प्रकृति के नियमों के अनुकूल उपयोग करने वाले सभी प्राणी निरोग पाये जाते हैं। वन्य प्रदेशों में स्वछन्द विचरण करने वाले पशु पक्षियों को देखते हैं तो उनमें से कोई भी रोगी नहीं दीखता। हिरण, लोमणी, खरगोश, शेर, कबूतर किसी को भी तो बीमारियों के चंगुल में फँसा नहीं देखते। केवल एक ही मूर्ख जानवर-मनुष्य है जो प्रकृति अवज्ञा करके अपना आहार विहार कृत्रिमता से करता है और उस अवज्ञा के फलस्वरूप तरह-तरह के रोगों का संकट भोगता है। मनुष्य के चंगुल में फँसे हुए पशुओं में धीरे-धीरे अप्राकृतिक आहार विहार की विवशता से रोगी रहने का सिलसिला चल पड़ा है।

यदि हम निरोग रहना चाहते हैं तो उसका एक ही उपाय है अपने शरीर की बनावट के अनुरूप आहार-विहार अपनायें और प्रकृति ने जिस ढंग से रहने का संकेत दिया है उसी का अनुसरण करें। यह प्रयोजन कृत्रिम दवा दारू और तथा कथित डिब्बे में बन्द पौष्टिक आहारों से पूरा नहीं हो सकता। प्रकृति माता की शरण ही एक मात्र वह उपाय है जिससे वर्तमान रुग्णता और दुर्बलता से छुटकारा पाया जा सकता है और भविष्य के लिए हँसता-खेलता दीर्घ जीवन प्राप्त किया जा सकता है।

हमारे लिए क्या भोजन उपयुक्त है उसके लिए किसी दूसरे से पूछताछ करने की या पुस्तकें पढ़ने की जरूरत नहीं है। मुखके दरवाजे पर बैठा हुआ जिव्हारूपी डाक्टर किसी भी वस्तु की परीक्षा करके यह बतला सकता है कि क्या अपने लिए ग्राह्य और अग्राह्य है। जो वस्तुयें बिना जलाये भूने, बिना मशाले मिठाई मिले अपने-अपने मूल रूप में हमें रुचिकर स्वादिष्ट लगे समझना चाहिए कि यही हमारा प्राकृतिक शुद्ध भोजन है। इस दृष्टि से फल हमारा सर्वोत्तम भोजन है। इसे दुर्भाग्य ही कहना चाहिए कि हमारी रुचि उधर से हटती जाती है, अन्यथा फलों को कृषि की जाने लगी तो वे अन्न की तुलना में सस्ते भी पड़ें और पैसा भी अधिक मिले। मँहगे फल खरीद सकना सम्भव न हो तो भी ऋतुओं पर उस समय की शारीरिक स्थिति के लिए पूर्णतया उपयुक्त सस्ते ऋतु फल भी मिलते हैं वे भी कम लाभदायक नहीं होते। अपने मौसमों में आम, जामुन, बेर, अमरूद शहतूत, आदि खूब पैदा होते हैं और सस्ते भी मिलते हैं। केला पपीता मँहगे नहीं पड़ते। शाक-वर्ग में उगने वाले कितने ही सस्ते फल सहज ही पाये जा सकते हैं। खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, खीरा, टमाटर का अपनी ऋतुओं में बाहुल्य रहता है। कच्चे अन्न पकने में तो कुछ समय लगाते हैं पर जीवन तत्व उनमें भी कम नहीं रहते। मक्का, मटर, चने, ज्वार, बाजरा आदि पकने सूखने से पहले हरी स्थिति में स्वादिष्ट भी रहते हैं और प्रकृति के अनुकूल भी। गेहूँ, चना, मूँग आदि सुपाच्य अन्न सूखे ही लेने हों तो उन्हें पानी में अंकुरित करके खाया जा सकता है। उबालने की नौबत आये तो सुपाच्य शाक अथवा चावल आदि उबाले जा सकते हैं। दलिया भी काम चलाऊ हो सकता है।

आहार को जितना अधिक जलाया जायगा और उसमें मिर्च, मसाले, तेल घी आदि मिलाये जायेंगे उतना ही वह अहितकर और निस्तत्व होता चला जायगा। आज जीभ को चटोरी बनाकर उसकी आदत बिगाड़ी जाती है और उस बिगड़ी आदत को ही जायका कहकर उदरस्थ किया जाता है। जो स्वाभाविक रूप में जैसा हो वही उसका असली स्वाद है और कौन सा स्वाद उपयुक्त है इसे बिना बिगड़ी हुई जीभ सहज ही बता सकती है। मिर्च खाते ही जीभ जलती है, नमक खाते ही उलटी आती है। हींग, लोंग, हल्दी, आदि खाकर कोई देखे तो जीभ सहज ही बता-येगी कि यह जंजाल अपने लिए सर्वथा अग्राह्य है। पर चतुर कहलाने वाले मनुष्य ने जीभ को धीरे-धीरे अवाँ-छनीय चीजों का अभ्यस्त बना लिया और वह नशेबाज की तरह कडुई और विषैली नशीली चीजों की भाँति चिकनाई और मसालों से भरे जलाने और भूनने से निस्तत्व किये गये पकवान मिष्ठानों को स्वादिष्ट मानकर धोखा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खाती रहती है । यह आहार उसके पचाने में अनुपयुक्त होते हैं और शरीर को शक्ति देने की अपेक्षा उलटे उसकी संचित शक्ति खाते रहते हैं । ऐसी दशा में पोषण विहीन और जीवनतत्वों से रहित अप्राकृतिक भोजन करने वाला व्यक्ति बीमारी के चंगुल में फँसता चला जाय तो आश्चर्य क्या है ? माँस, मदिरा, तम्बाकू जैसे अभक्ष्य पदार्थ स्वास्थ्य की बर्बादी के अतिरिक्त रत्ती भर भी लाभ नहीं दे सकते ।

स्वच्छ आहार की तरह स्वच्छ जलवायु भी निरोगिता के लिए आवश्यक है । सड़ा, गला, विषैला भोजन हानिकारक होने की बात सभी जानते हैं पर यह भूल जाते हैं कि वायु जो अन्न से भी अधिक आवश्यक है—स्वच्छ मिलनी आवश्यक है। सीलन भरे,बिना खिड़की के तरह-तरह की चीजों से भरे मकानों में गंदी हवा ही रहती है । गली कूचों में भेड़ियों की मांद की तरह गन्दे मकानों में रहने वालों की अपेक्षा खुली हवा में पेड़ों के नीचे रहने वाले अधिक निरोग रह सकते हैं, धूल धुँए सीलन सड़न से भरा हुआ वातावरण धन कमाने के लिए भले ही उपयुक्त हो स्वास्थ्य को दिन-दिन गलाता जायगा । मुंह ढककर खिड़की दरवाजे बन्द करके सोनेकी आदत साँस के द्वारा शरीर में विषैले तत्त्वों के प्रवेश का खुला निमन्त्रण है । ऐसा करने वाले निरोग कैसे रह सकते हैं ?

सांस केवल नाक से ही, मुँह से नहीं लेते और छोड़ते हैं । यदि चमड़ी पर कोई हवा बाहर न निकलने वाला मजबूत लेप चढ़ा दिया जाय तो आदमी थोड़ी ही देर में बेहोश हो सकता और मर सकता है । कसे हुए कपड़ों की पर्तें चढ़ाकर बने ठने रहने वाले लोग फैशन भले ही बना लेते हों कपड़ों के कसाव त्वचा को साँस लेने से रोकते हैं । बहुत कपड़े पहनना ऐसा ही है जैसे नाक पर पट्टी बांधना । इससे चमड़ी की शक्ति क्षीण हो जाती है और सर्दी गर्मी सहने की क्षमता खो बैठती है । कसे कपड़ों से लदे रहने वालों को अक्सर सर्दी गर्मी जुकाम, खाँसी लू लगने जैसी शिकायत होती रहती हैं । यह प्रकृति के अमूल्य उपहार प्राणवायु तथा सर्दी-गर्मी की अवज्ञा करने का ही दुष्परिणाम है जो हमें बीमारियों के रूप में भुगतना पड़ता है । उचित यही है कि हम स्वच्छ वायु में रहें, मकानों में हवा की और प्रकाश की पूरी गुंजाइश रखें, मुँह ढक कर न सोया करें कपड़े कम से कम तथा ढीले पहनें ।

शारीरिक श्रम इतना होना ही चाहिए कि पसीना बहे और हर अवयव के क्रियाशील रहने की आदत पड़ी रहे । पशु पक्षी सारे दिन आहार की तलाश में इधर उधर घूमते हैं और उससे कठोर काम की आवश्यकता पूरी कर लेते हैं । मनुष्य आरामतलबी से बैठे रहने के हलके फुलके काम करने का आदी आलसी होता जाता है । श्रम न करने में हाथ पाँव जैसे बाहरी और आंते, आमाशय दिल, गुर्दे जैसे भीतरी अवयव कमजोर होते चले जाते हैं और बीमारियों के शिकार बनते हैं । शरीर को समर्थ शक्तिशाली और रोग निरोधक शक्ति से पूर्ण रखने की दृष्टि से कठोर शारीरिक श्रम की नितान्त आवश्यकता है । बैठे रहने वालों का यह प्रयोजन कई मील टहलने एवं आसन व्यायाम द्वारा पूरा करना चाहिए । आरामतलब आलसी बनकर हम सुखी रहते हैं ऐसा नहीं सोचना चाहिए । स्मरण रखना चाहिए कि श्रम रहित जीवन न तो निरोग रह सकता है और न दीर्घ जीवी बन सकता है । कठोर परिश्रम हर व्यक्ति की एक स्वाभाविक आवश्यकता है जिसकी पूर्ति करने के लिए दैनिक जीवन में समुचित स्थान रहना चाहिए ।

ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में जितनी अधिक सतर्कता बरती जाय उतना ही उत्तम है । पशुओं तक में इतनी बुद्धि है कि प्रजनन की आवश्यकता पड़ने पर वे चिरकाल बाद एक बार मैथुन करते हैं । मनुष्य ने इस प्रसङ्ग को मनोरंजन या कौतूहल का विषय बनाकर अपने को खोखला बनाने की मूर्खता को ही अपनाया है, जीवन तत्व की बेहिसाब बर्बादी करने वाला कितने दिन निरोग और सशक्त रह सकेगा । मानसिक चिन्तायें, उद्वेग, आवेश, भय, शोक, क्रोध ईर्ष्या द्वेष जैसे मनोविकार भी मन और देह को भीतर ही भीतर घुलाते रहते हैं, जिन्हें निरोग जीना हो उन्हें ब्रह्मचर्य की ही भाँति मानसिक संतुलन और संतुष्ट हँसी खुशी का जीवन जीने की आदत डालनी चाहिए कि दिन में सारे काम निपट जाँय और रात सोने के लिए मिल जाय । बहुत रात तक जगना और दिन में सोना स्वास्थ्य का महत्व समझने वाले को तो छोड़ ही देना चाहिए । प्रकृति का अनुसरण करके ही हम निरोग और दीर्घ जीवी बन सकते हैं इस तथ्य को जितनी जल्दी समझ लिया जाय उतना ही अच्छा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आहार और विहार का असंयम न बरतें

क्र० २६

शारीरिक सामर्थ्य मानव-जीवन की एक महती आवश्यकता है, स्वास्थ्य के बिना कोई गति नहीं। धन, विद्या, पद, सम्मान आदि के उपार्जन में जो श्रम करना पड़ता है, वह अस्वस्थ व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं। दुर्बल मनुष्य को सम्बन्धी अनुपयोगी ही नहीं कुछ समय बाद भार भी मानने लगेंगे और कुछ समय बाद परिचर्या, सहायता एवं सहानुभूति से भी हाथ खींचने लगेंगे। यह स्वाभाविक भी है। स्वयं शरीर कष्ट सहना और इन्द्रिय सुखों से वन्चित रहना अस्वस्थता की ही देन है। आवश्यक कर्तव्यों की पूर्ति एवं महत्वाकांक्षाओं की दिशा में प्रगति उसके लिये सम्भव नहीं, जो अस्वस्थता के कुचक्र में फँस गया। इसलिए यह आवश्यक है कि शारीरिक समर्थता को, निरोगिता को बनाये रखने और स्वस्थता, पुष्टता बढ़ाने के लिये समुचित सतर्कता बरती जाय।

व्यक्तिगत रूप से शारीरिक स्वास्थ्य की रक्षा के लिये (१) आहार (२) विहार (३) श्रम (४) सन्तुलन की दिशा सही होना आवश्यक है। इन चारों को पलंग के चार पायों की तरह सम्यद्ध मानना चाहिये। इनमें से एक भी गड़बड़ करेगा तो अस्वस्थता की विपत्ति आ दबोचेगी। कई बार प्रारब्ध एवं परिस्थितिवश संयमी लोगों को भी दुर्बलता एवं रुग्णता के कुचक्र में फँसना पड़ता है। पर वह थोड़ी-सी घटनायें अपवाद मात्र हैं। आमतौर से यही सिद्धांत काम करता है कि जो स्वास्थ्य के नियमों की उपेक्षा करेगा वही अस्वस्थता का शिकार होगा। अतः हम में से प्रत्येक को इस दिशा में सतर्क रहना चाहिए।

आहार के थोड़े से नियम हैं। भूख से आधा खाये। आधा पेट अन्न से, चौथाई पानी से और चौथाई हवा आने जाने के लिये खाली रखें। जो ठूँसकर खाता है वह पेट पर अत्याचार करता है और अपचन को आमन्त्रित करता है। जो खाना हो नियत समय पर ही खाना चाहिये। दिनभर बकरी की तरह मुँह चलाते रहना पाचन क्रिया के साथ खिलवाड़ करना है। हांडी में एक बार खिचड़ी डाल दी जाय तो वह ठीक तरह पक जायगी। पल-पल पर कभी दाल, कभी चावल डालते रहा जाय तो खिचड़ी कुछ कच्ची, कुछ पक्की, कुछ जली, कुछ गली और वह बेकार हो जायगी। दिन भर खाते रहने वाले ऐसी ही बेकार खिचड़ी अपने पेट में पकाते हैं और हानि उठाते हैं। भोजन स्वाद के लिये नहीं शरीर-रक्षा को औषध समझकर ग्रहण करना चाहिये। उसका स्वाद नहीं गुण देखा जाता है। जो वस्तुएँ सुपाच्य, सात्त्विक हों उन्हें भी बहुत जलाये, भूने बिना, मिर्च-मसालों की भरमार किये बिना खाना चाहिये। तले हुये, चटपटे, मावा और चीनी वाले, गरिष्ठ, नशीले और माँस जैसे अभक्ष्य पदार्थों में पैसा भी अधिक लगता है और पाचन ठीक न होने से रक्त भी विषैला बनता है। स्मरण रखने की बात है कि अपचन ही समस्त रोगों का जनक है। जिसने अखाद्य खाया, अनावश्यक खाकर अपना पेट बिगाड़ा, उसे बीमारियों के चंगुल में फँसने से कोई बचा नहीं सकता।

जो खाया जाय मुँह में अच्छी तरह चबा लिया जाय। जल्दबाजी में ग्रास निगलते चलने से आधा चबाया भोजन पेट का बहुत समय और श्रम लेकर पचता है। स्वच्छता पूर्वक और स्वच्छता के साथ खाया हुआ भोजन ही स्वास्थ्यकर होगा। गन्दगी के सम्मिश्रण से अच्छी वस्तुएँ भी विषैली बन जाती हैं। सड़ी-गली तथा बाजारू चीजों से बचना चाहिए। जब खाना हो प्रसन्न चित्त, सन्तुष्ट, निश्चिन्त मनोभूमि के साथ आहार को ईश्वर का प्रसाद समझ कर ग्रहण करना चाहिये। असन्तुष्ट, रुष्ट, उद्विग्न मनःस्थित में नाक-भौं सिकोड़ते, नुक्ताचीनी करते हुए खाया गया अच्छा आहार भी हानिकर परिणाम उत्पन्न करता है। हमारे भोजन में शाक-भाजी और ऋतु फलों की भी आवश्यक मात्रा रहनी चाहिए। ये बहुत मँहगे नहीं हैं पर बहुमूल्य व्यंजनों से बढ़कर लाभदायक हैं।

जब तक पिछला भोजन न पच जाय तब तक अगला ग्रहण नहीं करना चाहिये। किसी कारण पेट में अपच हो तो एक समय का भोजन तुरन्त बन्द कर देना चाहिए। सप्ताह में एक बार आधा दिन या पूरे दिन के लिये पेट को छुट्टी दे दी जाय, उपवास कर लिया जाय तो स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए यह बहुत लाभदायक सिद्ध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होगा। उपवास का अर्थ है नियत अवधि तक पानी के अतिरिक्त और कुछ न लेना। आजकल की तरह फलाहार के नाम पर अल्लम-गल्लम ठूँसते रहने वाले उपहासपद उपवास स्वास्थ्य की दृष्टि से निरर्थक ही नहीं हानिकारक भी होते हैं। उपवास का उद्देश्य पेट को विश्राम देना है। उसमें पानी, ठण्डाई या नीबू की सिकंजी जैसा कोई हलका पेय ही चल सकता है।

थाली में कम से कम किस्म के भोजन रहें। खाद्य पदार्थों की भरमार से थाली सजाना, मेहमानदारी,चटोरेपन या अमीरी का दिखावा भले ही करले, पाचन की दृष्टि से उसमें केवल हानि ही हानि है। अपने देश में भोजन पकाने में इतना अधिक अग्नि सम्पर्क किया जाता है कि आहार के पोषक तत्त्व ही जल जाते हैं और खाने वाले को मूल पदार्थ का कोयला ही हाथ लगता है। मिष्ठान्न और पकवान, दूध और अन्न जैसे पदार्थों के जीवन को नष्ट करके जलाये भूने पदार्थों में कुछ पोषण शेष नहीं रह जाता। इसलिये उचित यही है कि कम से कम अग्नि सम्पर्क पकाने के समय किया जाय। जो शाक-भाजी, फल बिना पकाये खाये जा सकते हैं, उन्हें उसी तरह खाना चाहिये। जिनका छिलका खाया जा सकता है उन्हें छिलके समेत लेना चाहिये। क्योंकि पोषक तत्वों की अधिकता छिलके में ही होती है। आटा और दाल भी छिलका समेत लेना चाहिये। चीनी के बजाय गुड़ में कुछ जान बची रहती है। जिन्हें पकाना हो उन्हें उबाल भर लेना चाहिये। दलिया, चावल, खिचड़ी, शाक आदि सब भाप के द्वारा (कुकर पद्धति से) पकाये जायें तो उनमें पोषण बना रहेगा। सद्भावना वाले व्यक्तियों द्वारा पकाया, परोसा और हँसी-खुशी के वातावरण में मिल-जुलकर खाया हुआ सस्ता भोजन भी स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। आहार सम्बन्धी इन मुख्य नियमों की आदत डाल ली जाय तो समझना चाहिए कि शारीरिक समर्थता की पहली मंजिल पार कर ली।

आहार के बाद विहार का नम्बर आता है। विहार का अर्थ है नियमित एवं व्यवस्थित आचरण। स्वास्थ्य की दृष्टि से नियमितता का भारी महत्व माना गया है। नियत समय पर सोना, जागना, नहाना आवश्यक है। नित्य कर्मों में बरती जाने वाली अस्त-व्यस्तता एवं अनियमितता स्वास्थ्य को चौपट करके रख देती है। कई व्यक्ति बड़े आलसी और लापरवाह होते हैं, अपनी दिनचर्या का कोई क्रम नहीं रखते। चाहे जब, चाहे जो करने की आदत शरीर रक्षा की दृष्टि से एक गम्भीर खतरा है।

दिन काम करने और रात सोने के लिये है। नौ-दस बजे से अधिक नहीं जागना चाहिये और प्रातः सूर्योदय से पूर्व उठ जाना आवश्यक है। उठते ही मल-मूत्र विसर्जन की नित्य क्रिया करनी चाहिये। जब टट्टी लगेगी तब जायेंगे की नीति बहुत बुरी है। आदतों का शरीर क्रम पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।मल विसर्जन, शारीरिक स्वच्छता और भोजन आदि का समय यदि कोई निर्धारित नहीं है, तो पाचन-यन्त्रों की क्रिया में अवश्य ही व्याघात पड़ जायगा। जब फुर्सत मिले तब खाने की आदत पेट को खराब कर देती है। सतर्क और समझदार लोग शारीरिक क्रियाएँ समय पर करने का पूरा ध्यान रखते हैं और इस प्रकार अपने आरोग्य को नष्ट होने से बचाते हैं।

दिनचर्या को व्यवस्थित बना लेना आरोग्य-रक्षा की गारण्टी है। प्रातः उठने से लेकर रात को सोने तक की क्रमबद्ध विधि-व्यवस्था बनी रहनी चाहिये। समय का विभाजन जिस क्रम से किया जाय, कार्य-पद्धति जैसी भी निर्धारित की जाय, उसे कड़ाई से पालन किया जाना चाहिये। जब तक कोई अनिवार्य व्यवधान खड़ा न हो जाय तब तक दिनचर्या में अकारण हेर-फेर न किया जाय। शौच, स्नान, व्यायाम,भोजन,व्यवसाय,अध्ययन,खेल,शयन आदि की कार्य पद्धति निर्धारित क्रम से चलती रहे तो शरीर की आन्तरिक प्रणाली एक ढर पर चलने लगती है और हर कार्य बिना किसी अड़चन के सहज और सुचारु रूप से होता चलता है। इस प्रकार की व्यवस्था का स्वास्थ्य पर बहुत अनुकूल प्रभाव पड़ता है और वह देर तक कार्यक्षम बना रहता है।

संयम में ब्रह्मचर्य की बात गाँठ बाँध रखने की है। शक्तियों का कोटा सीमित है। उसे बहुत ही सोच-समझ कर खर्च करना चाहिये। आमदनी कम और खर्च अधिक करने वाले दिवालिया बनते हैं। ऐसा न हो कि हम अति उत्साह में असंयम की दिशा में दौड़ पड़ें और इन्द्रिय वासनाओं की अग्नि में अपने बहुमूल्य जीवन तत्त्वों को जलाने लगें। विशेषतया कामेन्द्रिय और सम्बन्धित मनोविकारों पर तो कड़ाई का अंकुश रखना चाहिए। आहार की तरह विहार पर भी यदि सचमुच ध्यान रखा जा सके तो निःसंदेह हम स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से बहुत हद तक सफल हो सकते हैं।

 —'हमारा स्वास्थ्य-संकट और उसका समाधान' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संयम बरतें–सुखी रहें

क्र० ३०

मनुष्य के शरीर और मन में शक्तियों का अकूत भंडार भरा पड़ा है। उनको नष्ट होने से बचाया जा सके और उस बचत का सदुपयोग किया जा सके तो अभीष्ट दिशा में आशाजनक सफलताऐं प्राप्त की जा सकती हैं। इस तथ्य को न समझकर हम अपनी बहुमूल्य शक्तियों का निरर्थक अपव्यय करते रहते हैं और ईश्वर-प्रदत्त शक्ति-भंडार को खोकर खोखला, रुग्ण, अशक्त और असफल जीवन जीते हुए मौत के दिन पूरे करते हैं।

शरीर और मन अपने-अपने आहारों द्वारा शक्तियों का निरन्तर उत्पादन करते रहते हैं और हमारा सामर्थ्य भण्डार निरन्तर बढ़ता रहता है। इस उत्पादन को यदि अपव्यय से बचाया जा सके और उसे रचनात्मक दिशा में प्रयुक्त किया जा सके तो निस्सन्देह किसी भी दिशा में आशाजनक प्रगति का सुयोग मिल सकता है।

संयम का अर्थ है—शक्तियों के अपव्यय को रोकना। यह अपव्यय अधिकतर हमारी इन्द्रियों द्वारा होता हैं। इन्द्रियों में दो प्रमुख हैं—एक जीभ दूसरी जननेन्द्रिय। जीभ के द्वारा हम निरर्थक बकवास करते रहते हैं, निंदा, चुगली,शेखी तथा गप्पें हाँकने में जिह्वा की बहुत भारी शक्ति का अपव्यय होता है। असत्य और कटु न बोलने का जिव्हा-संयम यदि बरता जा सके तो हमारी वाणी इतनी प्रभावशाली हो सकती है कि उसका दूसरों पर आश्चर्यजनक प्रभाव पड़े और वरदान, आशीर्वाद देने की क्षमता उत्पन्न हो जाय। निरर्थक बकबास से हमारा बहुत मनोबल नष्ट होता है। वाचाल व्यक्ति की अन्तरङ्ग क्षमता खोखली होती जाती है और वह एक दिन विदूषक मात्र रह जाता है। मौन को तप माना गया है। तपस्वियों का मौन तो हर किसी के लिए सम्भव नहीं पर इतना तो कोई भी कर सकता है कि अनर्गल बकबास पर नियन्त्रण करे और उतना ही नपा-तुला बोले जो अपने तथा दूसरों के लिए आवश्यक एवं हितकर हो।

जिव्हा का दूसरा असंयम है—चटोरापन। विकृत जायके के लिये हम अवांछनीय अभक्ष्य पदार्थ खाते रहते हैं स्वाद का आकर्षण आवश्यकता से अधिक मात्रा में खाने के लिये ललचाता है। यह बढ़ी हुई मात्रा पेट पर भार बनती और उसे दिन-दिन दुर्बल करती चली जाती है। मसाले एक प्रकार के मन्द विष हैं। वे जीभ, पेट, आंतें और उदर के हर हिस्से को जलाते हैं। उत्तेजना में आदमी खा तो अधिक जाता है पर मात्रा से अधिक पचावे कौन ? धीरे-धीरे अपच बढ़ता जाता है और पाचन-यन्त्र इतना कमजोर बन जाता है कि स्वल्प मात्रा में आहार पचाना भी कठिन पड़ता है। यहीं से दुर्बलता और रुग्णता की नींव पड़ती है। बिना पचा भोजन पेट का भार मात्र है। वह शक्ति पैदा न कर सकेगा तो दुर्बलता बढ़ेगी ही। अपच के कारण पेट में जो विषैली सड़न पैदा होती है, वही शरीर के विभिन्न अंगों में पहुँचकर वहाँ विभिन्न रोगों का सृजन करती चली जाती है और व्यक्ति व्यथा, पीड़ायें भोगता हुआ अकाल में ही काल कवलित होता है।

लुकमान सच कहते थे कि—"आदमी अपनी जीभ से अपने मरने-गढ़ने के लिए कब्र खोदता है।" जीभ यदि काबू में हो तो मिठाई, खटाई, मिर्च और मसाले हमारे ऊपर सवार क्यों हों और तरह-तरह के व्यंजन, पकवान आचार-चटनी की लपक क्यों लगे ? लोग समझते भर हैं कि हमने जायकेदार और कीमती चीजें खाकर मजा उठाया पर वस्तुतः यह अपने पैरों आप कुल्हाड़ी मारने की तरह है। यदि हम जायके को महत्व न दें और केवल गुण एवं लाभ को ध्यान में रखते हुए औषधि की तरह सात्त्विक आहार करें तो पेट खराब न हो और दुर्बलता एवं रुग्णता का शिकार न होना पड़े। यह जीभ ही है, जो जायके और चटोरेपन की शिकार बनकर हमारे स्वास्थ्य, आनन्द और दीर्घजीवन पर कुठाराघात करती है।

जननेन्द्रिय का संयम और भी अधिक महत्वपूर्ण है। शरीर जो कुछ उपलब्ध करता है, उसका सार तत्व—दूध में से घी की तरह—बचाता है। इसी का नाम शुक्र, वीर्य और अन्ततः ओजस् है। चेहरे पर चमक, वाणी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में प्रभाव, आँखों में ज्योति, मस्तिष्क में मेधा, स्वभाव में साहस, इसी तत्त्व का प्रतिफल है । देह में यह थोड़ी-सी ही बूँदें रहती हैं पर वे समग्र प्रतिभा के रूप में प्रकाशवान बनती हैं । इनमें इतनी सामर्थ है कि अपने जैसे कितने ही नये मनुष्य विनिर्मित कर सकें । इस आश्चर्यजनक शक्ति को सर्प की मणि की तरह कहा जा सकता है । कहते हैं कि सर्प अपनी मणि जब खो बैठता है, तब उसकी देह निर्जीव जैसी बन जाती है । मनुष्य की भी यही स्थिति है । इस सार तत्त्व का जितना भी अपव्यय करता है, वह शारीरिक और मानसिक दृष्टि से उतना ही दुर्बल बनता चला जाता है । कामुक व्यक्ति न निरोग रह सकते हैं और न दीर्घ जीवन का आनन्द ले सकते हैं । उन्हें अनेक रोग घेरे रहते हैं और मनस्विता गँवाकर दीन, दुर्बल, कायर, भीरु, अस्थिर और अन्यमनस्क बनते चले जाते हैं । ब्रह्मचर्य की दिशा में असंयम बरतने वाले रुग्ण और दुर्बल सन्तानें ही उत्पन्न करेंगे । कामुकता पर अंकुश लगाना ब्रह्मचर्य का समुचित ध्यान रखना, जननेन्द्रिय का संयम बरतना, हर विचारशील व्यक्ति के लिये आवश्यक है । जिसे शारीरिक परिपुष्टता, दीर्घजीवन और समर्थ मनस्विता की आवश्यकता है, उसे यथा तथ्य गाँठ बाँध लेना चाहिये कि शरीर के सार-तत्त्व को खिलवाड़ का विषय न बनालें । सन्तान वृद्धि की जितनी आवश्यकता हो उसके अनुरूप वासना में ढील दें, अन्यथा इस दिशा में आवश्यक मर्यादाओं का निरन्तर पालन करता रहे । विवाह का उद्देश्य दो आत्माओं का पवित्र गठबन्धन और एक दूसरे के सहयोग से एक सम्मिलित आत्म-चेतना का विकास करना है । स्वच्छन्द, अनियन्त्रित और अनावश्यक काम-वासना भड़काने और एक दूसरे के शारीरिक, मानसिक सार-तत्त्व को नष्ट-भ्रष्ट करने में जुट जाने का नाम विवाह-मैत्री नहीं है । यह तो प्रत्यक्ष शत्रुता है ।

दाम्पत्य-जीवन के बाहर का दुराचार तो अति कुत्सित है । अप्राकृतिक दुर्बुद्धि का लुक-छिपकर प्रयोग आज नवयुवकों में बहुत बढ़ चला है । इस दुर्व्यसन से वे कलियाँ असमय ही मुरझा जाती हैं । जवानी का आरम्भ भी नहीं हुआ कि बुढ़ापे ने आ घेरा । कितने ही नासमझ लड़के 'जिस डाल पर बैठना उसी को काटना' की दुर्बुद्धि चरितार्थ करते रहते हैं । इन्हें सिखाया जाना चाहिये कि जीवन रस को फुलझड़ी समझकर उसे जलाने का कौतूहल न बरतें यह खतरनाक खेल है, जिसकी कीमत आगे चलकर भारी पश्चाताप के साथ चुकानी पड़ेगी । इसी प्रकार नर-नारी के बीच पवित्र सम्बन्धों को पुण्य परम्परा में विष घोलना हर दृष्टि से अवांछनीय है । प्रेत और मैत्री का अर्थ कामुकता नहीं है । शुभचिन्तक और हितैषी होने का अर्थ अपने प्रिय पात्र का चरित्र गिराना और उसे अपने गृहस्थ-जीवन के प्रति अनास्थावान् बनाना नहीं है । नर और नारी में भी पवित्र प्रेम हो सकता है । इसमें कोई दोष नहीं, पर जब यह मैत्री कामुकता से विषाक्त होने लगे तो समझना चाहिये कि यह सद्भावना की आड़ में दुष्ट प्रयोजन खुल खेल रहे हैं । अच्छा हो—नर-नारी के बीच पनपने वाली मित्रता विषाक्त होने से बची रहे और उसके दूरगामी दुष्परिणामों से व्यक्ति और समाज को कुफल न भोगने पड़ें ।

अन्य इन्द्रियाँ भी ऐसी ही हैं, जिन्हें संयम की शिक्षा मिलनी चाहिये । आँखों में शुद्ध सौंदर्य की आकांक्षा तो बनी रहे पर कामुकता की दुर्भावना से चारों ओर बिखरे सौंदर्य को न निहारें । इससे मिलने वाला कुछ नहीं, केवल आन्तरिक शक्ति ही नष्ट होगी और अकारण उद्विग्नता बढ़ेगी । मन कलुषित होगा, कुमार्ग पर कदम बढ़ेंगे और अन्ततः पतन के पथ पर लुढ़क पड़ने का अवसर आ जायगा । आँखों के लिये यही उपयुक्त है कि वे सौंदर्य को उत्कृष्ट आध्यात्मिकता की पवित्र दृष्टि से देखें और हर घड़ी प्रमुदित और सन्तुष्ट रहने की ही स्थिति प्राप्त करें। कान शृंगार और अश्लीलता सुनने के लिए लालायित न रहें । निन्दा, चुगली में रस न लें, बहुत कुछ आवश्यक तथ्य सुनने के लिये शेष हैं उन्हीं के लिये प्रवृत्ति क्यों न मोड़ी जाय ? नासिका मांस-मदिरा जैसे अभक्ष्यों की दुर्गन्ध को सहन क्यों करे ? नासिका की स्वाभाविक प्रीति स्वच्छता और सात्त्विकता को पसन्द करने में है अच्छा हो हमारी नासिका सही पथ प्रदर्शन करने में समर्थ बनी रहे ।

संयम अर्थात् शक्तियों का संचय । असंयम अर्थात् सामर्थ्य की बर्बादी । यह मोटा तथ्य है कि बर्बादी का अवलम्बन करने वाला एक दिन दिवालिया बन जाता है और जो थोड़ा-थोड़ा बचाता रहता है, उसकी सम्पदा समय-समय पर अनेक सुविधाएँ प्रस्तुत करती है । इन्द्रियों का संयम अपने आपको बर्बादी से बचाकर समृद्धि की ओर अग्रसर करने का बुद्धिमत्तापूर्ण प्रयास है । इसी में हम सब का कल्याण है ।

———

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हम अस्वच्छ न रहें—घृणित न बनें

क्र० ३१

अस्वच्छता मनुष्य की आंतरिक और गई-गुजरी स्थिति का परिचय देती है। गन्दा आदमी यह प्रकट करता है कि उसे अवांछनीयता हटाने और उत्कृष्टता बनाये रखने में कोई रुचि नहीं है। लापरवाह, आलसी और प्रमादी ही गन्दे देखे गये हैं। जो अवांछनीयता से समझौता करके उसे गले से लगाये रह सकता है, वही गन्दा भी रह सकता है। गन्दगी देखने में सबको बुरी लगती है और उस व्यक्ति के प्रति सहज ही घृणा बुद्धि उत्पन्न करती है। गन्दे को कौन अपने समीप बिठाना चाहेगा ? दुर्गन्ध से किसे अपनी नाक, मलीनता से किसे अपनी आंखें और हेय प्रवृत्ति को देखकर कौन अपनी मनोदशा क्षुब्द करना चाहेगा ? जिन्हें तिरस्कार, अपमान, घृणा, असहयोग, उपेक्षा और निन्दा प्राप्त करनी हो--दूसरों की आंखों में अपना स्तर गया-गुजरा सिद्ध करना हो, उनके लिये सरल मार्ग खुला पड़ा है—गन्दा रहना शुरू कर दें। उपरोक्त सभी अभिशाप उन्हें सहज ही तुरन्त मिलने आरम्भ हो जायेंगे।

गन्दगी स्वास्थ्य की दृष्टि से अतीव हानिकारक है। उसे बीमारी का सन्देशवाहक अथवा आमन्त्रण कह सकते हैं। जहाँ गन्दगी रहेगी वहाँ बीमारी जरूर पहुँचेगी। गन्दगी से बीमारी को बहुत प्यार है। फूलों को तलाश करती हुई तितली जिस प्रकार जा पहुँचती है उसी तरह जहाँ गन्दगी फलफूल रही होगी वहाँ बीमारी भी खोज, तलाश मिलाती हुई जरूर पहुँच जायगी। बीमारी भी गन्दगी पैदा करती है यह ठीक है पर यह निश्चित है कि जो गन्दे हैं वे स्वस्थ न रह सकेंगे। जिन्हें बीमारी से प्यार हो उन्हें गन्दा रहना शुरू कर देना चाहिये। उनकी प्रिय देवी बिना बुलाये ही दौड़ती चली आयेगी।

मनुष्य की मूल प्रकृति गन्दगी के विरुद्ध है, इसलिए किसी व्यक्ति या पदार्थ को गन्दा देखते हैं तो अनायास ही घृणा उत्पन्न होती है और वहाँ से दूर हटने को जी करता है। अस्तु, जिन्हें मनुष्यता का ज्ञान है उन्हें गन्दगी हटाने का स्वभाव अपनी प्रकृति में अनिवार्यतः जोड़ लेना चाहिए। कहने की आवश्यकता नहीं--इस दृष्टि से भारत जैसे उष्ण देश में हर किसी के लिये खुरदरे तौलिये से रगड़-रगड़कर दिन में एक बार तो स्नान करना आवश्यक है। दो लोटे पीठपर लुढ़का लेने और गीले बदन ही कपड़े बदल लेने की बेगार भुगताना, न नहाने से भी बुरा पड़ता है। उससे देह का मैल छूटता नहीं वरन पानी पड़ने से और भी अधिक फूलता सड़ता है। नहाना हो तो इस तरह नहाना चाहिये कि शरीर का एक भी गुप्त या प्रकट अंग खुरदरे तौलिये से भली प्रकार रगड़-रगड़कर इतना साफ कर लिया जाय कि कि चमणी पर थोड़ी लालिमा उभर आये। सर्दी के दिनों में बन्द स्नान घर में नहाया जा सकता है। कम-जोर व्यक्ति गरम पानी ले सकते हैं। बीमारों का भीगे तौलिए से रगड़कर भी काम चल सकता है। हर हालत में हर व्यक्ति को स्वच्छता के लिये स्नान आवश्यक मानना चाहिये। चेचक जैसे रोगों में मजबूरी उत्पन्न हो जाय तो बात दूसरी है नहीं तो बीमारों को भी चिकित्सक के परामर्श से स्वच्छता का कोई न कोई रास्ता जरूर निकालते रहना चाहिये।

अन्य सभी इन्द्रियों के छिद्रों को भली प्रकार साफ किया जाना चाहिये अन्यथा वहाँ मैल जमने और सड़ने लगेगा। मुँह की सफाई बहुत ध्यान देने योग्य है। जीभ पर मैल की एक पर्त जमने लगती है और दांतों की झिरी में अन्न के कण छिपे रहकर सड़न पैदा करते हैं। मुँह से बदबू आने के यह दो ही प्रधान कारण हैं। सवेरे कुल्ला करते समय दांतों को भली प्रकार साफ करना चाहिये। जितने बार कुछ खाया जाय उतने ही बार कुल्ला करना चाहिये और रात को सोते समय तो जरूर ही मुँह की सफाई कर लेनी चाहिये। इससे दाँत अधिक दिन टिकेंगे, मुँह में बदबू न आयेगी और लोगों को पास बैठने पर दूर हटाने की आवश्यकता न पड़ेगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कपड़े जो शरीर को छूते हैं उन्हें विशेष ध्यान देकर साबुन से रोज धोना चाहिए। बनियान, अण्डर वियर, धोती, पाजामा आदि पसीना सोखते रहते हैं और रोज साबुन तथा धूप की अपेक्षा करते हैं। कोट जैसे कपड़े जिनका पसीने से सम्पर्क नहीं होता, नित्य धोने से छूट पा सकते हैं। भारी बिस्तरों को धोना तो कठिन पड़ेगा पर शरीर छूने वाले चादरे जल्दी-जल्दी बदलते रहना चाहिये और बिस्तर को कड़ी धूप में हर रोज सुखाना चाहिये।

घर के बर्तन इस तरह नहीं रहने चाहिए जिन पर चूहे और छिपकली पेशाब करें और उस जहर से अप्रत्यक्ष बीमारियाँ शरीरों में घुस पड़ें। खुले हुए खाद्य पदार्थों में कीड़े-मकोड़े घुसते हैं। इसलिये हर खाने में काम आने वाली वस्तु दबी-ढकी रहनी चाहिये। कपड़े, बर्तन, फर्नीचर, किताबें,जूते तथा अन्य सामान यथास्थान रखा हो तो ही सुन्दर लगेगा। अन्यथा बिखरी हुई अस्त-व्यस्त चीजें कूड़े और गन्दगी की ही शक्ल धारण कर लेती हैं, भले ही वे कितनी ही मूल्यवान हों। जिस वस्तु को झाड़ते-पोंछते न रहा जायगा वह धूलि के पर्त जमा होने तथा लगातार ऋतु प्रवाह सहते रहने से मैली पुरानी हो जायगी। हर चीज सफाई, मरम्मत और व्यवस्था चाहती है। घर का हर पदार्थ हमसे यही आशा करता है कि उसे स्वच्छ और सुव्यवस्थित रखा जाय। जिन्हें स्वच्छता से सच्चा प्रेम है वे शरीर का शृंगार करके ही न बैठ जायेंगे वरन् जहाँ रहेंगे वहाँ हर पदार्थ की शोभा, स्वच्छता एवं सुसज्जा का ध्यान रखेंगे। मकान की टूट-फूट और लिपाई-पुताई का, किवाड़ों की रंगाई का ध्यान रखा जाय तो उसमें बहुत पैसा खर्च नहीं होता। थोड़ा-थोड़ा समय बचाकर घर के लोग मिल-जुलकर यह सब सहज ही एक मनोरंजन की तरह करते रह सकते हैं और घर परिवार में शरीर और बच्चों में मानवोचित स्वच्छता का दर्शन हो सकता है। कलाकारिता स्वच्छता से आरम्भ होती है। अवांछनीयता को अस्वीकार करने की प्रवृत्ति का अभिवर्धन शरीर से आरम्भ होकर वस्त्रों तक और मन से लेकर व्यवहार तक की स्वच्छता तक विकसित होता चला जाता है। और इस अच्छी आदत के सहारे परम सौंदर्य से भरे हुए इस विश्व में भगवान की प्रकाशवान कलाकारिता को देखकर आनन्द विभोर रहता हुआ पूर्णता के लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है।

अपने यहाँ मल-मूत्र सम्बन्धी गन्दगी के लोग बुरी तरह अभ्यस्त होगये हैं। पुराने ढङ्ग के पाखानों में फिनायल, चूना आदि न पड़ने से उनमें भारी दुर्गन्ध आती है।बच्चों को नालिगों पर गलियों में टट्टी कराके रास्ते दुर्गन्धपूर्ण एवं जी मिचलाने वाले बना दिये जाते हैं। घरों के आगे लोग कूड़े का ढेर लगा देते हैं। पेशाब ऐसे स्थानों पर करते रहते हैं जहाँ सार्वजनिक आवागमन रहता है। महतर के भरोसे सब कुछ निर्भर रहता है। यह नहीं सोचते कि मल-मूत्र आखिर है तो हमारे ही शरीर का, उसकी स्वच्छता के लिए कुछ काम स्वयं भी करें और महतर के काम में सहयोग देकर स्वच्छता बनाये रखनेका अपना कर्तव्य निबाहें। देहातों में तो और भी बुरी दशा का वातावरण गन्दगी, दुर्गन्ध और अस्वास्थ्यकर घृणास्पद दृश्यों से भरा पड़ा रहता है। कूड़े और गोबर के ढेर जहाँ-तहाँ लगे रहते हैं और उसकी सड़न सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिये संकट उत्पन्न करती रहती है। इस दिशा में विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिये। सोख्ता पेशाबघर सोख्ता नालियाँ तथा गड्ढे खोदकर लकड़ी के शौचालय बहुत सस्ते में तथा बड़ी आसानी से बनाये जा सकते हैं। गाँव में पानी का लोटा साथ ले जाने की तरह यदि एक खुरपी भी लोग साथ ले जाया करें और छोटा गड्ढा खोदकर उसमें टट्टी होने के उपरान्त गड्ढे को ढक दिया करें तो जमीन को खाद भी मिले और गन्दगी के कारण उत्पन्न होने वाली शारीरिक, मानसिक और सामाजिक अवांछनीयता भी उत्पन्न न हो।

स्वच्छता मानव जीवन की सुरुचि का प्रथम गुण है। हमें अपने शरीर, वस्त्र, उपकरण एवं निवास की स्वच्छता का ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये जिससे अपने को सन्तोष और दूसरों को आनन्द मिले। निर्मलता, निरोगता, निश्चिन्तता और निर्लिप्तता के आधार पर उत्पन्न की गई आत्मा की पवित्रता हमें ईश्वर से मिलाने का पथ प्रशस्त करती है। स्वच्छता को हम अनिवार्य मानें और अस्वच्छता का निष्कासन निरन्तर करते रहें, यही हमारे लिये उचित है।

'गन्दगी की घृणित असभ्यता' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ढलती आयु का उपयोग इस तरह करें

क्र० ३२

भारतीय परम्परा के अनुरूप मानव-जीवन चार भागों में विभक्त है। इस विभाजन को चार आश्रम कहते हैं। मनुष्य की यदि सौ वर्ष पूर्ण आयु मानी जाय तो उसमें से २५ वर्ष ब्रह्मचर्य विद्याध्ययन और शरीर पुष्टि के लिए। २५वर्ष पारिवारिक उत्तारदायित्वों को निवाहने के लिये। २५वर्ष परिवार को स्वावलम्बी, सुसंस्कृत बनाने की देखभाल रखते हुए आत्म-विकास एवं लोक-मङ्गल की संयुक्त साधना के लिए।तथा अन्तिम २५वर्ष घर-परिवार की मोह,ममता से छुटकारा पाकर परिभ्रमण करते हुए विश्व-मानव के लिये —परमात्मा के लिये अपना पूर्णतया समर्पण करने के लिए हैं। इन चार अवधि विभाजन को चार आश्रम ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास कहते हैं। यह ऐसा संतुलित विभाजन है कि जब तक उसे क्रियान्वित किया जाता रहा, यह देश संसार वासियों की दृष्टि में स्वर्ग और इस देश का नागरिक देवता की तरह आदर्श एवं अभिनन्दनीय माना जाता रहा। जीवन का यह विभाजन-क्रम प्राचीनकाल की तरह आज भी आवश्यक एवं उपयोगी है।

यह सभी जानते हैं कि जीवन का आरम्भिक चौथाई भाग शारीरिक और मानसिक विकास के लिये है। संयम, व्यायाम, विद्याध्ययन, अनुशासन आदि सत्प्रवृत्तियों में निरत रहकर ब्रह्मचारी वर्ग भावी जीवन की आधारशिला सुदृढ़ करता है। जिसने यह मूल्यवान समय उच्छखलता में गँवा दिया वह शेष सारा जीवन रोते-कलपते ही गुजारेगा। युवावस्था, उपार्जन, उत्पादन, अभिवर्द्धन एवं स्थिरता उत्पन्न करने के लिए है। जो विवाह करना आवश्यक समझते हों और उसके लिये अपने को सुयोग्य, समर्थ मानते हों, वे ऐसा कर सकते हैं। अन्यथा माता-पिता, भाई-बहिन तथा समाज के अन्य दुर्बल परिस्थिति वालों की सहायता करने में उस आयु को नियोजित किया जा सकता है। विवाह उचित तो है पर अनिवार्य नहीं। गृहस्थ जीवन का अर्थ विवाह नहीं वरन पारिवारिक सुव्यवस्था केलिये अपना कर्तव्य एवं अनुदान प्रस्तुत करना है। ब्रह्मचारी अवधि में जो शक्तियाँ प्राप्त की थीं, उनका उपयोग अपनी तथा दूसरों की परिवार संस्था के विकास में किस तरह किया जा सकता है, यही गृहस्थ जीवन की साधना है।

व्यक्तिगत जीवन की दृष्टि में यह आधा जीवन अपने व्यक्तित्व और परिवार के लिए नियोजित है। यों उसमें भी जीवनोद्देश्य की पूर्ति के लिए समय-समय पर बहुत कुछ करते रहा जा सकता है। इसके उपरान्त वानप्रस्थ की स्थिति आती है। उसमें समर्थ और वयस्क बच्चों को स्वावलम्बी बनाना चाहिए। उनके ऊपर पारिवारिक उत्तार-दायित्वों का बोझ धीरे-धीरे बढ़ाते चलना चाहिए और अपना हाथ खींचना चाहिये। बूढ़े लोग अपना ही आधिपत्य नियन्त्रण घर-परिवार पर बनाये रहें तो बच्चे अनुभवहीन और अनुत्तारदायी बने रहेंगे और बूढ़ों के न रहने पर भारी कठिनाई अनुभव करेंगे। नवयुवकों में जोश तो बहुत होता है पर अनुभव के अभाव में वे अक्सर भूलें करते रहते हैं। इसलिये परामर्श, मार्ग-दर्शन एवं देखभाल की आवश्यकता बड़े लोग पूरा करते रहें, बाकी काम उन्हें करने और संभालने दें। बड़े बच्चे अपने छोटे भाई-बहिनों को संभालें। इस प्रकार व्यवस्था बना देने पर जो समय और मस्तिष्क बचे उसे अपनी आध्यात्मिक समर्थता बढ़ाने के लिये—साधना,स्वाध्याय,संयम एवं सेवा में लगाना चाहिये। यही पूर्णता के लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में आगे बढ़ने की तैयारी हैं। ब्रह्मचारी अवधि में लौकिक जीवन की प्रगति एवं स्थिरता के लिए तैयारी की गई थी। वानप्रस्थ में आध्यात्मिक जीवन की—परमात्मा—विश्व-मानव की सेवा-साधना करने के लिए अग्रसर होते हैं। यह अति महत्वपूर्ण समय है। इसमें बच्चे भी सुयोग्य बनते हैं, अपनी आन्तरिक प्रगति का भी अवसर मिलता है और उसी अवधि में लोक-मङ्गल के वे महत्वपूर्ण कार्य बन पड़ते हैं, जिनके ऊपर किसी समाज या राष्ट्र की वास्तविक प्रगति निभर रहती है।

जीवन का लक्ष्य पूर्णता प्राप्त करना है। अपूर्णतायें, मानवीय दुर्बलतायें, आत्म-निरीक्षण, आत्म-शोधन,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्म-सुधार एवं आत्म-विकास के चार आधारों पर अवलम्बित है । चिन्तन और मनन के द्वारा आत्म-निरीक्षण और आत्म-समीक्षा अपने दोष-दुर्गुणों को प्रकाश में लाती है । आत्म-सुधार के लिये शरीरगत बुरी आदतों और मनोगत दुष्प्रवृत्तियों से संघर्ष करके पुराने क्रम में आमूल चूल परिवर्तन करना पड़ता है।तपश्चर्या इसे ही कहते हैं । तप साधना का यही उद्देश्य है । यह वनवास की तरह घर में रहकर भी की जा सकती है । वानप्रस्थ इसी प्रयोजन के लिए है । लोक-मङ्गल में सेवा संदर्भ में संलग्न रहने से आत्म-विकास होता है । जिस स्वार्थपरता के साथ हम अपने निजी प्रयोजनों में अब तक लगे रहे, उसी तत्परता के साथ लोक-मङ्गल और परमार्थ प्रयोजन में रस लेने लगें तो समझना चाहिये कि आत्म-विकास की प्रक्रिया चल पड़ी । अपनेपन की परिधि को व्यापक बनाना,यह पूर्णता की दिशा में अग्रसर होने का मार्ग है । इसके लिये संकीर्ण स्वार्थपरता की परिधि से निकलकर विश्व-मानव की सेवा में अपने समय, मन तथा धन को नियोजित करना होता है।वानप्रस्थ-साधना का यही क्रम है और भारतीय परम्परा के अनुरूप हमारा ढलता जीवन—पचास से पचहत्तर तक की आयु—इसी में नियोजित होनी चाहिए ।

व्यक्ति और समाज दोनों के ही कल्याण की दृष्टि से वानप्रस्थ की उपयोगिता असाधारण है । इससे समय रहते बड़े बच्चे सुयोग्य बन जाते हैं और अपने पारिवारिक उत्तरदयित्व को समझने,निवाहने लगते हैं । उनमें जिम्मेदारी की भावना बढ़ती है और अनुभवी बनते हैं । यह व्यावहारिक प्रशिक्षण युवा बालकों को न मिले और वे देर तक परावलम्बी बने रहें तो आगे चलकर उन्हें उत्तरदायित्व सभालने, निवाहने में बड़ी कठिनाई पड़ती है । परिवार को स्वावलम्बी बना देना—उसकी एक बड़ी सेवा है । उसमें छोटे बच्चे भी अपनी जिम्मेदारी अनुभव करने लगते हैं और वे बिगड़ते नहीं ।

उपरोक्त प्रकार की व्यवस्था बनाकर ढलती आयु के हर व्यक्ति को स्वाध्याय, उपासना और आत्म-शोधन की तपश्चर्या के लिए समय निकालना चाहिये और लोक-मङ्गल की साधना में नियमित रूप से कम से कम चार घंटा समय देना चाहिए । प्रातः और सायंकाल का समय व्यक्तिगत साधना के लिये और दिन का बचा समय लोक-मङ्गल की सेवा प्रक्रिया में लगाने के लिये नियुक्त रहना चाहिए । कहना न होगा कि समय की आवश्यकता को देखते हुए आज की सबसे बड़ी लोक सेवा विचार परिवर्तन की दृष्टि से किये गये प्रयत्नों पर ही निर्भर है । आर्थिक शारीरिक या बौद्धिक सुविधायें बढ़ाने वाले कार्य भी यों सेवा क्षेत्र में आते हैं—पर उनका भी महत्व तभी है, जब लोगों की विचार-पद्धति का परिष्कार हो, अन्यथा अगणित सुख-सुविधायें रहते हुए भी मनुष्य दुःखी बना रहेगा । सुखों की मूल भित्ति उच्च विचारणा ही है । समाज में विचारशीलता, विवेकशीलता और सद्भावना बढ़ सके, ऐसे लोक सेवा के कार्यों को हाथ में लेना वानप्रस्थ साधना का अविच्छिन्न अङ्ग है । इस साधना को करते हुए आत्म-कल्याण पूर्णता की प्राप्ति और ईश्वरीय प्रकाश की उपलब्धि का पूरा लाभ एवं आनन्द उठाया जा सकता है । सत्कर्मों से ही शुभ संस्कार बनते हैं और वे ही हमारी प्रधान आध्यात्मिक पूंजी हैं । सद्भावना अभिवर्द्धन की लोक-सेवा उसी प्रयोजन की पूर्ति करती है । वानप्रस्थ में साधु-ब्राह्मणों जैसी लोक-मानस को परिष्कृत करने की सेवा साधना करनी होती है ।

जब तक वानप्रस्थ प्रणाली जीवित रही, देश को लाखों लोक-सेवी, अनुभवी और सुयोग्य कार्यकर्ता निःशुल्क मिलते रहे । उनके द्वारा ज्ञान कल्याण के असंख्य प्रयोजन पूरे किये जाते रहे और अपना देश सुसम्पन्न, समर्थ एवं सुसंस्कृत बना रहा । लोग स्वार्थी और संकीर्ण बनकर ढलती आयु को भी घर, परिवार के लिए ही व्यय करने लगे तो लोक-मङ्गल के लिये उच्च भावना सम्पन्न लोक-सेवियों का मिलना ही बन्द हो गया । व्यवसायी लोगों के हाथ सार्वजनिक क्षेत्र चला गया और समाज की भारी हानि हुई । देश के भावनात्मक अधःपतन का एक बहुत बड़ा कारण वानप्रस्थ परम्परा का लोप हो जाना ही है । समय की मांग है कि पचास वर्ष से अधिक आयु का हर व्यक्ति भले ही घर में रहे, पर वह आत्म-निर्माण और आत्म-विकास की आध्यात्मिक प्रक्रिया में संलग्न होकर अपने और समाज के कल्याण का महत्वपूर्ण प्रयोजन पूर्ण करने में संलग्न हो ।

———

—'उनसे जो पचास वर्ष के हो चले' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनीति से सतर्क रहें—अन्याय को रोकें

क्र० ३३

अनीति इसलिए बढ़ती है कि उसे रोका नहीं जाता। निर्बाध गति से जिसे रास्ता मिलेगा वह आगे ही बढ़ता जायगा। अच्छाई हो या बुराई सब की एक ही रीति है। अवरोध उन्हें रोकते हैं और निर्बाध निष्कण्टक मार्ग मिले तो वे निरन्तर बढ़ती चली जाती हैं। हमें प्रगति के लिए—उपार्जन और उपलब्धियों के लिये प्रयत्न करना पड़ता है पर साथ ही यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि आक्रमणकारी शक्तियाँ अपना अनिष्ट न करने लगें। उपार्जन की तरह सुरक्षा पर भी समान रूप से ध्यान न दिया जाय तो सारा गुड़ गोबर हो जायगा।

पैसा कमाने के लिए कृषि, व्यापार नौकरी आदि करते हैं और उस कमाई को सुरक्षित रखने के लिये घर, आलमारी, तिजोरी, ताला आदि का इन्तजाम करते हैं, बैंक में जमा करते हैं। यदि सुरक्षा का ध्यान न रखा जाय तो उस कमाई को चोर आसानी से अपहरण कर लेंगे। सर्दी, गर्मी, वर्षा आदि के ऋतु प्रभावों से अपने को बचाये रखने के लिये वस्त्र पहनते हैं। गन्दगी के कृमि-कीटों से बचने के लिये साबुन फिनायल आदि का प्रबन्ध करते हैं। चारों ओर आक्रमणकारी शक्तियाँ बिखरी पड़ी हैं। वे हमारे अस्तित्व को चुनौती देती हैं। जो बचाव करना नहीं जानता प्रतिरोध के लिये तैयार नहीं होता वह बेमौत मारा जाता है। घर में चूहे इसलिए फिरते हैं कि हमारी खाद्य सामिग्री खा जायें, सिर में चीलर, कपड़ों में जुएँ इसलिए उत्पन्न होते हैं कि हमें काटकर अपना पेट भरें, अपनी खाट में जन्मे खटमलों का उद्देश्य यह है कि हमें रात भर सोने न दें और रक्त पियें। मक्खी, मच्छर अपने विषैले प्रभाव से हमारे लिए जीव सङ्कट उत्पन्न की दुरभिसन्धि में लगे रहते हैं। और तो और न दीखने वाले रोग कीटाणु हवा में उड़ते रहते हैं और जब भी अवसर मिलता है चुपचाप हमारे शरीर में घुस जाते हैं और प्राणघातक बीमारियाँ उत्पन्न करते हैं। कीड़े-मकोड़ों की तो बात ही क्या है—चोर, डाकू, जेबकट, धोखेबाज, दुष्ट, दुर्जन, अन्यायी, आततायी गौर से देखते रहते हैं और जब भी उनका दाव फँस जाता है हमें बुरी तरह बर्बाद करके रख देते हैं।

भगवान की इस दुनियाँ में पुण्य और सहयोग बहुत है। वह न होता तो यहां जीवित रहना असम्भव हो जाता। पर साथ ही साथ और अन्याय भी कम नहीं हैं। यह इसलिए है कि हम सतर्क और सङ्घर्षशील रहें। यह दोनों ही गुण मानवीय प्रगति के लिये अति आवश्यक हैं। जो सतर्क नहीं, सावधान नहीं, लापरवाही बरतता है, वह जरूर किसी आक्रमण का शिकार होगा और घाटा उठायेगा। जो अपने बचाव और सुरक्षा का ध्यान नहीं रखता वह दुष्टता के आक्रमण का शिकार बनेगा। प्रकृति चाहती है कि हर व्यक्ति सजग और सतर्क रहे। सावधानी बरते और घात प्रतिघात से कैसे बचा जाता है, इस कला की जानकारी प्राप्त करे। सज्जन होना उचित है पर मूर्ख होना अक्षम्य है। हम दूसरों की सेवा सहायता विवेकपूर्वक करें यह ठीक है, पर कोई मूर्ख अथवा कमजोर समझ कर अपनी घात चलाये और ठग ले जाय यह अनुचित है।

हमें किसी के साथ अनीति नहीं करनी है, पर अनीति का शिकार भी नहीं होना चाहिए। ठगना बुरी बात है पर ठगाना उससे कम बुरा नहीं है। ठगी वहीं होगी जहां बेवकूफी और लालच की मात्रा बढ़ी-चढ़ी होगी। हमला उसी पर किया जायगा जिसने अपना स्वरूप दूसरों की आँखों में दुर्बल जैसा बना दिया होगा। अनेक पापों में शारीरिक एवम् मानसिक दुर्बलता भी एक भयंकर वर्ग के पातक हैं, हमें इनसे बचने के लिए अपना शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास इस तरह करना चाहिए कि किसी को अपनी दुर्बलता अनुभव न होने लगे और कोई अपनी कमजोरी भाँप कर आक्रमण की घात न लगाने लगे।

संसार में सज्जनता बहुत है। इस विश्व का सारा सौंदर्य और विकास ही उस पर निर्भर है। पर दुर्जनता उससे किसी प्रकार कम नहीं। देवत्व से असुरता का पलड़ा कुछ भारी पड़ता है। खासतौर से यह समय तो ऐसा ही है कि जिसमें दुष्टता और दुर्जनता अपने चरमोत्कर्ष को पहुँच चुकी है। ऐसे समय में पुण्य परमार्थ एवम् सेवा सहायता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के लिये तत्पर होने के साथ-साथ इस बात के लिये भी सगज होना चाहिये कि अनीति के आक्रमण उसकी उपलब्धियों का अपहरण न कर ले जायें । अपने को किसी घात प्रतिघात दुरभिसन्धि और छलना का शिकार न बनना पड़े । सतर्कता आवश्यक है । जैसे बुद्धिमान हाथी अपने चारों ओर की परिस्थितियों का पर्यवेक्षण करता हुआ आगे बढ़ता है वैसे ही हमें भी देखते रहना चाहिए कि आक्रमणकारी शक्तियां गुप्त और प्रकट रूप से घात लगाये तो नहीं बैठी हैं । डरना और आशङ्काग्रस्त रहना बुरी बात है पर उससे भी बुरा यह है कि व्यक्ति भुलावे में पड़ा रहे और तब सजग हो जब सब कुछ गँवा दिया गया हो । दुनियाँ में विश्वास के बिना काम नहीं चलता, पर अविश्वासी तत्त्वों के प्रति सजगता भी अनावश्यक नहीं है । असावधानी चोरी करने के लिए प्रोत्साहन देती है । अवसर न मिले तो हर व्यक्ति ईमानदार रह सकता है पर यदि कुछ भी कर गुजरने की खुली छूट हो तो किसी का भी ललचा जाना सम्भव है । इस लिये व्यवस्था ऐसी बनानी चाहिये कि किसी को वैसी छूट न मिले जिसमें उसे ललचाने और अवांछनीय आचरण करने का अवसर मिले ।

मित्रों के रूप में शत्रुता करना इस युग का नया फैशन है । पुराने जमाने के लोग आमने-सामने की लड़ाई पसन्द करते थे और जिससे लड़ना होता था उससे खुले मैदान दो-दो हाथ करते थे । अब नये जमाने में दूसरे तरीके काम में लाये जाते हैं । अब जिसे पछाड़ना होता है पहले उसका मित्र बना जाता है, घनिष्ठता बढ़ाई जाती है विश्वासपात्र बना जाता है और जब यह स्थिति आ जाए कि अब पूरा भरोसा किया जाने लगा तभी ऐसी घात चली जाती है कि बेचारा विश्वासी बुरी तरह मारा जाय । इस घात-प्रतिघात की आक्रमणकारी रीति-नीति से हर किसी को सजग रहना चाहिए । भोलापन और भलमनसाहत बहुत ही प्रशंसनीय गुण हैं । पर अति हर चीज की बुरी होती है । हमें इस सीमा तक भोला नहीं बनना चाहिये कि चारों ओर जाल बिछाकर बैठे हुए बहेलिये अपना उल्लू सीधा करने और हमें बर्बाद करने में सफल हो जायें । शत्रुओं से हमें सजग रहना चाहिए और मित्रों से सावधान । इन दिनों शत्रुता में जितना खतरा है मित्रता में उससे सैकड़ों गुने खतरे की सम्भावना समाई हुई है । दूसरों की नीयत पर अविश्वास करना बुरी बात है, पर उससे भी बुरा यह है कि बिना पूरी तरह जांच-पड़ताल किये यों ही किसी पर भरोसा कर बैठा जाय । धोखा किसी को नहीं देना चाहिये पर धोखा खाना कहाँ की बुद्धिमानी है हमें हर किसी पर पूरा विश्वास करना चाहिये साथ ही पैनी निगाह से यह देखते रहना चाहिये कि कहीं असावधानी से वह अवसर तो उत्पन्न नहीं हो रहा है जिसमें दुर्बल मन मनुष्य का अविश्वासी बन जाना सम्भव है ।

हमारी असावधानी ही लोगों को अनुचित लाभ उठाने के लिए ललचाती है । हमारी दुर्बलता ही अनेक आक्रमणकारियों को आमन्त्रित करती है । हम दुर्बल न रहें, शरीर से स्वस्थ और समर्थ रहें, मन को आशङ्का ग्रस्त नहीं, सगजता की सहज बुद्धि से सावधान रखें।विपताओं से बचना उचित है पर जब वे सामने आ ही जायें तो इतनी हिम्मत रखनी चाहिये कि बहादुर योद्धा की तरह बिना घबड़ाये धैर्य, साहस, विवेक और पुरुषार्थ के साथ उनसे निबटने और कट-कट कर लड़ने में कोई कठिनाई प्रतीत न हो । हमें मित्रवान होना चाहिये । सच्चे और झूँठे मित्रों की परख सीखनी चाहिए । चरित्रवान और आदर्शवादी व्यक्ति ही सच्चे मित्र हो सकते हैं । चापलूस चालाक और चरित्रहीन व्यक्ति वक्त पर धोखा देते हैं । इसलिए अपनी घनिष्ठता ऐसे लोगों से बढ़ानी चाहिये जिनमें सज्जनता एवम् समर्थता की कमी न हो । ऐसी मैत्री भी एक शक्ति है जिसके सहारे इस अनीति भरी दुनियाँ में अपनी सुरक्षा की किलेबन्दी की जा सकती है ।

हमें किसी के साथ अनीति नहीं बरतनी चाहिए पर अन्याय को भी सहन नहीं करना चाहिये । संघर्ष के बिना कोई छुटकारा नहीं । प्रतिरोध में हानि उठानी पड़ सकती है पर प्रतिरोध न करने में—चुपचाप अनीति सहते रहने में और भी अधिक घाटे में रहना होगा । अनीति बरतने की प्रक्रिया तभी गतिशील रहती है जब उसका अवरोध न हो । अनीति को हम कदापि सहन न करें भले ही उसके प्रतिरोध में कितनी ही बड़ी क्षति क्यों न उठानी पड़े । पाप को रोकना हो, अन्याय को घटाना हो तो उसके लिये समर्थ संघर्ष के लिए तत्पर होना ही पड़ेगा ।

 ——— **'न डरिये न अशान्त हूजिये' पुस्तिका से**

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो अनुचित है उससे सहमत न हों

क्र० ३४

पौदे की जड़ में पानी लगता जायगा तो वह बढ़ता ही चलेगा। अनीति का पोषण होता रहा तो वह दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती रहेगी। अन्याययुक्त आचरण करने वालों को प्रोत्साहन उनसे मिलता है जो इसे सहन करते हैं। उत्पीड़ित चुपचाप सब कुछ सह लेता है यह समझकर अत्याचारी की हिम्मत दूनी चौगुनी हो जाती है और वह अपना मार्ग निष्कंटक समझकर और भी अधिक उत्साह से अनाचरण करने पर उतारू हो जाता है। अन्याय सहना—अपने जैसे अन्य असंख्यों को उसी तरह का उत्पीड़न सहने के लिए परिस्थितियाँ पैदा करना है। अनीति सहना प्रत्यक्षतः आततायी को प्रोत्साहन देना है।

दूसरों को अनीति पीड़ित होते देखकर कितने ही लोग सोचते हैं जिस पर बीतेगी वह भुगतेगा। हम क्यों व्यर्थ का झंझट मोल लें। एक सताया जाता रहता है—पड़ौसी चुपचाप देखता रहता है। दुष्ट लोग हमें भी न सताने लगें यह सोचकर वे आँखें फेर लेते हैं और उद्दण्डों को उद्दण्डता बरतते रहने का निर्बाध अवसर मिलता रहता है। चार गुण्डे सौ आदमियों की भीड़ में घुसकर सरे बाजार एक-दो को चाकुओं से गोद सकते हैं। सारी भीड़ तमाशा देखेगी, आँखें फेरेगी या भाग खड़ी होगी। कहीं हम भी इस चपेट में न आ जाँय—इस भय से कोई उन चार दुष्टों को रोकने या पकड़ने का साहस न करेगा। इस जातीय दुर्बलता को समझते हुए ही आये दिन दुस्साहसिक अपराधों की—चोरी, हत्या, लूट, कत्ल, बलात्कार आदि की घटनाएँ घटित होती रहती हैं। जानकार, सम्बन्धित और जिन्हें सब कुछ मालूम है वे गवाही तक देने नहीं जाते और आतंकवादी अदालतों से भी छूट जाते हैं और दूने चौगुने जोश से फिर जन-साधारण को आतंकित करते हैं। एक-एक करके विशाल जन-समूह—थोड़े से उद्दण्डों द्वारा सताया जाता रहता है। लोग भयभीत, आतंकित, पीड़ित रहते हैं पर कुछ कर नहीं पाते। मन ही मन कुड़कुड़ाते रहते हैं। विशाल जन-समूह 'निरीह' कहलाये और थोड़े से दुष्ट दुराचारी निर्भय होकर संत्रस्त आतंकित करते रहें यह किसी देश की जनता के लिए, सामाजिकता के लिए भारी कलंक कालिमा है। इससे उस वर्ग की कायरता नपुंसकता, भीरुता, निर्जीवता ही सिद्ध होती है। ऐसा वर्ग पुरुष कहलाने का अधिकारी नहीं। पुरुषार्थ करने वाले को—साहस और शौर्य रखने वाले को पुरुष कहते हैं। जो अनीति का प्रतिरोध नहीं कर सकता उसे नपुंसक, निर्जीव और अर्धमृत ही कहना चाहिए। यह स्थिति हमारे लिए अतीव लज्जास्पद है।

हम एक-एक करके सताये जाते रहते हैं, इसका एक ही कारण है कि सामूहिक प्रतिरोध की क्षमता खो गई। उसे जगाया जाना चाहिये। आज जो एक पर बीत रही है वह कल अपने पर भी बीत सकती है। दूसरे पर होने वाले अत्याचार का प्रतिरोध हम न करेंगे तो कोई हमारी सहायता के लिए भी क्यों आयेगा? यह सोचकर व्यक्तिगत सुरक्षा की सम्भावना को ध्यान में रखते हुए हमें दूसरों की उत्पीड़न भी अपना ही ह्रास मानना चाहिये और सामाजिकता के पवित्र कर्त्तव्य को ध्यान में रखते हुए प्रतिरोध के लिये तत्पर होना चाहिए। हो सकता है कि इस चपेट में अपने को भी चोट लगे, आर्थिक तथा दूसरे प्रकार की क्षति उठानी पड़े पर इसे मनुष्यता के उत्तरदायित्व का मूल्य समझकर चुकाना चाहिये। इसे सहन करना ही चाहिए। शूरवीरों को आघात सहने का ही पुरुस्कार मिलता है और वे इसी आधार पर लोक श्रद्धा के अधिकारी बनते हैं।

लोक श्रद्धा के अधिकारी तीन ही हैं—(१) सन्त, (२) सुधारक, (३) शहीद। जिनने अपने आचरणों, विचारों और भावनाओं में आदर्शवादिता एवम् उत्कृष्टता का समावेश कर रखा है वे सन्त हैं। विपन्न परिस्थितियों को बदलकर जो सुव्यवस्था उत्पन्न करने में संलग्न हैं—अनौचित्य के स्थान पर औचित्य की प्रतिष्ठापना कर रहे हैं वे सुधारक हैं। अन्याय से जूझने में जिनने आघात सहे और बर्बादी को हँसते हुए शिरोधार्य किया वे शहीद हैं। ऐसे महामानवों के प्रति मनुष्यता सदा कृतज्ञ रही हैं और इतिहास उनका सदा अभिनन्दन करता रहा है। भले ही आपत्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहनी पड़े पर इस गौरव से जो गौरवान्वित हो सकता हो उसे अपने को धन्य ही मानना चाहिये । अनीति का सामूहिक प्रतिरोध करने की प्रवृत्ति हमें जन-मानस में जागृत करनी चाहिये और जिन्होंने इस संदर्भ में कुछ कष्ट सहा हो, शौर्य दिखाया हो, त्याग किया हो उनका भाव भरा सार्वजनिक अभिनंदन किया जाना चाहिए, ताकि वैसा प्रोत्साहन दूसरों को भी मिले और जन-जीवन में अनीति से लड़ने की उमंग उठ पड़े ।

हमें कई बार ऐसी बात मानने और ऐसे काम करने के लिए विवश किया जाता है जिन्हें स्वीकार करने को अपनी आत्मा नहीं कहती । फिर भी हम दबाव में आ जाते हैं और इनकार नहीं कर पाते । इच्छा न होते हुए भी उस दबाव में आकर वह करने लगते हैं जो न करना चाहिए । ऐसे दबावों में मित्रों या बुजुर्गों का निर्देश इतने आग्रहपूर्वक सामने आता है कि गुण दोष ध्यान रखने वाला असमंजस में पड़ जाता है । क्या करें ? क्या न करें ? कुछ सूझ नहीं पड़ता । कमजोर प्रकृति के मनुष्य प्राय: ऐसे अवसरों पर 'ना' नहीं कह पाते और इच्छा न रहते हुए भी वैसा करने लगते हैं । इस बुरी स्थिति में साहसपूर्वक इनकार कर देना चाहिए । जिसे हम बुरा समझते हैं उसे स्वीकार न करना सत्याग्रह है । और यह किसी भी प्रियजन सम्बन्धी या बुजुर्ग के साथ किया जा सकता है । इसमें अनुचित या अधर्म रत्ती भर भी नहीं है । इतिहास में ऐसे उदाहरण पग-पग पर भरे पड़े हैं । प्रह्लाद, भरत, विभीषण बलि आदि की अवज्ञा प्रख्यात है । अर्जुन को गुरुजनों से लड़ना पड़ा था । मीरा ने पति का कहना नहीं माना था । मोहग्रस्त अभिभावक लोभवश अनेक तरह के कुकृत्य करने के लिए विवश करते हैं । बेईमानी का धन्धा करने वाले बुजुर्ग अपने बच्चों से भी वही कराते हैं । अपनी मूढ़ता और रूढ़िवादिता की रीति-नीति अपनाने के लिये भी दबाते हैं । न मानने पर नाराज होते हैं—अवज्ञा का आरोप लगाते हैं, ऐसी दशा में किंकर्तव्य विमूढ़ होने की जरूरत नहीं है । आदर्श यही रहना चाहिये कि केवल औचित्य को ही स्वीकार किया जायगा, चाहे वह किसी के पक्ष में जाता हो । अनौचित्य को हर हालत में अस्वीकार किया जायगा चाहे किसी ने भी उसके लिये कितना ही दबाव क्यों न डाला हो ।

आज की सामाजिक कुरीतियों के अन्धानुकरण में पुरानी पीढ़ी ही अग्रणी है । बच्चों का जल्दी विवाह कर उन्हें स्वास्थ्य तथा शिक्षा से वन्चित करना उनका मिथ्या मोह मात्र हैं । नम्रतापूर्वक ऐसे अवसरों पर अपनी हठ असहमति व्यक्त की जा सकती है । दृढ़ता पूर्वक स्पष्ट शब्दों में यह कह दिया जाय कि हमें किसी भी शर्त पर खर्चीला विवाहोन्माद स्वीकार नहीं । जब करना हो तो बिना खर्च और बिना दहेज जेवर तथा बिना धूमधाम का विवाह ही करेंगे । देखने भर में यह अवज्ञा है पर वस्तुत: इसमें हर किसी का केवल हित साधन ही सन्निहित है । इसलिये बुरा लगने पर भी, कड़ुई दवा की तरह यह अवज्ञा सबके लिये श्रेयस्कर है । अतएव उसे किसी प्रकार अनुचित अथवा अधर्म नहीं कहा जा सकता ।

दोस्ती के नाम पर लोग सिगरेट, शराब, जुआ, सिनेमा आदि के कुमार्ग पर घसीटना चाहते हैं । ऐसे अवसरों पर भी अपनी असहमति को स्पष्ट और कड़े शब्दों में व्यक्त कर सकते हैं । दोस्ती का मतलब मित्र को कुमार्ग से छुड़ाना है । पथ भ्रष्ट करने के लिये घसीट ले जाना नहीं । इसी प्रकार कर्ज मांगने वाले, भीख के लिए अड़ने वाले, स्वार्थ के लिये अनुचित कृत्य कराने के लिए दबाव देने वाले, अनीति का विरोध न करके चुप रहने का आग्रह करने वाले लोग आये दिन सामने आते रहते हैं और चतुरता पूर्वक अपने तर्क तथा प्रतिभा का ऐसा प्रयोग करते हैं कि अनिच्छा होने पर भी उनके प्रभाव में आकर वैसा ही करने को विवश होते हैं । ऐसे अवसरों पर हमारा साहस इतना प्रखर होना चाहिए कि नम्र किन्तु स्पष्ट शब्दों में इनकार कर सकें । इनकार, असहयोग, विरोध और संघर्ष इन चार शस्त्रों से हम अनीति और अविवेक का सामना कर सकते हैं । सत्य और न्याय के लिए इन शस्त्रों का प्रयोग हमें साहसी शूरवीर योद्धा की तरह करते भी रहना चाहिए ।

———

'कठिनाइयों से डरिए नहीं लड़िए' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

औचित्य की सराहना और अनौचित्य की भर्त्सना की जाय ।

क्र० ३

मनुष्य में एक स्वाभाविक भूख प्रशंसा पाने की भी है । पेट पालने और मनोरंजन के साधन जुटाने के अतिरिक्त उसे अभिलाषा यह भी रहती है कि दूसरे लोग उसे बड़ा मानें । इस बड़ाई को पाने के लिए औसत मनुष्य उन कार्यों को करता है जिससे प्रशंसा और इज्जत मिल सके । इन दिनों जन साधारण का मानसिक स्तर बहुत ही गये गुजरे स्तर का हो चला है इसलिए पैसे वाले अमीर और आतंकवादी लोगों को इज्जत देते हैं। चूंकि धनियों को आदर मिलता है इसलिए लोग धनी बनना चाहते हैं । चूँकि दुष्ट और आततायियों के आतंक से लोग डरते हैं उनका रोब मानते हैं और खुशामद चापलूसी करते हैं । इसलिये वैसा बनने की इच्छा उठती रहती है चूँकि लोगों को कुत्सित मनोरंजन पसंद है और कला का कुरुचिपूर्ण स्वरूप ही सराहते हैं । इसलिये निर्लज्ज कामुकता भड़काने वाले नृत्य-गायन वाद्य और अभिनयों को ही कलाकारों ने अपना रखा है । प्रशंसा का भूखा मनुष्य यदि सराहना मिले तो निरीह पशुओं की नृशंस हत्या से गर्व अनुभव करने वाला शिकारी डाकू, जल्लाद, आततायी आदि कुछ भी बन सकता है ।

आज की पतनोन्मुख लोक रुचि की ही करामात है कि गये गुजरे कामों की प्रशंसा होती है और तम-साछन्न व्यक्तियों को वैसी ही गर्हित कार्य पद्धति अपनाने में प्रसन्नता अनुभव होती है । चूँकि दान को मूर्खता और संग्रह को बुद्धिमत्ता कहा जाता है इसलिये अब परमार्थ की मात्रा बुरी तरह घटती जा रही है और अमीरी की हविस पूरी करने को संलग्न संग्रह शीलता आकाश पाताल छूने वाली तृष्णा की तरह बढ़ रही है । ठाट-बाट शान-शौकत वाली फिजूलखर्ची अपनाने वाले चूंकि बड़े आदमी माने जाते हैं इसलिए बड़प्पन के भूखे लोग किसी भी उचित-अनुचित रीति से वैभव जुटाने में कटिबद्ध हैं । अमीरी का प्रदर्शन करने के लिये विवाह शादियों तथा दूसरे आडम्बरों में ढेरों पैसा इसलिये फूंकते हैं कि लोग उन्हें धनी मानी मानें और इज्जत आवारू की दृष्टि से देखें । इन दिनों चालाकी, धूर्तता बेईमानी, बदमाशी, दुष्टता से भी यदि कुछ मतलब गाँठ लिया जाय तो मिलने जुलने वाले सराहना करने और बधाई देने आवेंगे ही । ऐसे वातावरण में अनैतिकता का आर्थिक और प्रशंसात्मक दुहरा लाभ उठाने के लिये हर किसी का मन चले तो यह स्वाभाविक है ।

पतनोन्मुख समाज और बढ़ती हुई दुष्प्रवृत्तियों को रोकने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि स्वार्थी, संकीर्ण और अवांछनीय व्यक्तियों तथा कार्यों की प्रशंसा ही बन्द न की जाय वरन उनकी भर्त्सना का साहस भी समेटा जाय । इसी प्रकार सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्द्धन तथा सज्जनता के परिपोषण के लिये यह आवश्यक है कि जिसने अपने आचरण में अनुकरणीय आदर्शवादिता समाविष्ट की हो उनकी मुक्त कंठ से व्यापक रूप से सराहना की जाय । प्रशंसा सफलता की नहीं वरन सज्जनता की ही की जानी चाहिये । कुमार्ग पर चलकर पाई हुई सफलता की अपेक्षा सन्मार्ग पर चलते हुए मिली हुई असफलता ही सराहनीय समझी जानी चाहिये । फांसी पर चढ़ने वाले ईसामसीह, जहर पीने वाले सुकरात, गोली से उड़ाये जाने वाले गान्धी एक प्रकार से असफल ही कहे जा सकते हैं पर उन्होंने जिस मार्ग को अपनाया वह वन्दनीय ही कहा जायगा । यही रीति-नीति हर कार्य के लिए और हर व्यक्ति के लिए अपनाई जानी चाहिए । जिसने अपने स्वार्थ साधन और ऐश आराम के लिए सम्पदा कमाई उसकी प्रशंसा क्यों की जाय ? जिसने अनीति के मार्ग से सफलता पाई—जिसने लोक मानस को प्रेरणा दी ऐसे पदवीधारी, विद्वान कलाकार, नेता, अभिनेता की सराहना में एक शब्द नहीं निकाला जाना चाहिए । एक पङ्क्ति भी नहीं लिखी जानी चाहिए । अन्यथा अनीति का आवरण रोका नहीं जा सकेगा वरन दिन दिन बढ़ेगा । सिनेमा में नाचने वाली नटनियों के रंग-बिरंगे फोटो अखबारों में छपते देखकर अब लड़के लड़कियों के मन में वैसी ही उमंगे उठती हैं । त्याग और बलिदान को जिन दिनों अखबार सराहते थे उन दिनों स्वतन्त्रता संग्राम के लिये त्याग, बलिदान करने की लहर भी अपने देश में हिलोरें लेती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org
हुई दीखती थीं। आज मिनिष्टरों के गुण गान छपते हैं तो किसी भी तरकीब से उस पद तक पहुँचने के लिए हर प्रभावशाली व्यक्ति लालायित दीखने लगा है। यदि डाकुओं की प्रशंसा करने वाले लेख फोटो, कविता, फिल्म, नाटक प्रस्तुत किये जाँय तो निश्चित रूप से कुछ ही समय में सारा जोशीला वर्ग डाकू बनने की साधना कामना करने लगेगा।

सज्जनता और सत्प्रवृत्तियों का अभिवर्द्धन और अभीष्ट हो तो उसके लिए प्रशंसा और प्रोत्साहन प्रस्तुत करने की तैयारी करनी पड़ेगी। दुष्टता और सम्पदा की सराहना करने वाले लोगों की एक बहुत बड़ी संख्या मौजूद है। फलस्वरूप वे अवांछनीय तत्व द्रुतिगति से बढ़ रहे हैं। हमें एक ऐसा वर्ग खड़ा करना है जो सज्जनता और सत्प्रवृत्तियों को सराहे और उनकी प्रशंसा व्यापक बनाने के लिये आवश्यक साधन, जुटाये—पर्चे, पोस्टर, विज्ञापन या छोटे बड़े अखबार निकाल कर हमें सज्जनता के समाचार छापने चाहिये। और जिन्होंने अनुकरणीय उदारता के कोई आदर्श प्रस्तुत किये हैं उनकी सराहनीय जानकारी को व्यापक क्षेत्र में फैलाया जाना चाहिए। इन दिनों राजा रईसों के हिस्से में ही प्रशंसा पक्ष चला गया है। हमें ऐसे गरीबों और छोटे आदमियों के गुणानुवाद प्रस्तुत करने चाहिये जिन्होंने लोक मंगल के लिये अपनी छोटी शक्ति और छोटे साधनों के रहते हुए भी महानता एवं उदारता का साहसिक परिचय दे डाला। इस प्रयोजन के लिये प्रकाशन लेखन और गायन की पूरी-पूरी साधन सामग्री जुटानी चाहिए। लोक मंगल की दृष्टि से किये गये त्याग और बलिदानों को—फिर चाहे वे गरीब या पिछड़े लोगों द्वारा ही प्रस्तुत क्यों न किए हों सर्वसाधारण की जानकारी में प्रशंसात्मक घटनायें जीवनियां खोजने और उन्हें गद्य या पद्य रूप में छपवाने के लिए हमें हर भाषा में समर्थ तन्त्र खड़े करने चाहिये।

अभिनन्दन आयोजनों, जयन्तियों, शताब्दियों की एक ऐसी संगठित श्रृंखला चलनी चाहिए जिसके अन्तर्गत शानदार उत्सव मनाये जाँय और उन जीवित या स्वर्गस्थ सज्जनों का अभिनन्दन किया जाय जिन्होंने मानवता को जीवित रखने के लिये अपने अनुकरणीय आदर्श उपस्थित किये। ऐसे लोगों के स्मारक बनाये जा सकते हैं। इमारतें न बन सकें तो स्मृति चबूतरों पर शिला लेख जड़े जा सकते हैं या वृक्ष लगाये जा सकते हैं जहां जाकर जन साधारण को उपयुक्त अवसरों पर श्रद्धांजलि अर्पित करने का अवसर मिलता रहे। स्वर्गीय उदारमना लोगों के सिलाचित्र या प्रतिमायें सार्वजनिक स्थानों में स्थापित करने का तरीका अच्छा है। जीवित लोगों को मानपत्र या उपहार, अभिनन्दन अथवा पदवी प्रदान जैसी कुछ व्यवस्था की जा सकती है। पर यह ध्यान रखा जाय कि इस प्रकार का लाभ केवल उन्हें ही मिले जो वस्तुतः उसके अधिकारी हों। यह अनाधिकारी लोग तिगड़म भिड़ाकर इस प्रकार की प्रशंसा प्रतिष्ठा प्राप्त करने में सफल हो गये तो फिर यह महान प्रक्रिया भी अपना महत्व खो बैठेगी। फिर ऐसे स्तर की प्रशंसा पाने, करने में सच्चे मनुष्य अपनी बेइज्जती अनुभव करने लगेंगे इसलिए इस प्रकार की अभिनन्दन प्रशंसा जुटाने वालों को पूरी सतर्कता से यह ध्यान रखना चाहिए कि अवांछनीय और अनाधिकारी लोग ददं फंद, पक्षपात या पार्टी बन्दी के आधार पर इस पुण्य प्रक्रिया का अपने पक्ष में अनुचित लाभ न उठाने पायें।

सम्पदा को प्रतिष्ठा मिलने से लालच बढ़ा है और अनैतिकता की कीमत पर अमीरी बढ़ाने की प्रवृत्ति पनपती है। अवांछनीयता के आतंक के सामने लोगों ने सिर झुकाया और विरोध से कतरा कर दुष्टता को समर्थन दिया है। दुष्प्रवृत्तियां इसी प्रकार पनपी हैं। इसके दुष्परिणाम सामने हैं। नव निर्माण के लिए इस विग्रह को उलटना होगा। पहले कदम के रूप में सज्जनता का अभिनन्दन प्रोत्साहित किया जाना चाहिये। दूसरे कदम के रूप में दुष्टता और अवांछनीयता की भर्त्सना के लिए व्यापक मोर्चा खड़ा करना पड़ेगा और तीसरे कदम में दुष्टता के प्रतिरोध के लिये संघर्ष की ऐसी योजना बनानी पड़ेगी जिसके भय से अनाचार करने का उत्साह ही ठण्डा हो जाय और अवांछनीय असामाजिक कार्य करने वालों को उनके फलस्वरूप उन कठिनाइयों के बारे में हजार बार विचार करना पड़े जो उन्हें अपने कुकृत्य के फलस्वरूप अनिवार्य रूप से भुगतनी पड़ा करेंगी।

—·— —'पक्षपात त्यागें औचित्य अपनावें' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुव्यवस्था ही परिवारों को सुविकसित रख सकेगी ।

क्र० ३६

परिवार यदि विसंगठित, अनियन्त्रित हो तो उससे निरन्तर क्लेश कलह ही बना रहेगा और जी चाहेगा कि छोटी इकाई बनाकर अलग रहा जाय । पर यदि उसमें सद्भावना और आत्मीयता का पुट उचित मात्रा में मौजूद है—व्यवस्थापूर्वक सारा क्रम चलता है तो उस कुटुम्ब में स्वर्ग जैसी अनुभूति होगी । भारत जैसे देश में जहाँ बालकों और वृद्धों को घर के कमाऊ लोगों पर ही निर्भर रहना पड़ता है अधिकांश को कृषि, गृह उद्योग के माध्यम से मिल जुल कर ही चलानी पड़ती है तथा पारस्परिक सेवा सहायता के अच्छे साधन तुरन्त उपलब्ध करना संभव नहीं, वहाँ संयुक्त परिवार की आवश्यकता बनी ही रहेगी । इग्लैण्ड, अमेरिका की बात जाने दें, जहाँ सरकार वृद्धों की बेकारी की पेन्शन देती है, शिक्षा, चिकित्सा, प्रसूत आदि की सुविधा हर नागरिक को उपलब्ध है । वहाँ पारस्परिक निर्भरता उतनी न रहने में आजीविका साधन सर्वत्र उपलब्ध रहने से संयुक्त परिवार की आवश्यकता नहीं रहती और वयस्क व्यक्ति विवाह होते ही अपना अलग परिवार बना लेते हैं पर यहाँ की आर्थिक दुर्बलता और भावनात्मक स्थिति मोह ममता की दिशा में बढ़ी-चढ़ी रहने से संयुक्त परिवार ही उत्तम रहेंगे ।

यदि हमें बड़े परिवार रखने ही हैं तो उनका ढाँचा ऐसा क्यों न बनाया जाय, जिससे सभी को उचित सम्मान, उचित अधिकार प्राप्त हो और उचित कर्तव्य पालन की आवश्यकता हर सदस्य अनुभव करे । इस ओर उपेक्षा बरती गई है समयानुकूल आचार संहिता बनाने पर ध्यान नहीं दिया गया है । यही कारण है कि एक घर में एक साथ रहने वाले परिवार के बीच वैसा स्नेह सौजन्य, सद्भाव सहयोग और संगठन नहीं दीखता जैसा होना चाहिए । साल भर से तो कौटुम्बिकता का आनन्द नहीं लिया जा सकता ।

घर की एक व्यवस्था पद्धति होनी चाहिये । जिसके अन्तर्गत बड़ों को उचित सम्मान, श्रद्धा सुविधा देने का सभी छोटे लोग समुचित ध्यान रखें । उनके अनुभवों से लाभ उठाने और पिछली सेवाओं के लिए कृतज्ञ रहने की भावना विद्यमान रहे । समय समय पर उनके पास परामर्श आदि के लिए जाते रहें तो उनमें से जो उचित एवं आवश्यक हो उन्हें पालन भी करते रहा जाय तो वृद्धों को संतोष रह सकता है । जिनकी शारीरिक स्थिति अधिक अशक्त हो गई है उन्हें भोजन, स्नान, स्वच्छता, चिकित्सा, आदि की सुविधा देने तथा शरीर यात्रा में आवश्यक सहायता करने की व्यवस्था रखने की आवश्यकता है । इतना सहारा वयो-वृद्धों को कुटुम्बियों से मिलना ही चाहिए । वृद्धों को भी घर के समझदार लोगों की विवेक बुद्धि विकसित करने में सहायता तो देनी चाहिए पर बहुत नियंत्रण नहीं करना चाहिए।जमाना तेजी से बदला है और देखते-देखते पुराने ढर्रे और नई व्यवस्था में बहुत भारी अन्तर आ गया । नई रोशनी के लोग नये ढंग से सोचते हैं और आधुनिक रीति-नीति का जीवन यापन करना चाहते हैं । चूँकि वे बातें पुराने जमाने में नहीं होती थीं । इसलिए बुजुर्गों को वे अनावश्यक और अनुचित लग सकती हैं । इसलिए वे उनका आवश्यकता से अधिक विरोध, प्रतिरोध करते पाये जाते हैं । इसकी प्रतिक्रिया अवज्ञा के रूप में सामने आती हैं क्योंकि वृद्धों की बुद्धिमत्ता उस बात में है कि वे अपने अनुभव परामर्श का लाभ भी नई पीढ़ी को देते रहें और इतनी ढील भी छोड़े कि उन्हें अपनी रुचि का रहन सहन अपनाने की छूट रहे । हाँ स्वतन्त्रता को उच्छृङ्खलता और अनैतिकता की सीमा तक नहीं पहुँचने दिया जाय ।

कमाऊ लोगों पर इस बात की भारी जिम्मेदारी है कि वे अपने द्वारा उपार्जित धन को पूरे परिवार की धरोहर समझें और अपने लिए अनावश्यक खर्च के लिए चाह न करें । उस पैसे से घर की नई पौध को शिक्षा, स्वास्थ्य, विनोद, अनुभव और संस्कार मिलने का समुचित अवसर मिले । इसके लिए खर्च की उपेक्षा रहेगी ही यदि कमाऊ लोग अधिक उड़ाने खाने लगें तो उस छोटी पौध के विकास में कटौती करनी पड़ेगी। बच्चों को जन्म देने वाले माता-पिता से लेकर घर के कमाऊ लोगों तक हर सदस्य का कर्तव्य है कि अविकसित छोटी पौध को समुन्नत बनाने में कुछ उठा न रखें यह तभी सम्भव है जब कि वे अपनी निजी आवश्यकतायें उतनी ही रखें जितनी अनिवार्य हैं तभी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ बचत और उसका लाभ मिल सकना मध्यम श्रेणी के लोगों के लिए सम्भव है ।

बड़े भाइयों को छोटे भाई बहिनों का एक प्रकार से अभिभावक या पिता हो माना जाना चाहिये । उनका कर्त्तव्य है कि अलग-अलग रहकर अपनी कमाई खुद और पत्नी को खिलाने भर की ओछी बात न सोचें वरन पिता ने जिस आत्मीयता और खर्च उठाकर उन्हें पाला पोसा समर्थ किया है इसका पितृऋण अपने छोटे भाई बहिनों की सहायता करके चुका दें । घर में अच्छी परम्परायें स्थिर रखना न केवल वर्तमान लोगों की सुविधा के लिए आवश्यक है पर अगली पीढ़ी को संस्कारवान बनाने के लिए भी पारिवारिक वातावरण में शालीनता सज्जनता और व्यवस्था का समुचित पुट रहना चाहिए । शिष्टाचार, मधुर भाषण, समय-समय पर विचार विनमय, मनोविनोद, एक दूसरे की सुविधा-असुविधा पूछते रहना, रुग्णता या अन्य कठिनाइयों में सहानुभूति सहायता व्यक्त करना, सबकी सलाह से घर खर्च का बजट बनाना और वर्तमान तथा भावी व्यवस्था का ढाँचा सब की सलाह से खड़ा करना आदि उचित परम्परायें बनी रहें तो परम्परा स्नेह, सद्भाव और सङ्गठन की स्थिति बनी रह सकती है । बच्चे इन्हीं संस्कारों को जीवन में धारण करके भविष्य में अपना परिवार ऐसा ही सुव्यवस्थित रख सकते हैं और आज के गृह संचालक जब वृद्ध होंगे तब उनके लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं । बड़प्पन के नाम पर न कोई निठल्ला बैठे और न मनमानी चलाये । इसी प्रकार छोटे होने के नाते किसी को सामर्थ्य से अधिक श्रम और तिरस्कार के कोल्हू में न पेला जाय तभी असंतोष भड़कने से रुक सकता है ।

घर को सुन्दर, स्वच्छ, सुव्यवस्थित बनाने में बच्चा-बच्चा योगदान देने लगे और अनुशासन, नियमितता का हर एक को समुचित ध्यान रहे ऐसा ढर्रा पड़ना चाहिए । स्थिति के अनुरूप जेब खर्च करने की छूट रहे । पैसे पैसे के लिये मुहताज घर का कोई सदस्य नहीं रहना चाहिए । क्रोध,आवेश,उत्तेजना, अवज्ञा या उच्छृङ्खलता के बीज जहाँ भी जिसमें भी पनपें उसे आरम्भ से ही रोके जाने, सुधारे संभाले जाने का ध्यान पूरे परिवार का रहे, अनुचित गति विधियाँ किसी की भी क्यों न हों कोई भी उनका परोक्षसमर्थन न करे और न उपेक्षा बरते । सब मिलकर ऐसे विष बीज यदि आरम्भ में ही उखाड़ फेंकने के लिये सतर्क रहें और प्यार, न्याय, तर्क एवं दबाव से ऐसी विकृतियों का समाधान करते रहें तो घर में कुसंस्कारिता पनपने न पायेगी और सुसंस्कृत परिवार की संरचना एवं संघटना संभव हो सकेगी ।

प्रजनन की संख्या बढ़ने न पावे इसका ध्यान आरम्भ में ही रखा जाय । समय बड़ा नाजुक और मँहगाई का आ गया है। अधिक बालकों का उत्तरदायित्व अब न महिलाओं की शारीरिक स्थिति रह गई है और न पुरुषों की उपार्जन शक्ति उतनी है कि बालकों के समुचित विकास कर सकने योग्य साधन जुटा सकें इसलिए हर विवाहित के मन में यह तथ्य कूट-कूट कर भरा जाना चाहिये कि वह न्यूनतम बच्चों तक सीमाबद्ध हो जाय और जितने बच्चे आवश्यक हों उनके बीच में कम से कम पाँच वर्ष का अन्तर रखें । अन्धाधुन्ध बच्चे पैदा करते जाना सुखी गृहस्थ की आधार शिला में पलीता लगाने जैसी मूर्खता ही मानी जा सकती है ।

कुरीतियों और अन्ध परम्पराओं में बहुत सा पैसा और समय खर्च हो जाता है । बड़े बूढ़े इन बातों पर प्रायः जोर देते हैं। इस सम्बन्ध में हमें विवेकवान होना चाहिये और निरर्थक रूढ़ियों को हटाने घटाने में थोड़ा विरोध सहना पड़ता हो तो भी सहना चाहिये । क्योंकि वे बुराइयाँ परिवार का अविवेक और दारिद्रय ही बढ़ा सकती हैं । एक से दूसरा अनुकरण करना है तो वह ढर्रा दूसरे परिवारों में भी चल पड़ता है जिससे अन्ततः सारे समाज और देश को हानि पहुँचती है ।

नित्य परिवार गोष्ठी के रूप में विचारोत्तेजक लेख या संस्मरण, कथा प्रसङ्ग या समाचार सुनाने और उनकी समीक्षा करने की परिपाटी अनावश्यक रूप से चलती रहनी चाहिये।शिक्षित लोग सत्साहित्य के चुने हुए प्रसङ्ग रात्रि के समय थोड़ा समय निर्धारित करके नियमित रूप से सुनाया करें तो इस प्रशिक्षण से परिवार के भावनात्मक विकास और अनुभव में भारी वृद्धि हो सकती है और उसका आशाजनक लाभ मिल सकता है । ———

 —'परिवार का पालन ही नहीं निर्माण भी' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दाम्पत्य जीवन-एक आध्यात्मिक योग साधना

क्र० ३७

दो भिन्न स्थानों, भिन्न परिवारों, भिन्न वातावरणों में पैदा हुए और पले नर-नारी भिन्न प्रकृति और भिन्न आकृति के होते हुए भी समग्र एकता के सूत्र में बँधकर विवाह का प्रयोजन पूरा करते हैं। विवाह का वास्तविक उद्देश्य है दो आत्माओं की प्रथकता समाप्त करके एक दूसरे के लिये समर्पण। इस समन्वय और समर्पण से एक ऐसी सम्मिलित सत्ता का प्रकाश होता है जो प्रथकत्व के बाह्य लक्षण बनाये रहते हुए भी आंतरिक एकता के रूप में परिणित हो सके।

आध्यात्मिक प्रगति का आधार है प्रेम। जिसके अन्तःकरण में जितना अधिक, जितना निर्मल प्रेम उफनता है वह उतना ही बड़ा सन्त है। भक्ति का अर्थ है प्रेम भावना। भक्त का अर्थ है प्रेमी। भगवान् से प्रेम करने की साधना हमारे जीवन को प्रेम भावना मे ओत-प्रोत करने के लिए है। प्रेम को परमेश्वर कहा जाता है। मनुष्य के अन्तःकरण में भगवान की अनुभूति उफनती हुई प्रेम भावनाओं के रूप में ही होती है। इस आध्यात्मिक महत्ता का अभ्यास दाम्पत्य-जीवन की प्रयोगशाला में किया जाता है। एक दूसरे के प्रति अनन्य आत्मीयता, श्रद्धा, सौजन्य, समता और वफादारी का आरोपण कर इतना अनुराग उत्पन्न करते हैं कि साथी यदि दोष-दुर्गुणों से भरा हुआ, अयोग्य या अकिंचन हो तो भी वह संसार का सबसे बड़ा सुन्दर रूपवान, गुणवान, योग्य एवं सज्जन प्रतीत होने लगता है। आत्मीयता ऐसी ही वस्तु है, जिस पर भी आरोपित की जाती है उसे परम प्रिय बना देती है। पति-पत्नी में भी मनुष्योचित दुर्बलतायें एवं त्रुटियां रहती हैं पर यदि विवाह के उद्देश्य को समझकर परस्पर आत्मीयता, समर्पण, एकता और ममता का आरोपण कर लिया गया है तो उन त्रुटियों के रहते हुए भी—न सुधरते हुए भी गृहस्थ जीवन की नाव आनन्दपूर्वक आगे बढ़ चलती है। वैसे होता यह है कि अपने लिए कुछ नहीं—साथी के लिए सब कुछ की बात सोचने वाला पक्ष अपनी त्रुटियों को सहज ही सुधार लेता है ताकि उसके कारण साथी को किसी प्रकार की असुविधा आदि का सामना न करना पड़े।

योग का अर्थ है, जोड़। दो आत्माओं को जोड़ देना भी एक योग साधना है। राजयोग, हठयोग, जपयोग, लययोग, प्राणयोग आदि की तरह गृहस्थयोग भी एक उच्चकोटि की साधना है। जिसका प्रतिफल पहले ही दिन से मिलना आरम्भ हो जाता है। अन्य साधनायें कालान्तर में फल देती हैं पर इस गृहस्थयोग की साधना से आरम्भ के दिन से ही प्रतिफल मिलना आरम्भ हो जाता है। एकाकीपन में जो सूनापन, नीरसता और अनिश्चितता है बात की बात में दूर हो जाती है। मिला तो एक ही साथी है पर लगता है उस साथी के गुण, कर्म और परिजन सभी अपनी सहायता करने वाली सेना के रूप में अपने साथी बन चले। इस अनुभूति में दाम्पत्य-जीवन के दोनों पक्ष अपने को बहुत समर्थ मानते हैं और साथी के स्नेह, सौजन्य की अमृतमयी अनुभूति से हर घड़ी सरसता अनुभव करते रहते हैं।गङ्गा और यमुना के मिलने का सङ्गम तीर्थराज बन जाता है। दो आत्माओं का आन्तरिक मिलन—विवाह एक वैयक्तिक तीर्थराज है जिसमें स्नान करते हुए पुण्य प्रक्रिया का अनुभव पति-पत्नी दोनों को ही निरन्तर होता रहता है।

विवाह के उपर्युक्त परम प्रयोजन को समझने और चरितार्थ करने वाले जोड़े अपने छोटे-छोटे घरोंदों में गरीबी का जीवन जीते हुए भी स्वर्ग जैसी शान्ति, प्रसन्नता, प्रफुल्लता, संतुष्टि, सरसता और सुविधा का आनन्द लेते हैं। उन्हें साथी के रूप, शिक्षा, गुण अथवा योग्यता की चर्चा अनावश्यक लगती है क्योंकि सच्चा प्रेम इन सबके अभाव में भी साथी को देवता जैसा बना देता है। प्रेम भरे अनुरोध से या तो सहचर की त्रुटियों को सुधार लेता है, अथवा अपनी सहिष्णुता से उन्हें दर गुजर करके भी काम चला लेता है। जहां स्नेह और सद्भावना की समुचित मात्रा विद्यमान हो वहाँ क्लेश-कलह का कोई कारण शेष नहीं रह जाता है। मिलन का प्रतिफल आनन्द ही होना चाहिये। गृहस्थयोग की साधना से जो अनेक ऋद्धि-सिद्धि मिलती हैं उनमें से सत्गुणी सुयोग्य सन्तान और सुव्यवस्थित परिवार के प्रतिफल भी हैं। जिन पति-पत्नी में हार्दिक प्रेम और अटूट विश्वास होगा उनकी सन्तानें कभी कुपात्र नहीं निकलेंगी। प्रेम का पोषण जिन्होंने अपनी माता की प्रगाढ़ आत्मीयता में से उपलब्ध किया है उन बालकों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org
अनायास ही असंख्य सद्गुण विकसित रहते हैं। ऐसे व्यक्ति अपने छोटे या बड़े परिवार की स्नेह, सौजन्य की शृंखला में बँधे रहकर कुटुम्ब के हर सदस्य को सुखी एवं विकासोन्मुख होने का अवसर देते हैं।

आज लोगों ने विवाह के उच्च उद्देश्य एवम् आदर्श को ही भुला दिया। अब काम क्रीड़ा की पशुता का एक उद्घोषित प्रमाण पत्र विवाह रह गया है। वासना और विलासिता की दृष्टि से जोड़े मिलाये जाते हैं। लड़के रूपवती और उत्तेजित लड़कियाँ ढूँढ़ते हैं ताकि वासना का अधिक आकर्षण एवं उपयोग प्राप्त हो सके। लड़कियाँ उपर्युक्त तथ्य के अतिरिक्त अर्थ उपार्जन के अधिक चौड़े स्रोत भी ढूंढ़ती हैं ताकि उन्हें विलासिता और आरामतलबी को अधिक सुविधा मिल सके। लड़के की कमाई और लड़की का रूप-लावण्य आज प्रधानतापूर्वक देखे जाते हैं। सोचा जाता है कि यह उपलब्धियाँ मिल जायें तो विवाह सार्थक माना जायगा। पर यह भुला दिया जाता है कि विवाह की सफलता का आधार साथी की मनोभूमि, संस्कृति एवं आदर्शवादिता ही है। काम-कौतुक के लिये—उपभोग के लिये विवाह नहीं किये जाते, उनका प्रयोजन आध्यात्मिक है। जहाँ इस दृष्टिकोण से विवाह सम्पन्न होगा वहाँ गृहस्थ जीवन का आनन्द मिलेगा अन्यथा काम-कौतुक के क्षणों को छोड़कर शेष समय उनमें अविश्वास और असन्तोष ही बना रहेगा। सच्ची सहानुभूति, ममता और एकता के बिना, पास रहते हुए भी दूरवर्ती अपरिचितों की तरह वे गृहस्थ की लाश ढो रहे होंगे।

आवश्यकता इस बात की है कि जो विवाह कर चुके हैं या जिन्हें विवाह करना है वे उसके उद्देश्य और आदर्श को भी समझें। अपनी मनोभूमि में उतनी कोमलता एवं उदारता हो, कि साथी को स्नेह सिक्त करके उसके विरानेपन को अपनेपन में बदल सकें, तो ही विवाह करना चाहिये। अन्यथा काम-कौतुक के लिये विवाह करना बहुत मँहगा और झञ्झट भरा सौदा है। उसमें दोनों पक्षों के हाथ केवल बर्बादी ही लगती है। पुरुष कोल्हू के बैल की तरह पिसता और स्त्री प्रजनन के कुचक्र में अपनी तन्दुरुस्ती, मनस्विता प्रतिभा ही नहीं, कई बार तो जिन्दगी ही असमय में खो बैठती है। बालकों का लालन-पालन और उनके दोष दुर्गुणों से उत्पन्न परिणाम इतना कठिन पड़ता है कि विवाह के असली उद्देश्य से अपरिचित लोगों को इस मार्ग में केवल शोक-सन्ताप ही हाथ लगता है।

विवाह एक आध्यात्मिक साधना है। विवाह एक प्रेम वल्लरी का आत्मोत्सर्ग की उच्च भावनाओं द्वारा किया जाने वाला अभिसिंचन है। यह सज्जनों और शूरवीरों का काम है। कामी, दुष्ट, छली और विश्वासघाती लोग विवाह की पवित्र संस्था को बदनाम करने से दूर रहें और एकाकी जीवन जियें यही अच्छा है। जिनका विवाह हो चुका है या जिन्हें करना है उन्हें हजार बार सोच लेना चाहिये कि साथी के ऊपर समता सद्भावना एवम् आत्मीयता हमें उड़ेलनी है। उसकी प्रवृत्ति, मित्रता को निबाहना है। अभीष्ट अनुकूलता उत्पन्न न भी हो सके तो सहिष्णुता अपनाकर दर गुजर करनी है। दूसरी ओर से समुचित प्रत्युत्तर न मिले तो अपनी ओर से आजीवन ऐसा व्यवहार करते रहना जिससे विवाह साधना के पुनीत आदर्श को कलंकित होने का अवसर न मिले।

इस दिशा में पति का कर्त्तव्य चौगुना सौगुना है। क्योंकि परिस्थितियों ने आज उसे अधिक सार्थकता एवं सुविधा प्रदान की है। रंग-रूप की बात मस्तिष्क से निकाल देना चाहिये। चमड़ी के आकर्षण खिचाव विशुद्ध रूप से व्यभिचार है तो भले ही वह अविवाहित हो या विवाहित जीवन में कभी न अपनाया जाय। गुणों के आकर्षण पर रीझना चाहिये। विवाह करने से पूर्व साथी के बारे में हजार बार विचार करें पर यदि उसे अपना लिया तो हजार दोष दुर्गुण रहते हुए भी उसे छाती से बाँधकर रखना चाहिये और अपनी ओर से कर्त्तव्य पालन के अन्तिम छोर तक जाना चाहिये। भारतीय धर्म में देव-साक्षी देकर दूसरे का हाथ इस शर्त पर पकड़ा जाता है कि वह अयोग्य, असमर्थ रुग्ण अथवा दुर्गुणी हो तो भी उसे परिपूर्ण निष्ठा के साथ निबाहा जायगा। विवाह पूर्व के चारित्रिक दोषों के बारे में सोच विचार करना निरर्थक है। जिस दिन से अपना विवाह हुआ उसी दिन से पतिव्रत और पत्नीव्रत आरम्भ हो जाता है। उदारता और क्षमा का जितना अधिक प्रयोग परस्पर किया जा सके उतनी ही गृहस्थ जीवन की सफलता सम्भव हो सकेगी।

ईश्वर करे अपने समाज के हर गृहस्थ में दाम्पत्य जीवन को एक पवित्र आध्यात्मिक साधना मानने और उसे निबाहने के लिये त्याग और उदारता का बढ़ा-चढ़ा परिचय देने की प्रवृत्ति पैदा हो, तभी हमारे पारिवारिक तथा सामाजिक जीवन में स्वर्गीय परिस्थितियों का अवतरण होगा।

 'दाम्पत्य जीवन-आध्यात्मिक योग साधना' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पतिव्रत ही नहीं पत्नीव्रत भी निभाया जाय

क्र० ३८

विवाह का अर्थ काम सेवन की सुविधा, रोटी बनाने, घर रखाने की व्यवस्था अथवा एक कमाऊ सहयोगी मिल जाना नहीं, वरन् दो आत्माओं का एकीकरण है। प्रेम मानव तत्त्व की सबसे उत्कृष्ट विभूति है। आनन्द और उल्लास का सारा आधार उसी पर अवलम्बित है। प्रेम का उभयपक्षीय परिपोषण और निरन्तर अभिवर्धन आध्यात्मिक प्रगति की एक महत्तम साधना है। इस साधना के दो पूरक पात्रों की तरह पति-पत्नी विवाह सम्बन्ध से बँधते हैं और प्रतिज्ञा करते हैं कि वे दोनों परस्पर आजीवन बफादारी, आत्मीयता, सेवा-सम्मान, उदारता, सहयोग सद्भावना की दृष्टि से एक दूसरे को अपना आराध्य मानकर गृहस्थ की नाव को खेते हुए जीवन-सागर के अन्तिम छोर तक पहुँचेंगे।

इसी आदर्श को निवाहने के ऊपर दाम्पत्य-जीवन एवं गृहस्थ-निर्माण की प्रयोजन पूर्ति सम्भव है। विवाह से तरुण वय की एक उमंग वासना का भी नियन्त्रण हो जाता है। छत पर परनाला लगा होने से वर्षा का पानी इकट्ठा होकर एक ही मार्ग से निकल जाता है अन्यथा उसके किधर भी फैलने और गिरने का डर रहता है। यों विवाह का उद्देश्य एक दूसरे के आध्यात्मिक स्तर को उठाकर बौद्धिक विकास एवं सांसारिक जीवन को सुविधापूर्ण बनाना है और उसमें आध्यात्मिक संयम नितान्त आवश्यक है। फिर यदि दोनों पक्ष अपने मनोविकारों को नियंत्रित न रख सकें और परिवार बढ़ाने की योग्यता से सुसम्पन्न हों तो कामसेवन की भी एक मर्यादित गुंजायश है। पर यह मानकर ही चलना चाहिये कि विवाह जैसा पवित्र प्रयोजन केवल वासना के लिये ही सम्पन्न नहीं किया जाता। यदि ऐसा ही होता तो पशुओं की तरह वह घृणित प्रयोजन पूर्ण होते ही पति-पत्नी एक दूसरे को भूल जाते और उपेक्षा करने लगते। वेश्यावृत्ति और व्यभिचार में गृहस्थ की मर्यादित वासना की अपेक्षा आकर्षण बहुत अधिक होता है पर कोई उद्देश्य न होने से उन लोगों में कोई किसी के प्रति बफादार नहीं रहता।

गृहस्थ जीवन की मूल शांति साथी के प्रति बफादारी है। सुख सुविधाओं में ही नहीं विपत्ति, रोग और असमर्थता में भी बफादारी अक्षुण्ण बनी रहे तो समझना चाहिये कि विवाह करने वालों ने उसका आदर्श समझ लिया। सच्चे साथी की हर किसी को प्यास है। इस सम्बन्ध में गहरी निश्चिन्तता मिल जाने पर मनुष्य को भारी सन्तोष और साहस मिलता है। बेजान चीजें एक होकर दो हो सकती हैं पर सजीव मनुष्य एक और एक मिलकर ग्यारह होते हैं। जिन गृहस्थ में पति-पत्नी को एक दूसरे पर अटूट विश्वास है, जिनको पारस्परिक बफादारी असंदिग्ध है, जिनके बीच दुराव का एक कण भी नहीं, जो सुख-दुःख में समान रूप से साझीदार रहते हैं, एक-एक पाई के आय व्यय की जानकारी जहाँ दोनों को रहती है, जो अपनी सुविधा की उपेक्षा करते हुए साथी की सुविधा को प्रधानता देते हैं, जो हँसने-हँसाने की उपयोगिता समझकर एक दूसरे के मन का भार हलका करते रहते हैं, उन्हें ही धन्य और सफल कहा जा सकता है। आनन्द ऐसे ही गृहस्थ का है। प्रगतिशील और समुन्नत जीवन में ऐसे दाम्पत्य जीवन का भारी योगदान रहता है। यदि विवाह करना हो तो ऐसा दाम्पत्य जीवन बनाने के लिये अपनी ओर से पूर्ण प्रयत्न करने और बड़े से बड़ा त्याग करने के लिये उद्यत होकर कदम बढ़ाना चाहिये। अन्यथा केवल कामसेवन की सुविधा के लिये विवाह करना वेश्यावृत्ति से भी गया गुजरा घृणित कर्म है। उसमें विश्वासघात नहीं है। उसका स्वरूप स्पष्ट है। पर विवाह के साथ जुड़े हुए आदर्शों की उपेक्षा कर केवल अपना निकृष्ट स्वार्थ सिद्ध करने के लिये साथी को असमंजस के दलदल में फँसा देना एक मित्रघात जैसी पैशाचिक धोकेबाजी है।

भारतीय दर्शन के अनुसार विवाह एक आत्म-समर्पण, उत्सर्ग, तथा आस्था परिपक्व करने की, घर में रह कर की जाने वाली योग साधना है। हमारा दाम्पत्य जीवन इसी स्तर का होना चाहिये। तभी उससे वफादारी,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मीयता,सेवा, संतोष एवं प्रगति के फल लगेंगे । सन्तान का सदगुणी होना पति-पत्नी की इसी मनःस्थिति पर निर्भर है । गङ्गा और यमुना मिलकर तीर्थराज बनता है । रात्रि और दिन का मिलन सन्ध्या-काल को पुनीत वेला विनिर्मित करता है । बिजली के दो तार मिलकर प्रवाह उत्पन्न करते हैं । दो सच्चे अर्थों में मिले हुये अन्तःकरण वाले पति-पत्नी ही सद्गुणी, समर्थ और सुविकसित सन्तान उत्पन्न कर सकते हैं । जिन जोड़ों के बीच अविश्वास, आशङ्का, रोष, घृणा, निराशा भरी होगी, उनका प्रभाव सन्तान पर अवश्य आवेगा और बच्चे शरीर, मन एवं स्वभाव की दृष्टि से अनेक दोष-दुर्गुण जन्म-जात संस्कार के रूप में लेकर जन्मेंगे और सारे परिवार के लिये एक समस्या बनकर रहेंगे ।

अविश्वास और अनुदार वातावरण के बीच विवाह करते हुए भी दोनों अपने को एकाकी समझते हैं और मन आशङ्का से भरा रहता है कि कभी भी विश्वासघात हो सकता है । किसी तरह गाड़ी लुढ़कती भी रहे तो वह एक लोक-लाज की रस्सी में बंधा हुआ बन्धन मात्र रह जाता है । उसमें न आनन्द रहता है, न उल्लास, सरसता रहती है और न सुनिश्चतता । ऐसे लाभों से रहित गृहस्थ एक कठिनाई से ढोया जाने वाला भार मात्र ही बना रहेगा ।

छोटे घर-घरानों को स्वर्ग का वातावरण करने की एक प्रयोगशाला बनाकर रखा जाना चाहिए । पतिव्रत धर्म एवं पत्नीव्रत धर्म के अन्तर्गत दोनों के ऊपर जिन कर्तव्यों का उत्तरदायित्व का भार आता है उसे अति उत्साह-पूर्वक वहन किया जाना चाहिये और प्रयत्न यह होना चाहिए कि साथी की तुलना में अपनी भूमिका अधिक ऊँची बनी रहे । भारतीय नारियों की पतिव्रत-साधना एक ऐतिहासिक तथा मनोवैज्ञानिक तथ्य है । उनमें से ९० प्रतिशत अपना भाग ईमानदारी से पूरा करती हैं । अशिक्षा, अनुभवहीनता एवं संकुचित वातावरण में आबद्ध रहने के कारण उनके कर्तव्य और व्यवहार में कुछ दोष रहने स्वाभाविक हैं । इन्हीं कारणों को निवारण करके बदला जा सकता है । पर उनकी ईमानदारी, वफादारी असन्दिग्ध है । यों १० प्रतिशत में पुरुषों के उत्पन्न किये मूल दोष भी हो सकते हैं, पर उनमें से अधिकांश की सज्जनता असन्दिग्ध है । पतिव्रत धर्म का एक बहुत बड़ा भाग अभी भी भारतीय नारी में कहीं भी--गई गुजरी स्थिति में भी--देखा जा सकता है ।

इस पुनीत क्षेत्र में आग लगाने और विकृतियाँ उत्पन्न करने का दोष अधिकतर पतियों का ही होता है । इसलिये आज की परिस्थिति में सबसे अधिक उपदेश, प्रशिक्षण और दबाव पतियों पर दिया जाना चाहिये कि भूले हुए पत्नीव्रत धर्म को पुनः याद करें और ज्येष्ठता के कारण, अपना अनुकरणीय आदर्श उपस्थित करके पत्नी को अनुगामिनी बनने का प्रकाश दें । स्त्रियों के लिये पतिव्रत धर्म ही स्वर्ग मोक्ष की साधना है, पति को परमेश्वर मानना चाहिए, उसके प्रति वफादारी, उदारता और सेवा भावना बरतनी चाहिये, इन उपदेशों को बहुत दिन से सुना जाता रहा है । महिला वर्ग ने उसका पालन इतनी खूबी के साथ किया है कि इस इतिहास से संसार चमत्कृत है । आज भी भारत के गये गुजरे गृहस्थ को देखकर पाश्चात्य सभ्यताभिमानी यही सोचते हैं कि आदर्श परिवार बसाने की प्रक्रिया भारत से सीखनी होगी । इस गौरव में नारी की ही भूमिका प्रधान है ।

जो आशायें हम पत्नी से करते हैं उसका प्रशिक्षण पति को अपने व्यवहार एवं सद्गुणोंसे करना चाहिए । कोई नहीं चाहता कि हमारी पत्नी दुराचारिणी, फिजूलखर्च, दुराव रखने वाली, असहिष्णु, आवेशग्रस्त, कटुभाषी जैसी दुर्गुणयुक्त हो । इसलिए उसका कर्तव्य है कि पत्नी के आगे इन्हीं अपनी विशेषताओं का ध्यान रखे । बीमारी, सन्तान न होने, मन्दबुद्धि अथवा व्यवहार ज्ञान की न्यूनता के कारण पत्नी को छोड़ देने, अपमानित करने अथवा सताने की बात सोचना भी पत्नीव्रत धर्म के महान आदर्श के प्रतिकूल है । शङ्करजी सर्पों को शरीर में लपेटे रहते थे । चन्दन वृक्ष पर भी साँप, बिच्छू लिपटे रहते हैं । एक सज्जन पति का भी कर्तव्य है कि पत्नी में इस प्रकार की कमियाँ हों तो भी अपनी ओर से कर्तव्य पालन में रत्ती भर भी न्यूनता न आने देकर स्नेह,सद्भावना,सेवा और उदारता का ही व्यवहार करे। पतिव्रत धर्म नारी समाज में बहुत कर जिन्दा है । अब पुरुष का काम है कि पत्नीव्रत की आदर्शवादिता को अपनाये और गृहस्थ जीवन की उत्कृष्टता से घर को स्वर्ग बनाये और संसार को एक महत्तम मार्गदर्शन प्रस्तुत करे ।

——— **—'पतिव्रत की महिमा, पत्नीव्रत की गरिमा' पुस्तिका से**

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संयुक्त परिवार प्रणाली एक श्रेयस्कर परम्परा

क्र० ३९

कुछ दिन पहले अनुभव हीनता के जोश और आवेश में यह प्रतिपादन शुरू किया गया था कि संयुक्त परिवार प्रणाली को तोड़ा जाय और उसके स्थान पर पति-पत्नी मात्र के छोटे परिवार बसाये जायें। जब तक बच्चे समर्थ न हों, तब तक माँ-बाप उनका संरक्षण करें और जैसे ही वे विवाह और आजीविका की दृष्टि से समर्थ हो जायें, वैसे ही उन्हें अलग परिवार बसाने के लिए स्वतंत्र कर दिया जाय। पाश्चात्य देशों में यह प्रयोग पिछले दिनों बड़े उत्साह के साथ हुआ है। योरोप, अमेरिका में अब संयुक्त कुटुम्ब-प्रथा जहाँ-तहाँ ही दीखती है। अधिकांश व्यक्ति अपना छोटा परिवार ही बसाते हैं। अपने देश में भी उसका अनुकरण सुशिक्षित वर्ग में धीरे-धीरे जोर पकड़ता जाता है। ज्यादा पढ़ी लिखी लड़कियाँ और नई रोशनी के लड़के सम्मिलित रहना नापसन्द करते हैं। वे घर वालों से अलग घर बसाने की चेष्टा करते हैं, ताकि सम्मिलित कुटुम्ब के बोझ, उत्तारदायित्व और नियन्त्रण से छुट्टी पाकर उन्हें अधिक सुविधा से दिन काटने का अवसर मिल जाय।

इस बढ़ती हुई अलगाव की प्रवृत्ति के बारे में हमें कई पहलुओं से उसके गुण-दोषों पर विचार करना होगा। प्रथम पाश्चात्य देशों, जहां से यह प्रवृत्ति आरम्भ हुई उनके सामने प्रस्तुत हुए प्रतिफलों को देखना पड़ेगा। आरम्भ में पति-पत्नी को, अधिक खर्च करने और कम काम करने की सुविधा जरूर मिल जाती है और नये लड़के इसमें अपना लाभ देखकर प्रसन्न होते हैं, पर कुछ ही दिनों में उन्हें अपनी भूल प्रतीत होने लगती है। पत्नी गर्भवती होती है, शरीर में कितने ही तरह के विकार उठ खड़े होते हैं, काम कम और आराम अधिक करने की इच्छा होती है,उस समय किसी सहायक की जरूरत पड़ती है पर एकाकी गृहस्थ में तो सब कुछ स्वय ही करना पड़ेगा। प्रसव काल में कष्ट बहुत होता है। उस समय भी गहरी सहानुभूति वाला कुटुम्बी आवश्यक लगता है। प्रसूति काल में लंघन के रोगी की तरह चार-पाई पकड़ लेनी पड़ती है और हर घड़ी सहायता की इच्छा रहती है। बच्चा एक पूरे गृहस्थ के बराबर काम लेकर आता है। हर घड़ी उसकी निगरानी, सफाई सेवा की जरूरत पड़ती है। अस्वस्थ होने पर वह रोता-चिल्लाता बहुत है। कई बार तो नींद हराम कर देता है। उसे संभालते हुए घर के दूसरे भोजन बनाने आदि का काम जो समय पर पूरा होना चाहते हैं—मुश्किल पड़ते हैं। बच्चे बढ़ते जाते, समस्यायें भी बढ़ती जाती हैं। संयुक्त कुटुम्ब में यह सब पता भी नहीं चलता। कोई कुछ कर जाता है, कोई कुछ संभाल लेता है। अकेली बेचारी स्त्री क्या-क्या करे। पति अपने ही गोरखधन्धे में लगे रहते हैं, सहायता करना तो दूर—अपनी ही फरमाइशें पूरी न होने और गृह व्यवस्था में कमी आने से उलटे झल्लाये रहने लगते हैं। उस समय नव वधू को समझ आती है कि सुविधा की दृष्टि से संयुक्त परिवार प्रथा ही अच्छी थी।

बीमारी, असमर्थता, दुर्घटना, लड़ाई-झगड़ा आदि अवसरों पर संयुक्त कुटुम्ब का लाभ प्रतीत होता है, जब एक की विपत्ति में दूसरे सब उठ खड़े होते हैं और अपने-अपने ढङ्ग से सहायता करके बोझ हलका करते हैं। विवाह-शादियों में एक बारगी बहुत खर्च करना पड़ता है।एक व्यक्ति के लिए उतनी बचत कठिन पड़ती है पर कुटुम्ब की मिली-जुली पूँजी और आर्थिक स्थिति में वह पहिया भी लुढ़कता रहता है और खर्चीली शादियाँ भी उसी ढर्रे में होती चली जाती हैं। विधवा को आर्थिक संकट और विधुरों को गृह व्यवस्था की कठिनाई नहीं पड़ती, वे भी उसी खाँचे में समा जाते हैं और निर्वाह क्रम किसी प्रकार चलता ही रहता है। परित्यक्तायें और पति विमुक्त महिलायें अपने बच्चों समेत मैके चली जाती हैं और उस परिवार का भी गुजारा उसी शृङ्खला में बँधकर होने लगता है। ऐसी महिलायें एकाकी अपना भार स्वयं नहीं उठा पातीं और यदि एकाकी भाई है तो इतना बोझ उठाना उसके लिये भी कठिन पड़ता है। संयुक्त परिवार प्रणाली ही है, जिसमें अयोग्य, असमर्थ, पागल, दुर्गुणी भी खप जाते हैं। एकाकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org
होते तो उन्हें भीख मिलना जीवित रहना भी कठिन पड़ता ।

संयुक्त परिवार प्रथा में सब सदस्यों का उपार्जन एक जगह इकट्ठा होता है और उस सम्मिलित पूंजीमें बड़े व्यवसाय आसानी से आरम्भ हो जाते हैं । नौकर मंहगे पड़ते हैं, ईमानदार भी नहीं होते, दिन-रात जुटे भी नहीं रहते, अधिक लाभ में उनकी दिलचस्पी भी नहीं होती, इसलिये नौकरों की अपेक्षा घर के आदमी सदा अधिक लाभ-दायक सिद्ध होते हैं । घर की पूंजी और घर का श्रम जुट जाय तो किसी भी व्यवसाय में लाभ होगा । किसान के लिये तो यह जीवन मरण का प्रश्न है । उसके पास घर, खेत और पशुओं के इतने अधिक काम रहते हैं कि उनमें छोटे बच्चे और बूढ़े असमर्थ भी बहुत सहायता कर सकते हैं । सबके मिले हुए श्रम से ही कृषि और पशु पालन लाभदायक रहता है अन्यथा नौकर रखकर मामूली किसान रोटी भी नहीं पा सकता ।

वृद्धावस्था का जीवन शान और शान्ति से संयुक्त कुटुम्ब में ही सम्भव है । जरा जीर्ण शरीर जब अपना बोझ आप नहीं ढो पाता और रुग्णता साथी बन जाती है, तब कुटुम्बियों की सेवा, सहायता अपेक्षित रहती है । अपनी निज की कमाई या बचत न होने पर आवश्यक खर्च भी बेटे-पोते ही उठाते हैं । हारी-बीमारी में उन्हीं की सहायता मिलती है । शारीरिक और मानसिक दृष्टि से दुर्बल बने व्यक्ति की आमतौर से उपेक्षा ही होती है पर संयुक्त परिवार में मान, इज्जत ज्यों की त्यों बनी रहती है वरन और अधिक बढ़ जाती है । बिना पूछे कोई बड़ा काम नहीं होता इससे वृद्ध का गर्व-गौरव एवं सम्मान भी अक्षुण्ण बना रहता है ।

अपने गरीब और कृषि प्रधान देश के लिये संयुक्त परिवार प्रणाली एक वरदान है । उसके अनेक लाभ हैं । आध्यात्मिक और भावनात्मक विकास की दृष्टि से भी उसका महत्व है । पिता-माता की सेवा, भाई-बहिनों की सहायता, कुटुम्बियों की समस्यायें अपनी समझने और उन्हें सुलझाने में संलग्न रहकर व्यक्ति अपनी स्वार्थपरता को घटाता और उदारता को बढ़ाता ही है । जिसकी ममता का दायरा जितना बड़ा है,उसे उतना ही श्रेष्ठ कहा जायगा । स्वार्थ को शरीर से बढ़ाकर कुटुम्बियों तक विस्तृत करना–'वसुधैव कुटुम्बकम्' की महानता अपनाने का एक प्रारम्भिक ही सही पर महत्वपूर्ण कदम है । अपनी देह और बीबी तक की बात सोचने वाला व्यक्ति कृपण ही कहा जायगा और उसे चढ़ती उम्र में कुछ सुविधायें पा लेने के अतिरिक्त शेष जीवन में इस सङ्कीर्णता का दण्ड ही भोगना पड़ेगा ।

आज संयुक्त कुटुम्ब इसलिए अनुपयोगी और मनोमालिन्य के केन्द्र बनते और बिखरते चले जाते हैं कि उनमें कर्तव्यों और अधिकारों का विभाजन ठीक तरह नहीं हो पाता । कुछ लोग बड़प्पन के नाम पर मौज करते हैं, कुछ को छोटे पद के कारण कोल्हू के बैल की तरह पिसना पड़ता है । जिनके हाथ में पूंजी या सत्ता है, वे मनमाना उपयोग करते हैं और शेष को जरा-जरा सी बात के लिये मुख ताकना और विवश रहना पड़ता है । परस्पर सौजन्य, शिष्टाचार, स्नेह, सद्भाव, सम्मान और सहयोग की भावनायें कम पड़ने से भी असंतोष, रोष और मनोमालिन्य रहने लगता है । इन कारणों को दूर करने के लिये परिवार के हर सदस्य का प्रशिक्षण किया जाना चाहिए । एक आचार संहिता रहनी चाहिये, जिसके आधार पर हर छोटे-बड़े को अपने कर्तव्यों का पूरा ध्यान हो और हर कोई अधिकार पाने की उपेक्षा करके कर्तव्य पालन के लिये अधिक तत्परता पूर्वक संलग्न रहे ।

परिवार को एक सहकारी समिति मानकर इस प्रकार गठित किया जाना चाहिये कि हर किसी को अपना कर्तव्य पालन करने के लिये स्वेच्छापूर्वक विवश होना पड़े । एक दूसरे के लिये असीम प्यार रखें और अपनी अपेक्षा अन्यों की सुविधा को प्राथमिकता देते रहें । आवेश और कटुता की, दुर्भाव और तिरस्कार की, आलस्य और अकर्मण्यता की, अहंकार और दबाव की क्षुद्रतायें यदि निरस्त की जा सकें तो बिखरते परिवारों को पुनः संयुक्त रहने के लिये सहमत किया जा सकता है । सुव्यवस्थित आचार संहिता पर निर्धारित हमारी संयुक्त परिवार प्रणाली अपने देश के लिये तो उपयोगी सिद्ध होगी ही साथ ही समस्त संसार की परम्परा को अपनाने के लिये आकर्षित करेगी ।

—'सौभाग्य का द्वार संयुक्त परिवार' पुस्तिका से

———

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सन्तान कितनी और क्यों पैदा करें

क्र० ४०

कोई समय था जब देश की जनसंख्या बहुत थोड़ी थी, विस्तृत वन भरे पड़े थे। पशु पालन और कृषि के लिए मनचाही जमीन उपलब्ध थी। तब अर्थ व्यवस्था और सुरक्षा के लिए परिवार के सदस्यों की संख्या बड़ी होना उपयोगी था। जङ्गली जानवरों और दस्युओं से निपटने में भी वे समर्थ रहते थे, जिनका परिवार बड़ा था। उन दिनों पुत्र का जन्म, सन्तान की वृद्धि एक दैवी कृपा मानी जाती थी।

इन दिनों देश की जनसंख्या खतरे के बिन्दु तक बढ़ गई है। हर मनुष्य के हिस्से में इतनी कम भूमि आती है, जिससे पर्याप्त अन्न उगाना और पशुओं के निर्वाह के लिये चारा प्राप्त करना, अति कठिन होता चला जाता है। अन्न उत्पादन के लिए सिर तोड़ परिश्रम करने पर भी विदेशों से कर्ज उधार तथा बदले में अति आवश्यक वस्तुयें देकर किसी प्रकार पेट पालना सम्भव होता है। अनाज की मँहगाई आकाश को छू रही है। दूध, घी देवताओं को दुर्लभ हो रहा है। चाय और डालडा से इन पदार्थों की स्मृति जिन्दा है। जिस क्रम से आबादी बढ़ रही है, उसे देखते हुये अगले दिनों अन्न की कमी, मंहगाई, दूध-घी की दुर्लभता बढ़ेगी। मनुष्यों के लिए ही जब निवास व अन्न कठिन हो जायगा तो बेचारे पशु कहाँ रहेंगे—कैसे जियेंगे ?

पचास वर्ष पूर्व और आज की परिस्थिति में इस जनसंख्या की वृद्धि ने जमीन, आसमान जितना अन्तर उत्पन्न कर दिया। यह क्रम, चक्र-वृद्धि क्रम से बढ़ रहा है। अस्तु अगले दिनों यह विपन्नता और भी अधिक बढ़ेगी। उद्योग-धन्धे, व्यापार, शिक्षा, सवारी आदि के साधन कितने भी बढ़ाये जायें—आबादी जिस तेजी से बढ़ रही है, उसे देखते हुए वे कम ही पड़ते चले जायेंगे और दरिद्रता से लेकर अव्यवस्था तक असंख्य समस्यायें बढ़ती और उलझती चली जायेंगी। निवास, बेरोजगारी, चिकित्सा की गुत्थियाँ अब भी पेचीदा हो रही हैं, अगले दिनों तो वे न सुलझने की स्थिति में जा पहुँचेंगी।

संतान की संख्या बढ़ाना आज की परिस्थिति में अपने व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन में विपत्तियों को सीधा आमन्त्रण देना है। मँहगाई और अपर्याप्त जीविका के कारण बच्चों के निवास, लेख-कूद के लिए स्थान कम मिलता है उन्हें पौष्टिक भोजन नहीं मिल पाता। मँहगी शिक्षा और चिकित्सा के कारण न उनको समय के अनुरूप ऊँची पढ़ाई की व्यवस्था बन पाती है और न चिकित्सा का समुचित प्रबन्ध होता है। ऐसी दशा में कौन आशा करेगा कि इन ढेरों बच्चों का समुचित विकास एवं पोषण एक औसत दर्जे का आदमी कर सकता है।उङ्गलियों पर गिने जाने वाले अमीरों की बात दूसरी है, सर्व साधारण के लिए तो यह भार जितना बढ़ेगा, उतना ही असह्य बनेगा। समय कम और बच्चे अधिक होने पर उनकी ओर समुचित ध्यान भी तो नहीं दिया जा सकता। उनका स्वभाव,संस्कार,स्वास्थ्य सुविकसित करने के लिए अभिभावकों को पूरा ध्यान देना, समय और श्रम लगाना तथा पर्याप्त खर्च करना चाहिये। पर यह अधिक बालकों में सम्भव नहीं। इसलिये वे बेचारे जङ्गली घास-फूँस की तरह बढ़ते—अपनी मौत मरते-जीते और संस्कारी, कुसंस्कारी बनते रहते हैं। ऐसे बालक सारे परिवार के लिए—समस्त समाज के लिये एक सिरदर्द ही रहते हैं। कुमार्गगामी या अस्वस्थ हो गए, तब तो उन्हें एक विपत्ति एवं अभिशाप ही कहा जायगा।

काम उतना ही हाथ में लेना चाहिए, जो ठीक तरह निवाहा जा सके। बच्चे उत्पन्न करना क्रीड़ा-विनोद मात्र नहीं है। उसके पीछे भारी उत्तरदायित्व लदे हैं। जो उसे ठीक तरह वहन कर सकने में समर्थ हैं, उन्हें ही यह बोझ उठाने का साहस करना चाहिए। अन्यथा बिना आगा-पीछा सोचे सन्तान बढ़ाते जाना, अपने लिए, बच्चों के लिये और समस्त समाज के लिए सङ्कट प्रस्तुत करने का अपराध ही माना जायगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सन्तान संख्या को बढ़ाना अपनी पत्नी के साथ प्रत्यक्ष अत्याचार है । बच्चे को नौ महीने पेट में रखना, उसका शरीर अपने रक्त-मांस से बनाना, प्रसव पीड़ा, दूध पिलाना और अधूरी नींद ले पाना माता के लिए एक असाधारण भार है । उसकी पूर्ति के लिये उसे बहुमूल्य पौष्टिक भोजन, विश्राम तथा कई तरह की सुविधायें चाहिये । ये न मिलें और एक के बाद, दूसरे बच्चे जल्दी-जल्दी पैदा होते चले जायें तो निश्चित रूप से उस माता का स्वास्थ्य बिगड़ जायेगा । अपने देश की तीन चौथाई स्त्रियों का स्वास्थ्य इसी कारण खराब है, उन्हें अनेक तरह के भीतरी रोग घेरे रहते हैं । जवानी दो चार वर्ष के भीतर चली जाती है और देखते-देखते बुढ़ापा आ घेरता है । प्रसव काल में अगणित स्त्रियां मरती हैं । दुर्बल शरीरों के लिये यह भार आखिर क्या परिणाम उत्पन्न कर सकता है ? यह स्पष्टतः एक हत्या-काण्डों की श्रंखला है । जो जिस वजन को उठाने में असमर्थ है उसके ऊपर लादते ही चले जायें तो आखिर बेचारे को मरना ही पड़ेगा । हम कहने भर को ही अपनी पत्नी से दिखावटी प्यार करते हैं, व्यवहार हमारा कसाई जैसा होता है । प्रजनन के भार से कराहती हुई—बेमौत मरती हुई—अनेक रोगों से ग्रस्त महिलाओं की अगणित आत्मायें अपने पतियों के नृशंस अत्याचारों की शिकार होती हैं । भले ही कोई इस तथ्य की उपेक्षा करे पर सचाई तो अन्ततः सचाई ही रहेगी । दुर्बल माताएं चिड़चिड़ी, दुर्गुणी और रुग्ण सन्तान ही उत्पन्न करेंगी । उससे किसी परिवार को प्रसन्नता अनुभव करने का नहीं, विपत्ति का ही मुख देखना पड़ेगा । अच्छा हो हम समझ से काम लें और प्रस्तुत परिस्थितियों को देखते हुए सन्तान की संख्या वृद्धि का संकट मोल लेने से पहले हजार बार उस जिम्मेदारी के सम्बन्ध में विचार करें । यदि अपनी पत्नी की शारीरिक, मानसिक और आर्थिक स्थिति इसके लिये हर दृष्टि से उपयुक्त है तो ही आगे बढ़ें । अन्यथा कदम रोक लेने में ही दूरदर्शिता है ।

अच्छा हो लड़के और लड़कियों के विवाह बड़ी आयु में किये जायें । अच्छा हो वानप्रस्थ की परम्परा फिर चले और चालीस वर्ष से अधिक आयु के व्यक्ति प्रजनन क्रिया से मुँह मोड़ लें । अच्छा हो जिनके बच्चे नहीं होते उनकी सब लोग मिल-जुलकर प्रशंसा करें और उनके सौभाग्य को सराहें । अच्छा हो पहला बच्चा देर से उत्पन्न करें और तीन बच्चों के बाद उस प्रक्रिया को बन्द कर दिया जाय । जिस तरह भी हो हमें जनसंख्या वृद्धि को निरुत्साहित ही करना चाहिये ।

आज की परिस्थिति में बच्चों को बढ़ाना सौभाग्य सूचक नहीं, दुर्भाग्य का प्रतीक बन गया है । प्राचीन काल में सन्तान की कामना और प्रार्थना की जाती हो, उनके जन्म का उत्सव मनाया जाता हो तो बात समझ में आती है, पर आज भी उसी तरह सोचना अनुपयुक्त है । एक रुपये के बीस-तीस सेर गेहूँ बिकने के दिनों की बात आज एक सेर भाव के गेहूँ के दिनों में ज्यों की त्यों लागू नहीं की जा सकती । तब सन्तानहीन अभागे कहे जाते थे । पर आज तो सच्चे अर्थों में वे ही भाग्यवान हैं । उन्हें देश-भक्त एवम् पुण्यात्मा कहा जा सकता है क्योंकि उन्होंने राष्ट्रीय संकट को बढ़ाने का पाप नहीं किया ।

अपना देश मूढ़ मान्यताओं के जंजालों में जकड़ा हुआ है । इसमें लोग पांच हजार वर्ष पुराने ढर्रे पर ही अभी भी सोचने के आदी हैं । विवाह होते ही सन्तान की शीघ्रता पड़ती है । जिसने बच्चा पैदा कर लिया, उसने किला जीत लिया, जो उससे बचा रहा वह अभागा और अभावग्रस्त समझा गया । असंख्य नर-नारी इसी मूढ़ विचार-धारा में प्रवाहित होकर सन्तान के अभाव में रोते, कलपते पाये जाते हैं । सन्तान न होने पर पति-पत्नी अधिक स्वस्थ रह सकते हैं । शिशु पालन से बचे हुये समय और धन को समाज सेवा की ज्ञान-यज्ञ जैसी अति महत्वपूर्ण आवश्यकताओं में व्यय कर सकते हैं और अपना लोक-परलोक हर दृष्टि से शानदार बना सकते हैं । बेटे से वंश चलने और पिण्ड मिलने वाली बात दिल्लगीबाजी जितना ही महत्व रखती है । पिण्ड अपने ही सत्कर्मों का मिलता है, बेटे का उसमें कोई हस्तक्षेप नहीं । वंश अपने यश का चलता है अन्यथा ३-४ पीढ़ी के बाद तो अपने ही अंश-वंश के लोग नाम भूल जाते हैं, फिर आगे उसके चलने की क्या आशा है ।

हम आज की परिस्थितियों को समझें और सन्तान उत्पादन का उत्तरदायित्व तभी वहन करें जब उसकी योग्यता एवं क्षमता अपने में हो ऐसी दशा में भी संख्या न्यूनतम ही रखना उचित है । ———

 —'संतान की संख्या न बढ़ाइए' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुसंस्कृत संतान के लिए पूर्व तैयारी आवश्यक

क्र० ४१

—०—

संतानोत्पादन एक शारीरिक मनोरंजन या इन्द्रियलिप्सा का परिणित नहीं वरन् एक महान् उत्तरदायित्व है जिसके दूरगामी परिणाम होते हैं। बच्चा माँ के पेट में जिस दिन से आता है उसी दिन से अपने पिण्ड की अभिवृद्धि के लिए माता के शरीर से खुराक माँगता है। नौ महीने पेट में रहकर वह अपना रक्तमाँस अस्थि आदि से सम्पन्न कलेवर धीरे धीरे बनाता है, यह सारी खुराक माँ के शरीर में से ही निकल कर आती है। देखना होगा कि जननी के शरीर में इतना रक्त मांस है कि नहीं कि जिसके बल पर वह अपना ढाँचा खड़ा कर सके और नये शिशु की खुराक सँजो सके। इतना ही नहीं अति कष्ट दायक प्रसव पीड़ा गर्भावस्था के दिनों में भूख न लगने, उलटी आने, अपच रहने, सिर दर्द, नींद न आने सरीखे शारीरिक दबावों को सहन कर सकती है या नहीं यह देखना आवश्यक है। शिशु जन्मते ही अपना आहार माता के दूध से प्राप्त करता है। यह दूध और कुछ नहीं जननी के रक्त का ही प्रकारान्तर है फिर पालन पोषण में दिल दत्तचित्त रहने, नींद पूरी न कर पाने तथा दूसरी कठिनाइयों को सहने का बोझ माता पर ही पड़ता है। यदि उसका शरीर, स्वास्थ्य इस योग्य है तो ही उसे प्रजनन के लिये कदम बढ़ाना चाहिये। शिशु जन्म से पूर्व जननी बनने की इच्छुक माता का शारीरिक स्वास्थ्य उपरोक्त भार वहन कर सकने में समर्थ है या नहीं, यह देख कर ही किसी महिला के कंधे पर यह बोझ डाला जाना चाहिये।

पिता के ऊपर शिशु जन्म के साथ अनेक उत्तरदायित्व आते हैं। प्रजनन के साथ पत्नी के स्वास्थ्य को पहुँचने वाली क्षति की पूर्ति करने योग्य आहार-विहार की व्यवस्था, बच्चे को सुविकसित करने योग्य पौष्टिक आहार, वस्त्र, चिकित्सा, आदि का प्रबंध, उच्च शिक्षा का सुप्रबंध, विवाह शादी, आजीविका जैसे खर्चीले उत्तरदायित्व पिता के कंधे पर आते हैं। अपनी आर्थिक स्थिति कितने बच्चे का कितना बोझ उठा सकती है। इस पर हजार बार विचार किया जाना चाहिए। और जितने बालकों को सुविकसित बना सकने योग्य अपनी आय है उसी के अनुरूप सन्तानोत्पादन का साहस करना चाहिए। अपनी अर्थ क्षमता से अधिक सन्तानोत्पादन एक ऐसा निन्दनीय कार्य है जिसे बच्चों के साथ अत्याचार ही कहा जा सकता है। भूखे, नंगे, बीमार, अशिक्षित, कुसंस्कारी, अविकसित, अस्त-व्यस्त बच्चे, अपने स्वयं के लिये—माता पिता के लिये एक समस्या ही बनते हैं। वे समाज के लिये भी भार बनते हैं। अर्धविकसित और कुसंस्कारी बालक समाज में विकृतियाँ और विपत्तियाँ ही उत्पन्न कर सकते हैं। जिनका पाप उस अविवेकी माता-पिता पर पड़ता है जिन्होंने अपनी परिस्थितियों को तोले बिना सन्तानोत्पादन जैसे अति जिम्मेदारी के कार्य को ऐसे ही आरम्भ कर डाला।

पालन पोषण ही नहीं, बच्चों की एक महती आवश्यकता सुसंस्कारी बनाने की है। यह स्कूली शिक्षा से भी अधिक आवश्यक और महत्वपूर्ण है। बालक जब तक पूर्ण वयस्क नहीं हो जाता, शैशव और किशोर अवस्था से ही अपने परिवार के रहन-सहन और आचार विचारों से ही अपनी मनोभूमि, विचारणा और आदतें विनिर्मित करता रहता है। यदि अभिभावकों ने अपने को बुरी आदतों और कुसंस्कारों से निर्मित कर रखा है तो वे बुराइयाँ बच्चे की मनोभूमि में अनायास ही उतरती चली जायेंगी। उपदेशों का प्रभाव बड़ी आयु में पड़ता है। छोटा बच्चा तो समीपवर्ती गतिविधियों को ही हृदयंगम करता है और वैसा ही अनुकरण करने योग्य स्वभाव का निर्माण करता है। बालक देखने में ही ना समझ मालूम पड़ता है। वस्तुतः उसकी सूक्ष्म संवेदना शक्ति युवा व्यक्तियों से भी बहुत बढ़ी चढ़ी होती है और वह बिना कहे सुने ही जो हो रहा है सीखता रहता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभिभावक की शान्ति और प्रसन्नता उन्हीं बालकों को मिल सकती है जो सज्जन प्रकृति के, सन्मार्गगामी और सुव्यवस्थित हों। अन्यथा बड़े होने पर वे माँ बाप की सहायता करना तो दूर उन्हें तरह तरह से त्रास देते हैं। बड़े बच्चे अपने निमित्त घर की अधिकांश पूँजी खर्च करा लेते हैं। बाप इन्तजार देखता है कि वह कुछ कमाकर अपने छोटे भाई बहनों की सहायता करेगा पर वह कमाने योग्य होते ही बीबी को लेकर अलग हो जाते हैं। खोखलो आर्थिक स्थिति का दंड शेष छोटे बच्चों को सहना पड़ता है। कुसंस्कारी बच्चे माँ बाप से हमेशा खर्च ही कराते हैं, उन्हें सताते और अपमानित करते हैं तथा आये दिन ऐसी घटनायें उत्पन्न करते रहते हैं जिनसे अभिभावकों को समाज में अपने उन कपूतों की करतूतों पर लज्जा से सिर झुका कर चलना पड़े।

इन सब आपत्तियों से बचने के लिये सन्तानोत्पादन से पूर्व माता-पिता को बार-बार विचार करना चाहिये और यदि अपने को इस उत्तरदायित्व को वहन करने योग्य पायें तो प्रजनन से बहुत पूर्व अपने शारीरिक स्वास्थ्य,मानसिक धरातल एवं पारिवारिक वातावरण को उतना उत्कृष्ट बनाने में जुट जायँ कि जन्मने वाले बालक हर दृष्टि से परिष्कृत एवं सुसंस्कृत ही सिद्ध हों। गीली मिट्टी को जिस ठप्पे में दबाया जाता है उसी शकल के खिलौने में वह बदल जाती है। अभिभावक एक प्रकार के ठप्पे हैं उन्हीं की नकल प्रतिच्छवि बालक बनते चले जाते हैं। यदि बालकों को सुख शान्ति से जी सकने वाले और अपने संबंधियों को प्रसन्न सन्तुष्ट रख सकने वाले, सुसंस्कृत बनाने का मन हो तो उसका एक ही उपाय है कि माता-पिता अपने को पहले से ही वैसा बनाने और सारे परिवार को उसी ढांचे में ढालने के लिए प्राण-प्रण से चेष्टा करने लग जायं।

बिना तैयारी के कुसंस्कारी और अविकसित बालक उत्पन्न करना समाज और देश के साथ अपराध विश्वासघात करने के समान है। देश में गुजारे के लायक अन्न वस्त्र पैदा नहीं होता संसार भर के सामने पेट दिखाकर, गिड़गिड़ाकर हम अन्न पाते हैं। ऐसी दशा में और बच्चे बढ़ाते जाना देश की दरिद्रता एवं संकट बढ़ाना ही है। इस पर भी यदि वे अविकसित हैं तो भूखे मरेंगे,झगड़ेंगे और अपराध करेंगे। इससे राष्ट्र में अशान्ति एवं विपत्ति ही बढ़ेगी। उनकी गतिविधियाँ राष्ट्र की दुर्बलता ही बढ़ा सकती हैं। कुसंस्कारी नागरिकों से भरा हुआ देश समाज सामूहिक रूप से पतन के गर्त में ही गिरता चला जायगा।

प्रगति, पदार्थों या सुविधा साधनों की अभिवृद्धि को नहीं कहते वह तो प्रतिभाशाली उत्कृष्ट व्यक्तित्वों की संख्या बढ़ने पर निर्भर रहती है। कोई देश या समाज अपने सुयोग्य और सद्गुण सम्पन्न सुविकसित नागरिकों से ही बलवान्, समृद्ध और यशस्वी बनता है। व्यक्तिगत और समूहगत वर्चस्व सुयोग्य पीढ़ियों पर ही अवलम्बित है। इस प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए प्रजनन की जिम्मेदारी उठा सकने में समर्थ दम्पत्ति पहले अपने को शारीरिक, मानसिक,आर्थिक और सांस्कृतिक स्तर पर सुयोग्य बनाने में लग जायें और जब पूर्ण विश्वास हो जाय कि हम राष्ट्र को सुसंस्कृत एवं सुविकसित नये नागरिक दे सकने में सफल हो सकते हैं तभी उन्हें सन्तानोत्पादन का महान उत्तरदायित्व कंधे पर लेने का साहस करना चाहिये।

'परिवार को सुसंस्कृत बनायें' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बालकों को जन्म ही न दें—उनका निर्माण भी करें

क्र० ४२

बालक अपने साथ हमारे लिए अनेक कर्तव्य और उत्तरदायित्व भी लेकर आते हैं और उन्हें पालन करना अभिभावकों के लिए आवश्यक होता है। बच्चे को शरीर रक्षा के लिए उसके भोजन, वस्त्र, सफाई, चिकित्सा, विश्रान्ति आदि का प्रबन्ध करना होता है। बड़े होने पर उनकी शिक्षा, शादी, आजीविका आदि आवश्यकतायें पूरी करने के साधन भी जुटाने होते हैं। इतना ध्यान आमतौर से अभिभावकों को रखना होता है और वे अपने-अपने ढङ्ग से उसकी पूर्ति भी करते हैं।

किन्तु बात यहीं तक समाप्त नहीं हो जाती। इससे भी आगे के कर्तव्य और उत्तरदायित्व अभिभावकों के हैं जिनके न समझने एवं न निवाहने से बच्चे अनेक दुर्गुणों से घिर जाते हैं और अपने लिए—परिवार के लिए—समाज के लिए एक अभिशाप सिद्ध होते हैं। (दुर्गुणों से बचाना और सद्गुणों से अभ्यस्त कराना भी अभिभावकों का कर्त्तव्य है, यह बात भुला नहीं दी जानी चाहिये।)

बच्चा कुछ जन्म जात भले-बुरे संस्कार लेकर अवश्य आता है पर उनका विकसित अथवा नष्ट होना बहुत कुछ परिस्थितियों पर निर्भर रहता है। अभिभावकों की मनोभूमि और घर की परिस्थितियों पर प्रायः बच्चों का मानसिक विकास निर्भर रहता है। कुछ विरले ही बालक ऐसे अपवाद देखे जाते हैं जो परिवार की परिस्थितियों से भिन्न प्रकारका व्यक्तित्व निर्माण कर सके हों। व्यवसाय तो बदलते रहते हैं, गरीबी अमीरी और रंग-रूप भी बदल जाते हैं पर स्वभाव और संस्कार प्रायः आजीवन वैसे ही बने रहते हैं जैसे बचपन में उपलब्ध हुए थे। इसलिये यदि अपने बच्चों को दुर्गुणों से बचाना हो और सद्गुणी बनाना हो तो उनके जन्म से पूर्व ही वह तैयारी करनी चाहिए कि उन्हें सुसंस्कृत वातावरण मिले जिसमें पलकर वे सज्जन, सुसंस्कृत एवं सद्गुणी बन सकें।

यह एक रहस्यमय तथ्य है कि बालक गर्भ में आने के दिन से ही सीखना आरम्भ करता है और पाँच वर्ष का होने तक अपनी मनोभूमि के निर्माण का कार्य तीन चौथाई पूरा कर लेता है। इस अवधि में बालक बहुत सम्वेदनशील रहता है। किशोर एवम् युवा होने पर स्कूली पढ़ाई, व्यवसायिक ज्ञान, कला—कौशल, लोक-व्यवहार, खेल-कूद आदि की शिक्षा प्राप्त की जाती है, क्योंकि इन कार्यों के उपयुक्त मस्तिष्कीय विकास बड़ी आयु में ही होता है। किन्तु स्वभाव, संस्कार, चरित्र, आस्थायें जिस आयु में सीखी जाती हैं वह गर्भ में प्रवेश करने वाले दिन से लेकर पाँच वर्ष तक ही है। उस अवधि में अचेतन मस्तिष्क बहुत संवेदनशील रहता है और निकटवर्ती वातावरण से जो कुछ सोचा या किया जाता है उसका बहुत ही स्पष्ट चित्र अपनी अन्तःभूमिका पर उतरता जाता है। यों यह प्रक्रिया जीवन भर चलती रहती है पर उसका बहुत बड़ा अंश शैशव काल में ही पूरा हो चुकता है। इसलिए अभिभावकों को यदि अपने बच्चे संस्कारवान और सद्गुणी बनाने हों तो वातावरण ऐसा बनाने पर पूरा ध्यान देना चाहिए जिससे उन्हें सुसंस्कृत बनने का उपयुक्त आधार मिल सके।

यह भली भांति समझ रखना चाहिए कि व्यक्ति की सुख-शान्ति के लिए स्वास्थ्य, शिक्षा, शादी, आजीविका आदि की आवश्यकता तो है पर काम इतने से ही नहीं चल सकता। (आदतें और अभिलाषायें यदि घटिया किस्म की हैं तो व्यक्ति का दृष्टिकोण, स्वभाव एवं व्यवहार ओछे स्तर का होगा, फलस्वरूप वह स्वयं विक्षुब्ध रहेगा, परिवार वालों को अपने व्यवहार से दुःखी करेगा और समाज के लिये ऐसी विकृतियाँ उत्पन्न करेगा जिनसे क्लेश और द्वेष भरी दुष्प्रवृत्तियों की एक लम्बी श्रृंखला चल पड़े।

यदि हम अपने बालकों को समुचित प्यार करते हों और वस्तुतः उनका भविष्य उज्वल देखना चाहते हों तो उचित यही है कि उनको संस्कारवान बनाने की तैयारी में जुट जाँय। सन्तानोत्पादन की क्रिया आरम्भ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करने से पूर्व ही पति-पत्नी को अपने दोष-दुर्गुणों का परिष्कार करना चाहिये और सुसंस्कृति एवं सम्भ्रान्त सज्जनों को तरह आचरण, व्यवहार एवं सम्भाषण की समस्त गतविधियाँ सुधार लेनी चाहिये। बीच में जो प्रकृति होगी वही पौधे में आवेगी। मक्का से मक्का उगेगी और गेहूँ से गेहूँ। बाप का बीज और माता की जमीन दोनों का ही समान महत्व है सन्तानरूपी उपवन के निर्माण में। इसलिये जो केवल नर आकृति के ही नहीं मानव प्रकृति के बालक उत्पन्न करना चाहते हों उन्हें विवाह के बाद तुरन्त इस प्रयत्न में जुट जाना चाहिये कि अपने समस्त दोष-दुर्गुणों को जल्दी से जल्दी निकाल बाहर करें और प्रयत्नपूर्वक समस्त सद्गुणों को अपने आचरण में सम्मिलित कर लें। होनहार बालकों की उत्पत्ति का मूल आधार यहीं से प्रारम्भ होता है। गर्भावस्था में सुने हुए ज्ञान के आधार पर अभिमन्यु ने बड़े होकर चक्रव्यूह का वेधन किया था। अपने बालक भी माता के गर्भ में बैठे हुए बहुत कुछ सीखते समझते और ग्रहण करते रहते हैं। गर्भवती के आस-पास प्रसन्नता, उल्लास, सद्भावना, आदर्शवादिता एवं उत्कृष्टता का वातावरण बना रहना चाहिये। उसे क्रुद्ध, असन्तुष्ट, खिन्न एवं उद्विग्न रहने की स्थिति सहन न करनी पड़े इसका समुचित ध्यान रखा जाय।

शिशु जन्म के बाद माता-पिता को समस्त प्रकार की, घर की ऐसी परिस्थितियां बननी चाहिए जिससे अस्वच्छता, कुढ़न, मनोमालिन्य, उद्दण्डता एवं अनैतिकता के लिये कोई गुंजायश न हो। सब लोग ध्यान रखें कि— बहुत ही कुशल और सम्वेदनशील गुप्तचर की तरह नवजात बालक हमारे आचरण और व्यवहार से बहुत कुछ सीख रहा है। इन दिनों जो उसे सिखाया जाय उसी के आधार पर उसकी प्रकृति बनेगी और बड़े होने पर उसका भविष्य उसी प्रकार का विनिर्मित होगा। इस तथ्य को समझने वाले लोगों का यह एक अनिवार्य कर्तव्य हो जाता है कि अपने दुर्गुणों पर नियन्त्रण रखें और घर में सज्जनता की सौम्य परिस्थितियाँ बनाये रखने के लिये जो भी त्याग करना पड़े उसके लिए खुशी-खुशी तैयार हों। माता-पिता को परस्पर लड़ने-झगड़ने से पूरी तरह बचना चाहिये और काम-क्रीड़ा पर अधिक से अधिक नियन्त्रण रखना चाहिये ताकि बच्चों के विकार कुसमय ही झगड़ने का दुष्परिणाम सामने न आये।

बच्चे स्कूल कालेज में तो केवल भाषा, गणित, इतिहास, भूगोल आदि पढ़ते हैं। अब वहाँ प्राचीन काल के स्कूलों जैसा वातावरण कहाँ है जहां बालक सुसंस्कार भी प्राप्त करें। बच्चे का शिक्षण उपदेशों पर नहीं अनुकरण पर निर्भर है। उनका अविकसित मस्तिष्क लम्बे चौड़े उपदेशों या कठोर निर्देशों के समझने में असमर्थ रहता है पर जो कुछ हो रहा है उसे समझने और अपनाने में उसका अन्तःकरण पूर्ण समर्थ होता है इसलिये उन्हें जो कुछ सिखाया जाना हो उसका प्रत्यक्ष रूप सामने प्रस्तुत करना चाहिये। आज के स्कूल, अध्यापक बच्चों को एक बहुत छोटी सीमा तक ही सुधार सकते हैं। क्योंकि वहाँ न वातावरण है न चरित्र। बालकों के स्वभाव एवं चरित्र का निर्माण तो घर की पाठशाला से ही सम्भव है। इसलिये प्रयत्नपूर्वक यह चेष्टा की जानी चाहिये कि घर का वातावरण बहुत ही निर्मल, शान्तिमय, सदाचारी एवं सज्जनतापूर्ण हो। घर के सब लोग परस्पर मधुर सम्भाषण करें— प्रेमपूर्वक रहें और एक दूसरे की भरपूर सहायता करने को उदारतापूर्वक तत्पर रहें तो बिना किसी प्रशिक्षण, उपदेश के ही बालक उन सद्गुणों को ग्रहण करते चले जायेंगे और बड़े होने पर वैसे ही बनेंगे जैसा कि उन्हें बचपन में अभिभावकों द्वारा सिखाया एवं बनाया गया था।

बच्चे उत्पन्न करना व्यक्तिगत क्रीड़ा-विनोद का विषय नहीं है। एक नये व्यक्ति के जन्म एवं उसके व्यक्तित्व को निर्मित करने का यह महान् उत्तरदायित्व है। यदि हम इस कर्तव्य को भूलते हैं तो स्वयं उद्विग्न रहने वाले, परिवार को दुःखी करने वाले और समाज में दुष्प्रवृत्तियाँ बढ़ाने वाले राक्षसों को उत्पन्न करेंगे और अपने पाप से अपने और सबके लिये नरक का सृजन करेंगे। उचित यही है कि यदि बालक उत्पन्न करने का साहस करते हैं तो उन्हें सुसंस्कृत बनाने का वातावरण भी उत्पन्न करें। तभी विवाह प्रजनन की सार्थकता है।

'बच्चों का निर्माण घर की पाठशाला में' पुस्तिका से

———

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सन्तान को स्वावलम्बी भर बनाना ही पर्याप्त है

क्र० ४३

मनुष्य यदि सन्तान उत्पन्न करता है तो स्वभावतः उसकी यह जिम्मेदारी भी होती है कि उनके पालन-पोषण, शिक्षा-दीक्षा, विवाह एवं आजीविका की व्यवस्था जुटाने का भी प्रबन्ध करे। सृष्टि के सभी जीवों में यह प्रचलन है कि सन्तान जब तक अपने पैरों पर खड़ा होकर अपना निर्वाह स्वयं न करने लगे तब तक उसकी सहायता करते हैं। मनुष्य के लिए यह उचित है कि बालकपन और किशोर अवस्था में बच्चों के भरण-पोषण की---भोजन वस्त्र की---शिक्षा, चिकित्सा की व्यवस्था करे और उन्हें शारीरिक, मानसिक दृष्टि से इस योग्य बनायें कि वे भावी जीवन में स्वावलम्बी जीवनयापन कर सकें। पौष्टिक आहार, उचित शिक्षा, सरल मनोरंजन, सही संगति के साधन जुटाना अभिभावकों का काम है और यह भी उन्हीं की जिम्मेदारी है कि उनके गुण-कर्म-स्वभाव को सुसंस्कृत बनाने के लिए ऐसा वातावरण एवं साधन उपस्थित करें जिसमें उन्हें सभ्य, सुसंस्कारी एवं सज्जन बनने की दिशा मिल जाय। यदि कोई अभिभावक इन कर्तव्यों को पूरा नहीं करता है तो उसे कर्तव्य पालनमें प्रमाद करने का दोषी कहा जायगा। लाड़-प्यार के आवेश में यदि बच्चों को आलसी, विलासी, चटोरा, अहंकारी, उद्दण्ड एवं दुर्गुणी बनाया गया है तो भी उन अहितकर और अनावश्यक लाड़ दिखाने वाले अभिभावकों को बच्चों के साथ अन्याय करने वाला ही कहा जायगा। जन्म देने के बाद निस्संदेह बालकों को सुशिक्षित बनाने के लिए किशोरावस्था के अन्त और यौवन के प्रवेश तक आवश्यक साधन सुविधायें उत्पन्न करना हर माता-पिता और अभिभावक वर्ग के व्यक्ति का ऐसा कर्तव्य है जिसका पालन किया ही जाना चाहिये।

विदेशों में जहाँ शासकीय और सामाजिक व्यवस्था ठीक है वहाँ उतने से ही काम चल जाता है, पर अपने देश में वे दोनों ही व्यवस्थायें काफी गड़बड़ हैं, इसलिये यहाँ के अभिभावकों की दो और भी जिम्मेदारी बढ़ जाती हैं कि बच्चों को काम-धन्धे में लगायें और उन्हें उपार्जित कर सकने योग्य बनाने में सहायता प्रदान करें तथा उपर्युक्त साथी ढूँढ़कर उनके विवाह की व्यवस्था करें।

इतना सब कर चुकने के बाद माता-पिता का कर्त्तव्य पूरा हो जाता है। बच्चों को स्वावलम्बी बनाने के बाद उनको परामर्श देने और आवश्यक अनुशासन बनाये रखने का तो ध्यान रखना चाहिए पर साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिए मनुष्य जीवन जैसा बहुमूल्य अवसर बच्चे पैदा करने, उन्हें लाड़ करने और अन्ततः सब कुछ उन्हीं पर निछावर कर जाने के लिये नहीं मिला है। इसके अतिरिक्त भी उनके कुछ कर्त्तव्य हैं। और वे सन्तानोत्पन्न एवं परिपोषण से भी अधिक पवित्र एवं महत्वपूर्ण हैं। मनुष्य जीवन की स्थिरता एवं प्रगति समाज के सहयोग से ही सम्भव होती है इसलिये वह स्वभावतः समाज का ऋणी है और इस बात के लिए धर्म कर्त्तव्यों से बँधा हुआ है कि सामाजिक ऋण चुकाकर ही संसार से विदा हो। यह विशाल विश्व ही भगवान का विराट रूप है। जिस भगवान ने हमारे ऊपर असीम उपकार किये उसके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने का मार्ग समाज को सुविकसित, सुरभित एव सुगंधित बनाना ही है। इसलिये भारतीय धर्म की यह मर्यादा है कि ढलती आयु वानप्रस्थ के अनुरूप बिताते हुए अपनी बची-खुची शक्तियाँ लोक-मङ्गल के लिए अर्पित कर दें। आत्म-कल्याण और विश्व-कल्याण के लिए इसी रीति-नीति को अपनाया जाना और धर्म-कर्त्तव्य का पालन किया जाना आवश्यक है। इस देश में लाखों-करोड़ों वर्षों तक यही मर्यादा पालन की गई और यहाँ स्वर्गीय वातावरण बना रहा।

अब लोभ और मोह की दुष्प्रवृत्तियों ने अभिभावकों और सन्तान के सम्बन्धों को विकृत बनाकर सारा सामाजिक ढांचा ही लड़खड़ा दिया है। बच्चों के स्वावलम्बी हो जाने के बाद भी अभिभावक अपनी सङ्कीर्णता और मोहवृत्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org
के बन्धनों से बुरी तरह जकड़े रहते हैं और उस ढलती आयु में जिस पर विशुद्ध रूप से समाज का हक था, पोते-पोतियों को खिलाते रहने और घर-कुटुम्ब पर अनावश्यक मोह अधिकार दिखाकर एक अनावश्यक भार बने रहते हैं। इतना ही नहीं जो कुछ सन्तान के स्वावलम्बी बनाने के अतिरिक्त पूँजी बची थी उसे भी उन्हीं लोगों को दे जाते हैं, जब कि उस धन पर विशुद्ध रूप से समाज का हक है और वह उसी की उऋणता के लिए खर्च किया जाना चाहिए था।

सन्तान के प्रति इस क्षुद्रता और संकीर्णता भरे अनावश्यक मोह ने भारतीय समाज को भारी हानि पहुँचाई है। जो पैसा और समय समाज के उत्थान और सुख संवर्धन में खर्च होना चाहिए था यदि वह हराम की कमाई के रूप में स्वावलम्बी बच्चों को मिलता है तो उससे वे व्यसनी, आलसी, फिजूल खर्च और दुर्गुणी ही बनेंगे। आदमी उसी पैसे को ठीक और उचित तरीके से खर्च कर सकता है जो उसने कठिन परिश्रम के साथ पसीना बहाकर कमाया है। जो पैसा मुफ्त में मिलेगा उससे व्यक्ति की विलासिता ही नहीं दुर्बुद्धि भी बढ़ेगी। इसलिए जीवन भर ब्याज-भाड़े की कमाई खाने और चैन की वंशी बजाने की बात सोचकर जो लोग सन्तान के लिए ही अपनी कमाई उत्तराधिकार में छोड़ जाने की बात सोचते हैं वे सन्तान के साथ, अपनी आत्मा के साथ और समाज के साथ विशुद्ध रूप से एक अन्याय ही करते हैं और तीनों अदालतों में अपराधी सिद्ध होते हैं। यह एक बहुत ही भोंड़ा, फूहड़ और निकृष्ट सङ्कीर्णता भरा व्यामोह है कि अभिभावक स्वावलम्बी सन्तान को ही अपना श्रम, समय, मन, और धन ऐसे अर्पित करें मानो वे ही भगवान हों।

प्राचीन काल में सन्तान अभिभावकों के भरण-पोषण और शिक्षा-दीक्षा भर के ऋण को चुकाना ही बहुत भारी समझते थे अस्तु उनके उत्तराधिकार में छोड़े धन को अग्राह्य मानते थे। आमतौर से ऐसा पैसा वे वयोवृद्ध लोग अपने जीते ही दान-पुण्य में—सत्कर्मों में—खर्च कर जाते थे। मरने के बाद जो बच जाता था तो सन्तान उसे मृतक श्राद्ध में—स्वर्गीय आत्मा को पुण्य फल प्रदान करने वाले लोकोपयोगी कार्यों में लगा देते थे वे उसमें से एक पाई भी अपने लिए रखते नहीं थे। जो उन पर ऋण चढ़ा है वही क्या कम है जो अगले जन्म में गधा-घोड़ा बनकर इस मुफ्त के माल को एक अनावश्यक ऋण के रूप में सिर पर लादें।

आज की विचित्र स्थिति है। सन्तान से तरह-तरह के दुःख, तिरस्कार, उपेक्षा और प्रताड़ना सहते हुए भी निकृष्ट सङ्कीर्णता के व्यामोह में जकड़ा हुआ वयोवृद्ध न देश की, न धर्म की, न समाज की, न संस्कृति की आवश्यकता को समझता है, न आत्म-कल्याण, विश्व-कल्याण और ईश्वरीय निर्देशों को ध्यान में रखता है जो कुछ पास है उसे केवल सन्तान को ही देने की बात सोचता है। सन्तान नहीं होती तो किसी की सन्तान गोद रखता है। सर्प की तरह पूँजी पर सङ्कीर्णता की कुण्डली मारकर बैठा हुआ मूर्ख इतनी मोटी बात नहीं सोच पाता कि ढलती आयु के—स्वावलम्बी सन्तान से बचे हुए समय और पैसे का सदुपयोग किन्हीं उत्तम कार्यों के लिये किया जा सकता है या नहीं।

आचरण में घोर स्वार्थपरता, संकीर्णता और मोह-ममता का परिचय देने वाले—उदारता और लोक-मंगल की आवश्यकता देखने में विमुख इन वयोवृद्धों की धृष्टता तो देखिए कि लकड़ी की माला सटक कर और पत्थर के भगवान पर धूप-दीप संजोकर यह आशा करते हैं कि उन्हें आत्म-कल्याण और भगवान के प्यार का लाभ मिलेगा। इनकी प्रवंचना और मनोवांछा की संगति मिलाने पर कोई विचारशील इस बाल बुद्धि पर ठठाकर हँस ही सकता है।

काश, ढलती आयु के वयोवृद्धों में यह समझ आई होती कि सन्तान को स्वावलम्बी बनाने के बाद बचा हुआ समय और धन विशुद्ध रूप में विश्व-मानव का है और उसे लोक-मंगल में ही खर्च किया जाना चाहिए तो निस्संदेह आज देश और विश्व का रूप ही दूसरा होता। मरणोन्मुखी ढलती आयु के लोग वानप्रस्थ की परम्पराओं को त्यागकर सन्तान के व्यामोह में जिस बुरी तरह ग्रस्त दिखाई पड़ते हैं उससे यही निष्कर्ष निकलता है कि वे माला जपने का ढोंग बनाने पर भी अपने घृणित आवरण द्वारा अपना, समाज का और सन्तान का सर्वनाश ही कर रहे हैं। ईश्वर उन्हें सद्बुद्धि दे।

———

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर्दा प्रथा—नारी के साथ बरती जाने वाली एक नृशंस अनीति

क्र० ४४

नर और नारी मिलकर एक पूर्ण समाज बनाते हैं। वे दोनों पहिये मिलकर ही गाड़ी चलाते हैं इसी प्रकार गृहस्थ जीवन भी नर और नारी दोनों के समान प्रयत्न और पुरुषार्थ से प्रगतिशील बनता और सुखी रहता है। संसार के समस्त सभ्य और प्रगतिशील देशों में यही प्रतीत होता है। दो बैल जिस प्रकार कंधे से कंधा मिलाकर काम करते हैं उसी प्रकार नर और नारी एक जुट होकर अपनी योग्यता और सामर्थ्य के अनुरूप पूरा पुरुषार्थ करके परिवार को सुखी एवं समुन्नत बनाने के साधन जुटाते हैं। संसार की प्रगतिशीलता का यही रहस्य है।

अपने समाज की कुछ विचित्र स्थिति है। यहाँ नारी को घर की चहारदीवार के भीतर बन्द रहने वाले कैदी की तरह जीवन यापन करना पड़ता है। उसको घर से निकलना, अकेली कहीं जाना, दूसरों से बात करना निषिद्ध है। पर्दा प्रथा के कारण यहाँ स्त्रियों की स्थिति इतनी दयनीय है कि उनकी तुलना में पशु-पक्षी भी अच्छी स्थिति में पाये जा सकते हैं। गाय, भैंस, घोड़ी, बकरी आदि खुले मुँह रह सकती हैं, और मन्दी या जोर की आवाज में चाहे जब बोल सकती हैं। पर यह सुविधा भारतीय नारी को प्राप्त नहीं है। चिड़ियों के चहकने-फुदकने पर प्रतिबन्ध नहीं पर बेचारी भारतीय नारी के भाग्य में उतनी भी स्वतंत्रता बदी नहीं है। उन्हें खूनी कैदी की तरह हर घड़ी प्रतिबंधों से जकड़ी हुई एक छोटी कोठरी में आजीवन इस तरह रहना पड़ता है जहाँ अनुभव स्वतन्त्रता की हवा भी नहीं पहुँचने पाती। इस बन्धन में वे अपनी आत्मिक और भौतिक सभी प्रतिभायें खोकर पराधीन, परावलम्बी, असहाय और कातर किसी निरीह प्राणी की स्थिति में पहुँच जाती हैं।

पर्दा प्रथा सर्वथा अभारतीय है। इसका प्रचलन अरब के उस रेगिस्तान प्रदेश में हुआ जहाँ दिन-रात रेतीले अन्धड़ चलते थे और गोदी के बच्चों की आंखों में रेत घुस जाने का हर घड़ी डर रहता था, स्त्रियां अपना और बच्चों का मुँह ढके रहती थीं। पीछे जब सामन्ती लूट-मार में युवा महिला लूटी और गुलाम बनाई जाने लगीं तो उसके आकर्षण को लेकर होने वाले पारस्परिक झगड़ों को देखते हुए ऐसा प्रबन्ध किया गया कि हरम में रहने वाली बेगमें और रखैलें मुँह पर पर्दा डालकर रहे ताकि उन्हें झंझट के लिये कोई दूसरा सामंत झंझट खड़ा न करावें। भारत में जब मुसलमान आये तो वही सब उनके प्रभाव से प्रभावित लोगों ने सीखा। यहाँ भी बहु विवाह और सैकड़ों रखैलें रखने की सामंती प्रथा पनपी और चंगुल में फँसी महिलाओं को हाथ से न जाने देने के लिए इधर भी पर्दा प्रथा का प्रचलन हो गया। बहुतों ने उस अन्धेर के दिनों में पर्दा प्रथा में अपना बचाव और भला समझा और स्वेच्छा से उसे अपना लिया, आततायी शासक और उनके गुमास्ते खूनी भेड़िये की तरह सुन्दर बहू-बेटियों के लिये घात लगाये फिरते थे ऐसे विपत्ति काल में यही अच्छा समझा गया कि पर्दा अपना कर किसी प्रकार अपनी आबरू बचाई जाय।

अब वे परिस्थितियाँ नहीं रहीं। न कभी पहले थीं। ग्रहण के समय चन्द्रमा पर अशुभ छाया पड़ती है उसे सदा बने रहना आवश्यक नहीं। भारतीय संस्कृति में पर्दे का कभी कोई प्रचलन नहीं रहा। यहाँ के देवता और देवियों के मुख पर कोई ऐसी कालिख पुती नहीं होती थी जिससे उन्हें अपना कलङ्की चेहरा ढके रहने की जरूरत पड़े। बीच में आपत्ति काल में इसकी विवशता प्रस्तुत की होगी पर अब वह भी कोई बात नहीं जिसके कारण हमें अपने आधे समाज को—नारी को पंगु प्रतिबन्धित बनाकर असहाय की तरह भारभूत बनाये रखने का औचित्य सोचना पड़े।

प्राचीन भारतीय नारी ने हर क्षेत्र में नर के कन्धे से कन्धा मिलाकर सृजनात्मक कामों में योग दिया है। घर और बाहर समान रूप से उसका कार्य-क्षेत्र रहा है। रोटी पकाने और बच्चा पैदा करने की मशीन तो वह इस अन्धकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

युग में बनी है सदा से तो वह अपनी गौरव-गरिमा द्वारा समाज के हर क्षेत्र को अपनी प्रतिभा से चमत्कृत करती रही है और प्रगति एवं समृद्धि के लिए पुरुष के समान ही अपना योगदान देती रही है। संसार भर में आज भी उसका पुरुषार्थ वैसा ही उपादेय सिद्ध हो रहा है। एक समर्थ व्यक्ति के रूप में वह अपनी क्षमता और बुद्धिमत्ता का पूरा-पूरा लाभ अपने समाज को दे रही है।

पिछड़ा हुआ भारतीय समाज पर्दा प्रथा जैसी अनीतिमूलक मूर्खतापूर्ण कुरीतियोंको अब भी छाती से चिपकाये बैठा है जबकि उसके बने रहने का कोई आपत्तिकालीन कारण शेष नहीं रह गया है। यहां न अरब जैसे रेतीले अन्धड़ चलते हैं और न अब स्त्रियों की टाट-पाट, खरीद-फरोख्त होती है जिसके कारण उन्हें लुकाने-छिपाने की जरूरत पड़े। अब तो विवेकशीलता की कसौटी पर इसे एक विशुद्ध सामाजिक अत्याचार और व्यक्ति के जन्म-जात ईश्वर प्रदत्त मानवीय अधिकार का हनन ही माना जायगा। इस कुप्रथा ने हमारे समाज को अपङ्ग बनाकर रख दिया है। बन्दी की तरह एक छोटे कटघरे में रहने वाली नारी दिनों-दिन शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से अशक्त होती चली जाती है। पुरुषों की तुलना में उसका स्वास्थ्य बहुत अधिक खराब है। प्रजनन के भार से उसकी बेतरह मृत्यु होती है। शिक्षा के अभाव में बालकों के उचित पालन-पोषण, गृह-व्यवस्था और पति का महत्वपूर्ण सहयोग करने में असमर्थ है। अनुभव के अभाव से परिवार की किसी बड़ी समस्या को सुलझाने में कोई योगदान नहीं दे सकती। पति द्वारा उपेक्षित या परित्यक्त कर दी जाय अथवा वैधव्य की विपत्ति सिर पर आ पड़े तो उसकी दयनीय दुर्दशा पत्थर को भी रुला दे सकती है।

जिस समाज का--व्यक्ति का—आधा अङ्ग नारी के रूप में इस प्रकार अपङ्ग बना हुआ हो उसकी प्रगति और समृद्धि की आशा कौन करेगा ? बालक, वृद्ध, अपंग, रोगी तो गृहपति पर भार होते ही हैं निरुपयोगी बनी बैठी नारी भी अब लगभग इसी प्रकार अपाहिजों में सम्मिलित हो गई है। पर्दा प्रथा ने हमारे समाज के आधे अंग को लकवा मारे जाने वाली रोगी की स्थिति में ला पटका। आधी जनसंख्या की नारी अपने प्रबल पुरुषार्थ से पुरुष जन-संख्या की तरह ही प्रगति के हर क्षेत्र में एक कदम आगे बढ़कर दिखा सकती थी और समृद्धि भरी सुविधायें उत्पन्न कर सकती थी,आज निरीह बनी मन मसोसकर कैदीका तिरस्कृत और उपेक्षित जीवन जीने के लिए विवश हो रही है।

समय आ गया जब कि पर्दा प्रथा जैसी अनीतिमूलक कुरीति को हटाया जाय और नारी को भी नर की ही भाँति मनुष्योचित सम्मानपूर्ण जीवन जीने का अधिकार दिया जाय।उसे शिक्षा की अब पुरुषों से अधिक सुविधा मिलनी चाहिये क्योंकि वह बहुत पिछड़ गई है, जब तक पिछड़ापन दूर होने और समानताके स्तर पर आने की स्थिति उत्पन्न न हो जाय तब तक उसे शिक्षा-दीक्षा, स्वावलम्बन तथा कुशलता प्राप्त करने की अधिक सुविधा उपलब्ध करने का पूरा हक है और इस न्यायोचित सुविधा को उपलब्ध करने में हर पुरुषों को पूरा-पूरा योगदान देना चाहिये। भारतीय नारी को अधिक शिक्षा, अधिक प्रतिभा, अधिक क्षमता, अधिक कुशलता प्राप्त करने का अवसर मिले तो वह राष्ट्र की प्रगति में देखते-देखते चार-चाँद लगा सकती है। इस मार्ग में सबसे बड़ी बाधा पर्दा प्रथा की है—उस पूतना का अब अन्त ही होना चाहिए।

—'क्या नारी इसी दुर्दशा में पड़ी रहेगी' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपव्यय एक पाई का भी न करें

क्र० ४५

आर्थिक क्षेत्र में बुद्धिमानी का चिन्ह उपार्जन ही नहीं खर्च करने की प्रक्रिया भी है। उपार्जन केवल बुद्धिमत्ता पर ही नहीं बहुत करके परिस्थितियों पर भी निर्भर रहता है। एकमी योग्यता और बुद्धिमत्ता होते हुए किसी को बहुत उपार्जन करने का मौका मिल जाता है और किन्हीं को परिस्थितियाँ काफी पीछे छोड़ देती हैं। पर अधिक उपार्जन करने वाला अधिक सुयोग्य, अधिक बुद्धिमान या अधिक प्रयत्नशील हो सो बात नहीं है। जिसका खाँचा बैठ गया, पूँजीवादी अर्थ प्रणाली में वही समृद्धि उपार्जित करने लगता है। पैसा पैसे को कमा सकता है। बाप दादों की छोड़ी सम्पत्ति उत्तराधिकार में मिल सकती है। जुआ, सट्टा, लाटरी फल सकती है, चोरी चाँडाली से भी बहुत कमाया जा सकता है। कहना इतना भर है कि उपार्जन की मात्रा को ही अर्थ-क्षेत्र की बुद्धिमत्ता नहीं माना जा सकता। बुद्धिमत्ता की वास्तविक कसौटी यह है कि व्यक्ति किस तरह अपनी कमाई को खच करता है।

अनेक व्यक्ति कमाते तो बहुत हैं पर खर्च करने के सम्बन्ध में बड़े अदूरदर्शी होते हैं। जो आता है वही अस्त-व्यस्त तरीके से फूँक देते हैं और आये दिन अभावग्रस्त एवं कर्जदार बने रहते हैं। वे पैसे का मूल्य नहीं समझते उसे खिलवाड जैसी कोई चीज समझते हैं, कि लोग हमें जितना अधिक खर्च करते देखेंगे उतना ही अमीर या बडा आदमी मानेंगे और उतना ही सम्मान करेंगे। इस दृष्टि से भी कई व्यक्ति बहुत फिजूल खर्ची करते हैं। कई ने तो इतने दुर्व्यसन पाल रखे होते हैं कि कमाई का बहुत भाग उसी में खर्च हो जाता है।

अनावश्यक रूप से हाथ खुला रख कर यदि पैसा उडाया जाय तो कुबेर का खजाना भी खाली हो सकता है और लक्ष्मी को भी दरिद्रता का शिकार बनना पड सकता है। कितने ही बड़े बर्तन में कितना ही पानी क्यों न भरा हो, तली का एक छोटा छेद कुछ ही समय में उसे खाली कर देने के लिए पर्याप्त है। बेमोचे समझे, चाहे जिस काम में मन की तरंग के आधार पर खर्च करने वाले सदा अभावग्रस्त और दरिद्र ही रहेंगे भले ही उनकी आमदनी कितनी ही बढ़ी-चढ़ी क्यों न हो।

पैसा किस प्रकार किस काम में कितना खर्च किया जाता है उसको पूरा जान लेने पर ही किसी की बुद्धिमत्ता का स्तर परखा जा सकता है। अपव्यय सबसे बड़ी मूर्खता है। अपनी हैसियत, औकात, आमदनी और आवश्यकता का ध्यान रखे बिना जो अनावश्यक खर्च किया जाता है वह व्यक्ति तथा परिवार के विकास में सबसे बड़ा अवरोध सिद्ध होता है। इन दिनों उचित और आवश्यक कार्य ही इतने बढ़े चढ़े हैं कि उनकी पूर्ति कठिन हो जाती है। स्वास्थ, शिक्षा, चिकित्सा, व्यवसाय आदि आवश्यक कार्यों के लिए ढेरों पैसा लगता है। अन्न, वस्त्र, मकान की जरूरतें बहुत सारा पैसा माँगती हैं। जब तक कुरीतियों का क्रांतकारी उन्मूलन न हो जाय तब तक विवाह-शादी, चाल-चलन, पर्व त्यौहार आदि पर भी पैसा खर्च करना ही पड़ेगा। यदि फिजूलखर्ची की आदत पड़ गई है और पैसों को कागज का टुकडा समझकर ज्यों-त्यों उड़ा दिया जाता है तो समय पर अनिवार्य आवश्यकताओं के लिए हाथ खाली रहेगा और उसमें खेद पूर्वक कटौती करनी पड़ेगी।

व्यक्ति अकेला नहीं है। वह अनेक पारवारिक कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों से जुड़ा हुआ है। बूढ़े माता-पिता और छोटे भाई-बहिनों के अतिरिक्त घर में दूसरे लोग भी होते हैं जो उपार्जन करने वालों से अपनी आवश्यकता पूर्ति चाहते हैं। संयुक्त परिवार प्रणाली के साथ जुडा हुआ यह एक पवित्र कर्त्तव्य है कि असमर्थ परिजनों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यथा सम्भव कुछ उठा न रखा जाय। विवाह होते ही पत्नी और उसके द्वारा सन्तान के लालन-पालन की जिम्मेदारी आती है। बड़े होने पर उनकी शिक्षा, शादी तथा आजीविका के साधन जुटाने पड़ते हैं। आजकल आये दिन अस्वस्थता का भी दौर रहता है।चिकित्सा में कंजूसी करके साथियों के जीवन से खिलवाड़ भी नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org
किया जा सकता । पारिवारिक प्रगति के अनेक द्वार खोले जा सकते हैं और प्रियजनों को सुयोग्य एवं समर्थ बनाने के लिये कितनी भी पूँजी जुटाई जा सकती है ।

यदि अनावश्यक खर्च करने की आदत है तो अधिकतर धन बेकार बातों में ही उड़ जायगा । फिर उचित आवश्यकताओं से वंचित ही रहना पड़ेगा । हमें समझना चाहिए कि कमाते भले ही हम हों पर उस आजीविका में परिवार के हर सदस्य की साझेदारी है । खर्च करते समय परिवार की वर्तमान और भावी आवश्यकताओं का ध्यान रखते हुए यह मानना पड़ेगा कि व्यय करने के मामले में हम स्वतंत्र नहीं हैं । साझे की पूंजी का विनियोग साझीदारों की इच्छा, आवश्यकता को ध्यान में रख कर ही करना पड़ता है । एक सद्गृहस्थ को इसी तरह सोचना चाहिए और अनावश्यक अपव्यय में एक कौड़ी भी खर्च करने से पूर्व हजार बार सोचना चाहिए ।

आज कल ठाठ-बाठ और फैशन के नाम पर न जाने कितने पैसों की बर्बादी होती है । कीमती पोशाकें जेवर शृङ्गार सामग्री, सजावट के लिए ढेरों धन बर्बाद होता रहता है । यदि विवेक से काम लिया जाता तो इसे आसानी से बचाया जा सकता था । शौक-मौज के नाम पर कमाई का बड़ा हिस्सा खर्च होता है । खाते-पीते लोगों का एक नया व्यसन और है—यारबाजी, पतङ्गबाजी, नशेबाजी, रण्डीबाजी आदि की तरह 'यारबाजी' भी दुर्गति की निशानी है । निठल्ले, आवारा और सिरफिरे लोग इस तलाश में रहते हैं कि कोई आंख का अन्धा और गाँठ का पूरा 'दोस्त' मिले । समय काटने और अपने दुर्व्यसन में सहायक ढूंढ़ने के लिए बड़ी चाल से और चापलूसी से दूसरों पर दोस्ती गाँठते हैं और फिर उसकी पीठ पर सवार हो लेते हैं । गपशप, ताश, चौपड़, सैर-सपाटा यही उनके धन्धे रहते हैं । ऐसे दोस्त जिनके पीछे भूत-पलीत की तरह लग जाँय तो समझना चाहिए अब इसका बहुमूल्य समय और गाढ़ी कमाई का पैसा पानी की तरह बहेगा । यारबाजी के कुचक्र में सैकड़ों ने अपने को बर्बादी के गर्त में गिराया है ।

पारिवारिक उत्तरदायित्वों के अतिरिक्त सामाजिक उत्कर्ष एवं पीड़ितों की सहायता भी मनुष्य का एक पवित्र कर्तव्य है । अपनी आमदनी का एक अंश अपनी श्रद्धा और सुविधानुसार नियमितरूप से लगाते रहना चाहिए, शरीर निर्वाह के अतिरिक्त अपने और अपने परिजनों के बौद्धिक एवं भावनात्मक उत्कर्ष के लिए स्वाध्याय एवं सत्संग के साधन भी जुटाये जाने चाहिए । अनुभवों के एकत्रीकरण के लिये योजनाबद्ध यात्रायें उपयोगी होती हैं मनोरंजन के लिए भी कुछ खर्च करना चाहिए । निर्वाह के अतिरिक्त उपरोक्त खर्च भी आवश्यक मद में ही जोड़े जा सकते हैं । इसके लिए कुछ पैसा तभी बचाया जा सकता है जब फिजूल खर्ची की सारी मदें कड़ाई के साथ काट दी जायें । आमदनी हर एक की सीमित होती है । अपव्यय की कोई सीमा नहीं । यदि अविवेकपूर्वक खर्च किया जाता रहा तो उसमें महत्वपूर्ण आवश्यकतायें ही रोकनी पड़ेंगी,परिणाम दोनों ही तरह अहितकर होगा।अपव्यय से आदतें खराब होंगी,दुर्व्यसन पल्ले बँधेंगे, गैर जिम्मेदारी की प्रवृत्ति बढ़ेगी और तंगी भुगतनी पड़ेगी । दूसरी ओर अपने तथा अपने परिवार के विकास की उचित आवश्यकतायें पूरी न हो सकने की आत्म-ग्लानि ही रहेगी ।

हमें अपनी आमदनी का एक भाग भावी उत्तरदायित्वों की पूर्ति के लिये बचत के रूप में सुरक्षित रखना चाहिए इसके बाद जो बचे उसे बजट बनाकर खर्च करना चाहिए । व्यक्तिगत शौक मौज का बजट छोटा रहना चाहिये और कड़ाई बरती जानी चाहिये कि उसमें निर्धारित रकम से अधिक तनिक भी खर्च न किया जाय ।

पैसा मनुष्य के कठिन परिश्रम का प्रतिफल है । उसका एक-एक छोटा सिक्का उचित और उपयुक्त कार्यों से ही खर्च होना चाहिये । धन हमारी भौतिक और आत्म प्रगति में बहुत सहायक हो सकता है । उससे अपना और दूसरों का भी हित साधन किया जा सकता है । पर यह सब होगा तभी जब खर्च के बारे में पूरी सतर्कता बरती जाय । उपयोगी प्रयोजनों की पूर्ति तभी हो सकती है, जब अनुपयोगी अपव्यय को कड़ाई के साथ रोका जाय । ऐसी अवस्था जहाँ बने वहीं बुद्धिमत्ता का कुछ प्रयोग समझा जाय ।

———

—'अपव्यय का ओछापन' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धन का उपार्जन ही नहीं सदुपयोग भी ध्यान में रहे

क्र० ४६

आजीविका उत्पादन में जितनी योग्यता और श्रमशीलता की जरूरत पड़ती है उससे अधिक बुद्धिमत्ता उस उपार्जन को ठीक तरह खर्च करने में अभीष्ट है । कितने ही व्यक्ति कमाते तो बहुत हैं पर सदा तंगी और कठिनाई ही अनुभव करते रहते हैं जबकि उनसे कम आमदनी वाले व्यक्ति हँसी खुशी संतोष और सुविधा का जीवनयापन भली प्रकार कर लेते हैं ।

अधिक आमदनी वाले के लिए अधिक खर्च करके, अधिक सुविधा साधन इकट्ठे कर लेना सुगम है । फिर भी यदि व्यवस्था बुद्धि न हुई तो वे उपलब्ध सुविधा साधन अस्त-व्यस्त एवं बर्बाद होते रहेंगे और पैसा खर्च हो जाने पर भी इनका लाभ न मिल सकेगा। इसके विपरीत कम आजीविका वाले व्यक्ति अपने एक-एक पैसे को व्यवस्था पूर्वक खर्च करके अपने थोड़े से धन का पूरा लाभ उठा लेते हैं और थोड़े में ही अपनी उचित आवश्यकतायें सरलता-पूर्वक पूरी कर लेते हैं । पैसा कमा लेना अलग बात है । खर्च करने में व्यवस्था और बुद्धिमत्ता का समावेश रखना दूसरी बात । सच तो यह है कि बुद्धिमत्ता कमाने में नहीं खर्च करने की रीतिनीति में ही परखी जा सकती है । बाप दादे दौलत छोड़ मरे हों या कोई बढ़िया आमदनी का धन्धा हाथ लग गया हो तो कम अकल का आदमी भी मालदार बन सकता है।अकस्मात गढ़ा धन, सट्टा,लाटरी या मंदी तेजी किसी को अमीर बना सकते हैं और बेईमानी बदकारी से भी कोई हाथों हाथ मालदार बन सकता है, इसमें बुद्धि नहीं अवसर की प्रधानता है । अच्छे बुद्धिमान और सुयोग्य व्यक्ति भी परिस्थिति वश गरीबी का जीवन जीते देखे गये हैं । यह अवसरों की करामात है । अन्धे के हाथ बटेर की तरह ऐसे मौके बेवकूफ और बेहूदे लोगों को भी मिल जाते हैं ।

दूरदर्शिता की एक उपयुक्त कसौटी यह भी है कि आदमी अपनी कमाई को किस तरह खर्च करता है । यदि हाथ ढीला और मन अस्त-व्यस्त है तो अनावश्यक वस्तुओं को आवश्यक समझकर इन्हें इकट्ठी करते रहने की लत पड़ जायगी फिर भले ही उनकी ऐसे ही इधर उधर बर्बादी होती फिरे । यह आदत अच्छी आमदनी वाले को भी अभावग्रस्त बनाये रहेगी । जो कमायेगा उससे पूरा न पड़ेगा । या तो इधर उधर से कर्ज लेकर काम चलाना पड़ेगा या बेईमानी की अतिरिक्त कमाई जोड़कर उसकी पूर्ति करनी पड़ेगी । दोनों ही मार्ग ऐसे है जो व्यक्ति का सम्मान गिराते हैं आशंकायें तथा चिन्तायें खड़ी करते हैं । और असंतोष एवं व्यग्रता की आग में जलते रहते हैं । यदि खर्च पर नियन्त्रण रखने की बुद्धिमत्ता को विकसित कर लिया जाय और हर पैसे को केवल उपयुक्त, आवश्यक एवं हित-कारी कामों में ही खर्च करने का निश्चय कर लिया जाय तो उपरोक्त अर्थ-तंगी की चिन्ता से सहज ही बचा जा सकता है और सामान्य आजीविका से सुख शान्ति पूर्वक निर्वाह किया जा सकता है ।

क्या खर्च आवश्यक है, और क्या अनावश्यक ? इसकी छांट मोटी अकल से नहीं होती । इसे बारीकी से देखना पड़ता है कि जीवन की स्थिरता और विनाश के लिए अत्याधिक आवश्यक साधन क्या हैं ? उनमें से कितने ही ऐसे होते हैं, जिनकी ओर ध्यान तक नहीं दिया जाता । उनकी पूर्ति के लिए अपने बजट में गुंजाइश रहनी चाहिए । किन्तु कितने ही काम ऐसे हैं जो किसी पुराने ढर्रे के कारण अपने खर्च में शामिल हो गये हैं । जबकि उनकी न तो कोई वास्तविक आवश्यकता है और न लाभ । इन्हें हटाने में शुरू में कुछ अखरने वाली बात दीखेगी पर यदि उन खर्चों को बन्द कर दिया जाय तो जल्दी ही यह अनुभव हो जायगा कि इस किफायत के कारण वस्तुतः कोई असुविधा नहीं होती और पैसे की काफी बचत हो जाती है ।

अपनी आमदनी में से कुछ बचत समय कुसमय के लिए निकालते रहना जरूरी है । जितना खर्च करना है उसमें से पत्नी तथा समझदार परिजन के परामर्श से बजट बना लेना चाहिए । बजट की मदों में निर्धारित पैसा उसी क्रम से खर्च हो । बिना विशेष कारण के उसमें हेर फेर न हो, इसकी कड़ाई की जानी चाहिए । अच्छा हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुरुष सारी कमाई पत्नी या माता के हाथ रखे । और बजट के अनुरूप उन्हीं को सौंप दें । महिलायें स्वभावत: इस सम्बन्ध में बहुत किफायतसार और समझदार होती हैं । उनके हाथ में पैसा रहे और वे ही खर्च करें तो हर परिवार की अर्थतंगी की उलझन सुलझ सकती है । बहीखाता हर घर में लिखा जाना चाहिए । ताकि समय समय पर यह पता लगता रहे कि किस मद में कितना पैसा खर्च होता है । इसी आधार पर यह सोच सकना संभव हो सकता है कि कहीं अनावश्यक कार्यों में पैसे की बर्बादी तो नहीं हो रही और कहीं आवश्यक कामों की उपेक्षा तो नहीं की जा रही ? तथ्य सामने होने पर ही उनका सुधार सम्भव है अन्यथा अँधेरे में कुछ पता ही न चलता कि कहाँ अनावश्यक खर्च हो रहा है और आर्थिक तंगी से बचने के लिए कहां कटौती और किफायत की गुँजाइश है ।

अपने बजट पर बार बार निगाह डाली जानी चाहिए और उचित अनुचित का निर्णय परिवार के समझदार लोगों को पास बिठाकर उनके परामर्श से करना चाहिए । देखा गया है कि जेब खर्च फैशन, व्यसन, शान शौकत के ठाट बाट बनाने,यार दोस्तों का जमघट लगाने और सामाजिक कुरीतियों में बहुत पैसा उठाना पड़ता है । इस सम्बन्ध में कड़ाई के साथ किफायत की जाय तो बहुत बचत हो सकती है और स्वास्थ्य, स्वाध्याय, सत्कर्म, चिकित्सा, मनोरंजन, संगीत, स्वच्छता आदि के आवश्यक साधन बनाये जा सकते हैं ।

जेब में रुपया भरके फिरते रहना बहुत ही बुरी आदत है । इससे उन अनावश्यक चीजों को खरीदने का भी मन ललचा जाता है जो वस्तुत: अपने लिए बहुत उपयोगी नहीं होतीं ।कीमती कपड़ा,कीमती फर्नीचर,कीमती सुसज्जा के स्थान पर सब कुछ सस्ता और मजबूत खरीदना चाहिये भले ही वह देखने में कम सुन्दर लगे।उधार लेने की आदत बहुत ही बुरी है । इससे चीज भी मँहगी मिलती है और जरूरत से ज्यादा भी खरीद ली जाती है । सामान्य नियम यही रखा जाना चाहिये कि जितनी अपनी हैसियत है उसी के भीतर खर्च किया जाय, भले ही घी दूध जैसी चीजों से वन्चित रहना पड़े ।

पुरानी चीजों की मरम्मत करने में दिलचस्पी हो तो वे बहुत दिन चल सकती हैं । हाथ से काम करना पसन्द हो तो कपड़े धोने से लेकर हजामत बनाने तक और घर की सफाई पुताई से लेकर पुस्तकों की जिल्द बाँधने तक बचे हुए समय में घरेलू मनोरंजन की तरह किए जा सकते हैं और पैसे बचाये जा सकते हैं । टूटी चीजों की मरम्मत, कपड़े सीना, पेटियों अथवा क्यारियों में शाकभाजी उगा लेना, आटा पीसना,चर्खा कातना, साबुन बनाना जैसे छोटे गृह शिल्प बेकार समय को भी रचनात्मक काम में लगाने का अच्छी आदत डालने वाला प्रयोजन पूरा करते हैं और पैसे भी बचते हैं । निर्माणात्मक योग्यता बढ़ती है सो अलग । कहना न होगा कि सुधार और सृजन का दृष्टिकोण परिष्कृत होकर यदि आदत के रूप में बदल जाय तो उन्नति के अनेक अवरुद्ध मार्ग सहज ही खुल सकते हैं और छोटा मनुष्य बड़ा बनने का रास्ता पा सकता है ।

हमें किसी की नकल नहीं करनी चाहिए वरन अपनी व्यवस्था तथा योजना अपनी स्वतंत्र बुद्धि से बनानी चाहिएअमीरों के यहाँ जिस ढंग से खर्च होता है और जो साधन जुटाये जाते हैं उनकी नकल करना आरम्भ कर दिया जाय तो अपनी सीमित आय में काम कैसे चलेगा, मंहगी चीजों का अन्त नहीं । मँहगे कपड़े,जेवर,उपकरण खरीदने में हाथ खुला रखा जाय तो कुबेर का भी खजाना खाली हो सकता है और उसे भी आर्थिक तंगी तथा कर्जदारी का कष्ट सहना पड़ सकता है ।

उपार्जन के उपयुक्त अधिक योग्यता एवं अनुभव बढ़ाना, साधन जुटाना, कठोर श्रम करना तथा मिलनसारी का स्वभाव इन बातों को बढ़ाना आवश्यक है । क्षमता बढ़ने से आमदनी के स्त्रोत खुलते हैं । हर हालत में खर्च पर नियन्त्रण तो आवश्यक ही है । अपनी हैसियत से बाहर जो कुछ है वह सब अनावश्यक समझा जाना चाहिए । सारी कमाई शरीर निर्वाह के लिये ही खर्च नहीं कर दी जानी चाहिए और न बेटे पोतों के लिये इसे जोड़ते ही जाना चाहिए वरन यह भी देखना चाहिए कि ज्ञान, अनुभव एवं लोकमंगल के लिये भी कमाई का एक अंश लगा है या नहीं । सब कुछ शरीरों की सुविधा बढ़ाने में ही खर्च करते रहना आत्मिक प्रगति का द्वार अवरुद्ध करना है । ऐसी भूल पैसे सम्बन्धी व्यवस्था सोचते समय निश्चित रूप में ध्यान से रखनी चाहिए ।

'धन का उपार्जन और उपयोग' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपव्यय और फैशन परस्ती–एक ओछापन

क्र० ४७

पिछले दिनों अमीरी को इज्जत का माध्यम माना जाता रहा है। इज्जत पाना हर मनुष्य की स्वाभाविक इच्छा है। इसलिए प्रचलित मान्यताओं के अनुसार हर मनुष्य अमीरी का इच्छुक रहता है ताकि उसे दूसरे लोग बड़ा आदमी समझें और इज्जत करें। अमीरी सीधे रास्ते नहीं आ सकती। उसके लिए टेढ़े रास्ते अपनाने पड़ते हैं। हर समाज और देश की अर्थ व्यवस्था का एक स्तर होता है। उत्पादन श्रम और क्षमता के आधार पर दौलत बढ़ती है। देश में वैसे साधन न हों तो सर्व साधारण को गुजारे भर के लिए ही मिल सकता है। अपने देश की स्थिति आज ऐसी ही है, जिसमें किसी प्रकार निर्वाह चलता रहे तो पर्याप्त है। औसत देशवासी की परिस्थिति से अपने को मिलाकर काम चलाऊ आजीविका से सन्तोष करना चाहिए। 'हम सब एक तरह का जीवन जीते हैं और ईर्ष्या असन्तोष का अवसर नहीं आने देते, इतना ही सोचना पर्याप्त है। अमीरी की ललक पैदा करना—सीधा मार्ग छोड़कर टेढ़ा अपनाने को कदम बढ़ाना है। पिछले दिनों अनैतिक मार्ग अपनाने वाले—अमीरी इकट्ठी कर लेने वाले इज्जत आबरू वाले बड़े आदमी माने जाते रहे होंगे पर अब वे दिन लद चुके। अब समझदारी बढ़ रही है। दौलत अब बेइज्जती की निशानी बनती चली जा रही है। लोग सोचते हैं, यह औंधे मार्ग अपनाने वाला आदमी है। यदि सीधे मार्ग से कमाता है तो भी ईमानदारी का तकाजा है कि देशवासियों के औसत वर्ग की तरह जिये और बचत को लोक-मङ्गल के लिए लौटा दे। यदि ऐसा नहीं किया जाता, बढ़ी हुई कमाई को ऐयाशी में, बड़प्पन के अहङ्कारी प्रदर्शन में खर्च किया जाता है अथवा बेटे-पोतों के लिये जोड़ा जमा किया जाता है तो ऐसा कर्तव्य विचारशीलता की कसौटी पर अवांछनीय ही माना जायगा। अमीरी अब निस्संदेह बेइज्जती की निशानी बनती चली जा रही है और वह दिन दूर नहीं,जब अमीरों को समाज का घृणित, अनैतिक एवं निष्ठुर वर्ग माना जायगा। हमें सन्देह है कि अमीरी अब पचास वर्ष भी जीवित रह सकेगी। विवेकशीलता उसे छोड़ने के लिए बाध्य करेगी अन्यथा कानून अथवा विद्रोह उसका अन्त कर देगा।

अमीरी इकट्ठी तो कोई विरले ही कर पाते हैं पर उसकी नकल बनाने वाले विदूषक हर जगह भरे पड़े हैं। चूँकि अमीरी इज्जत का प्रतीक बनी हुई थी, इसलिए इज्जत पाने के लिए अमीरी इकट्ठी करनी चाहिए और यदि वह न मिले तो कम से कम उसका ढोंग ही बना लेना चाहिये, यह बात नासमझ वर्ग में घर गई है और वह इस नकलचीपन पर बेतरह अपने आपको बर्बाद करता और अर्थसंकट के दल-दल में धँसता चला जाता है। लोग सोचते हैं कि हम अपना ठाट-बाट अमीरों जैसा बनालें तो दूसरे यह समझेंगे कि यह अमीर और बड़ा आदमी है और चटपट उसकी इज्जत करने लगेंगे। इसी नासमझी के शिकार असंख्य ऐसे व्यक्ति जिनकी आर्थिक स्थिति सामान्य जीवनयापन के भी उपयुक्त नहीं, अमीरी का ठाट-बाट बनाये फिरते हैं। कपड़े, जेवर, फर्नीचर, सुसज्जा आदि को प्रदर्शनात्मक बनाने में इतना खर्च करते रहते हैं कि उनकी आर्थिक कमर ही टूट जाती है। दोस्तों के सामने अपनी अमीरी का पाखण्ड प्रदर्शित करने के लिए पान-सिगरेट सिनेमा, होटल आदि के खर्च बढ़ाते हैं और उसमें उन्हें भी शामिल करते हैं ताकि उन पर अपनी अमीरी का रौब बैठ जाय और इज्जत मिलने लगे। कैसी भोंडी समझ है यह और कैसा फूहड़ तरीका है। कोई समझदार व्यक्ति इस नासमझी पर हंस ही सकता है। पर असंख्य लोग इसी वहम में फँसे, फिजूल खर्ची और फैशन में पैसा उड़ाते रहते और अपनी आर्थिक स्थिरता को खोखले करते चलते हैं।

मामूली आमदनी के लोग जब अपनी स्त्रियों के बक्से कीमती साड़ियों से भरते हैं और जेवरों में धन गँवाते हैं तब उसके पीछे यही ओछापन काम करता है कि ऐसी सजी-धजी हमारी औरतों को देखकर लोग हमें अमीर मानेंगे पुरुष साड़ी, जेवर तो नहीं पहनते पर सूट-बूट,घड़ी, छड़ी उनकी भी कीमती होती है, ताकि मित्रों के आगे बढ़-चढ़कर शेखी मार सकें। विवाह-शादियों के वक्त यह ओछापन हद दर्जे को पहुँच जाता है। स्त्रियां ऐसे कपड़े लटकाये फिरती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं, जैसे सिनेमा, नाटक के नट लोग पहनते हैं । बरातियों का औघड़पन देखते ही बनता है । ऐसा ठाट-बाट बनाते हैं मानो कोई बड़े मिल मालिक, जागीरदार,अफसर अथवा सेठ-साहूकार हों । जानने वाले जब जानते हैं कि जरा सी आमदनी वाला यह ढोंग बनाये फिरता है तो हर कोई असलियत समझ जाता है और दो ही अनुमान लगाता है या तो यह कर्जदार रहता होगा या बेईमानी से कमाता होगा । ये दोनों ही बातें बेइज्जती की हैं । सोचा यह गया था कि ठाट-बाट से इज्जती बढ़ेगी पर होता ठीक उल्टा है । ऐसी सज-धज वाले व्यक्ति आमतौर से ओछे और अविश्वस्त समझें जाते हैं । ठाट-बाट वाले बाबू को गैर सरकारी नौकरी नहीं मिलती। मालिक जानता है, इतना वेतन तो ठाट-बाट में ही उठ जायेगा, फिर बच्चों को खिलाने के लिए इसे हमारे यहाँ चोरी का जाल फैलाना पड़ेगा । यही बात स्त्रियों के सम्बन्ध में है । फैशन बनाने वाली महिलाएँ दो छाप छोड़ कर जाती हैं या तो इनके घर में अनुचित पैसा आता है अथवा इनका चरित्र एवं स्वभाव ओछा है । यह दोनों ही लांछन किसी कुलीन महिला की इज्जत बढ़ाते नहीं,घटाते हैं ।

घर-परिवार में यह सज-धज की प्रवृत्ति मनोमालिन्य पैदा करती है । अपव्यय हर किसी को बुरा लगता है । जो पैसा परिवार के शिक्षा, चिकित्सा, व्यवसाय, विनोद, पौष्टिक आहार आदि में लग सकता था, उसे फैशन में खर्च किया जाने लगे तो प्रत्यक्षत: परिवार के अन्य सदस्यों की सुविधा का अपहरण है । ठाट-बाट की कोई बाहर से प्रशंसा कर दे किसी को कुछ समय के लिए भ्रम में डाल दे यह हो सकता है, पर साथियों में घृणा और ईर्ष्या ही पैदा होगी, वहाँ इज्जत बढ़ेगी नहीं घटेगी । बढ़े-चढ़े खर्चों की पूर्ति के लिए अवांछनीय मार्ग ही अपनाने पड़ेंगे । कर्जदार और निष्ठुर जीवन जीना पड़ेगा । आमदनी सही भी है तो भी उसे व्यक्तिगत व्यय में सामाजिक स्तर के अनुरूप ही खर्च करना चाहिये । अधिक खर्च लोक-मङ्गल का हक मारना है ।

अच्छा हो हम समझदारी और सज्जनता से भरा हुआ, सादगी का जीवन जियें अपनी बाह्य सुसज्जा वाले खर्च को तुरन्त घटा दें और उस बचत को अपनी,अपने परिवार की तथा समाज की वास्तविक आवश्यकताओं को पूरा करने में लगाने लगें । सादगी सज्जनता का प्रतिनिधित्व करती है । जिसका वेश-विन्यास सादगीपूर्ण है उसे अधिक प्रामाणिक एवं विश्वस्त माना जा सकता है । जो जितना ही उद्धतपन दिखायेगा, समझदारों की दृष्टि में उतनी ही इज्जत गिरा लेगा । इसलिए उचित यही है कि हम अपने वस्त्र सादा रक्खें, उनकी सिलाई भले मानसों जैसी करायें, जेवर न मटकायें, नाखून और होठ न रंगें, बालों को इस तरह न सजायें जिससे दूसरों को दिखाने का उपक्रम करना पड़े । नर-नारी के बीच मानसिक व्यभिचार का बहुत कुछ सृजन इस फैशन-परस्ती में होता है ।

सादगी, शालीनता और सज्जनता सृजन करती है । उसके पीछे गम्भीरता और प्रामाणिकता, विवेकशीलता और बौद्धिक परिपक्वता झाँकती है । वस्तुत: इसी में इज्जत के सूत्र सन्निहित है । सादगी घोषणा करती है कि यह व्यक्ति दूसरों को आकर्षित या प्रभावित करने की चालबाजी नहीं, अपनी वास्तविकता विदित करने में सन्तुष्ट है । यही ईमानदारी और सचाई की राह है । यह आमदनी बढ़ाने का भी एक तरीका है । फिजूल खर्ची रोकना अर्थात् आमदनी बढ़ाना । समय आ गया है कि इस बाल-बुद्धि को छोड़कर प्रौढ़ता का दृष्टिकोण अपनाया जाय । हम गरीब देश के निवासी हैं । सर्व साधारण को सामान्य सुसज्जा और परिमित खर्च में काम चलाना पड़ता है अपनी वस्तु स्थिति यही है कि अपने करोड़ों भाई-बहिनों की पंक्ति में ही हमें खड़ा होना चाहिए और उन्हीं की तरह रहन-सहन का तरीका अपनाना चाहिए । इस समझदारी में ही इज्जत पाने के सूत्र सन्निहित हैं । फैशन-परस्ती और अपव्यय की राह अपनाकर हम आर्थिक संकट को ही निमन्त्रित करते हैं ।

स्वच्छता के साथ जुड़ी हुई सादगी अपने आपमें एक उत्कृष्ट स्तर का फैशन है । उसमें गरीबी का नहीं महानता का पुट है । सादा वेश-भूषा और सुसज्जा वाला व्यक्ति अपनी स्वतन्त्र प्रतिभा और स्वतन्त्र चिन्तन का परिचय देता है । भेड़चाल को छोड़कर जो विवेकशीलता का रास्ता अपनाता है, वह बहादुर है । सादगी हमें फिजूलखर्ची से बचा कर आर्थिक स्थिरता में ही समर्थ नहीं करती वरन् हमारी चारित्रिक दृढ़ता भी प्रमाणित करती है । अकारण उत्पन्न होने वाली ईर्ष्या और लांछनों से बचने का भी यही सरल मार्ग है ।

'धन का उपार्जन और उपयोग' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जेवरों का भोंडा फैशन—हर दृष्टि से हानिकारक

क्र० ४८

कोई समय था जब धन को सुरक्षित रखने के कोई उपयुक्त माध्यम नहीं थे। बैंक उस जमाने में थे नहीं और न सहकारिता, शेयर, ब्याज, उद्योग जैसी प्रणालियां विकसित हुई थीं जो धन की न केवल रखवाली करे वरन उसे बढ़ाती भी रहें। उस जमाने में लोग अपनी बचत के पैसे को सोने-चांदी जैसी कीमती धातुओं के रूप में बदल लेते थे और कभी-कभी तो उन्हें जमीन में गाढ़ कर गुप्त कर देते तथा कभी-कभी जेवर बनवाकर उसे शरीर पर लादे रहते थे। चोर-उठाईगीरों से बचने के लिए किन्हीं परिस्थितियों में गाड़ना ठीक पड़ता था किन्हीं में लादना। जब दस्युओं का आतंक अधिक था और राज विप्लव होते रहते थे तब लूटमार से बचाव जमीन में दबाई हुई सम्पत्ति सुरक्षित समझी जाती थी। पर धीरे-धीरे जब आतङ्क का जमाना कम हुआ तो जेवर वाली बात उपयुक्त जँचने लगी क्योंकि इससे सम्पन्नता प्रदर्शित करके गौरव पाने का अवसर मिलता था। उस पिछड़े जमाने में अपनी जमा पूँजी का विज्ञापन करने के लिये यह अच्छा ढङ्ग था कि सोने-चाँदी के आभूषण पहने जाँय। उनसे कुछ तो खूबसूरती समझी जाती थी और कुछ अमीरी का रौब-दौब जँचाने की बात भी हो। इस दृष्टि से औरतें ही नहीं मर्द भी उन दिनों हाथ-पैर में ही जेवर नहीं पहनते थे वरन् नाक-कान आदि कोमल अङ्गों को छेदकर उनमें सोने की बालियां तथा दूसरी चीजें पहनते थे। एक वह भी जमाना था, और उस जमाने की यह अपने ढङ्ग की सूझ-बूझ या आवश्यकता भी थी।

अब समय में जमीन-आसमान जैसा अन्तर आ गया। पुरानी परिस्थितियों में फर्क पड़ गया। अब पैसे को जेवर के रूप में बदलने की कोई उपयोगिता नहीं रह गई है। शेयर, तथा बचत धन को जमा कर ब्याज कमाने के अनेक रास्ते निकल आये जिनसे कुछ ही समय के अन्दर पैसा ड्योढ़ा-दूना हो जाता है। चोर-उठाईगीरों का कोई भय नहीं। पुराने जमाने में जेवर सीधे-सादे ढङ्ग के गाढ़ दिये जाते थे जिससे सोना-चाँदी असली रूप में ज्यों का त्यों बना रहता था और जरूरत के समय उसे लगभग उतने ही मूल्य में बेचा जा सकता था। अब फैशन की कुछ ऐसी बात आ गई है कि जेवरों के तर्ज, डिजायन और नमूनों ने कमाल ही कर दिखाया। टाँका, बट्टा मिलावट, मीना, नगीना आदि के जंजाल इतने अधिक हैं और उनकी गढ़ाई-बनाई इतनी मँहगी है कि बनाने के दूसरे दिन यदि उन्हें गलाना, बदलना या बेचना पड़े तो मुश्किल से आधी कीमत खड़ी होगी। नाजुक किस्म के बने हुए यह हलके-फुलके जेवर घिसते, टूटते भी बुरी तरह हैं इनकी मरम्मत और उलट-पुलट में लगती रहने वाली लागत का ब्यौरा तैयार किया जाय तो मालूम पड़ेगा कि थोड़े ही समय में बनवाने वाले की सारी पूँजी स्वर्णकारों की हथफेरी में समाप्त हो जाती है।

जो पैसा पन्द्रह-बीस वर्ष में जमा करने पर दूना हो सकता था, वह जेवर बनवाने पर जड़-मूल से गुम गया। आर्थिक दृष्टि से यह वैयक्तिक रूप से बड़ी हानि है। राष्ट्रीय दृष्टि से तो जेवर बनवाने और पहनने की आदत को एक प्रकार से अभिशाप ही कह सकते हैं। बचत बैंकों में जमा पूँजी अनेक उद्योग-धन्धों के सृजन और संचालन का आधार बनकर राष्ट्रीय सम्पत्ति के उत्पादन और अनेक लोगों को आजीविका देने में योगदान कर सकती थी इसके स्थान पर उँगली पर गिनने लायक चन्द आभूषण निर्माताओं को एक अनुपयोगी धन्धा देने भर में सीमित रह गई। सोना और चाँदी अब राष्ट्रीय साख के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय आधार का व्यवसाय बनी हुई है। दूसरे देशों से जो सामान खरीदना पड़ता है उसकी कीमत सोने-चाँदी के रूप में चुकाने का प्रचलन है। किसी देश के पास यह धातुएं कम हों तो वह अपने यहाँ छपे नोटों के आधार पर अन्य देशों से कुछ भी न मँगा सकेगा। इसलिए अब सरकारों को अपने देश का सोना-चांदी अन्तर्राष्ट्रीय साख के रूप में जमा रखना होता है। यदि यह दुर्लभ धातुएँ लोगों के शरीरों पर जेवरों के रूप में लदी रहें तो निश्चित रूप से सरकार के पास जमा रखने न साख बनाने और आवश्यक आयात करने के साधन स्वरूप रह जायेंगे। इससे राष्ट्रीय व्यवसाय एवं उत्पादन में कठिनाई ही उत्पन्न होगी। जेवर पहनने की प्रथा राष्ट्र की अर्थ व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव ही डालेगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य की दृष्टि से जेवर केवल हानिकारक ही सिद्ध होते हैं। वे शरीर के जिस भी अङ्ग पर धारण किये जायेंगे उसकी स्वच्छता मे गड़बड़ी उत्पन्न करेंगे। वहाँ के रोम-कूप रुकेंगे, पसीना ठीक तरह न निकलेगा, चमड़ी कड़ी पड़ेगी और बीमारियों की जड़ जमने का आधार बनेगा। नाक-कान जैसे कोमल मर्म स्थलो को छेदकर उनमें जेवर ठूंसना तो प्रकृति प्रदत्त इन अंगों की शोभा-सुषमा को नष्ट कर डालना ही है। नाक में पहने जाने वाले जेवर मैल जमा करते हैं। नाक से निकलने वाला पानी उनके भीतर जमने और सूखने लगता है जिसकी दुर्गन्ध निरन्तर साँस के साथ मस्तिष्क में जाती रहती है और दिमाग को दुर्बल एवं बीमार बनाने की भूमिका प्रस्तुत करती है। नाक में बालियाँ, लोंग आदि पहनने वाली स्त्रियाँ अक्सर सिर दर्द, जुकाम आदि की शिकायतों में ग्रस्त पाई जाती हैं। कान छेद-छेदकर उनमें ऊट-पटाँग लटकन टाँगना आदिम काल की जंगली आदतों का स्मरण दिलाता है। जानवरों के नाक-कान आदि मे छेदकर उसमें रस्सी डालकर काबू में रखने जैसा करतब यदि मनुष्यों के साथ दिखाया जाय तो इसे असभ्यता ही कहा जावेगा। देह पर गुदने गुदाना नाक-कान में छेद कर जेवर लटकाना किसी जमाने में सौंदर्य साधन माना जाता रहा होगा पर इस बीसवीं शताब्दी में कोई सभ्य व्यक्ति इस कुरीतिपूर्ण भोंड़ेपन का समर्थन नहीं कर सकता है। यदि किसी के पास सौन्दर्य देखने की आँखे हों तो वह इन भोंडेपन को असभ्य कुरूपता की ही पंक्ति में रखेगा।

अमीरी का प्रदर्शन सो भी जेवरों के रूप मे—अब शालीनता का चिन्ह नहीं रह गया है। आर्थिक विषमता के विरुद्ध रोष बढ़ता जा रहा है और अमीरों का अप्रतिष्ठित और अप्रमाणिक अवांछनीय वर्ग का घोषित किया जा रहा है। ऐसी लहर में अमीर लोग भी अपनी अमीरी छिपाने की बात सोचते हैं जिससे लोक निन्दा और रोष से बच सके। ऐसे जमाने में जेवरों के रूप मे अमीरी का भोंडा विज्ञापन करना अपने को चार बजारियों, जमाखोरों, पूँजीपतियों, शोषकों की मिलने वाली घृणा और गाली आमन्त्रित करना है। गृह कलह के आधार जेवर हैं। कम-बढ़ जेवर मिलने के कारण सद्गृहस्थो में भी ईर्षा द्वेष की भावना भड़कती हैं। शौकीन स्त्रियाँ अपने पतियों का आवश्यक काम रोककर भी जेवर बनवाने का आग्रह करती हैं फलस्वरूप मनोमालिन्य बढ़ते और अर्थ सन्तुलन बिगड़ते हैं। चोर-डाकुओं की घात लगती है सो अलग। उचक्के, उठाईगीरे जेवर के लोभ में बालकों, महिलाओ को बहका कर उन्हें अकेला-दुकेला पाकर जान के गाहक बनते रोज ही देखे सुने जाते हैं। इन परिस्थितियों में नासमझ लोग ही जेवर की उपयोगिता और आवश्यकता का समर्थन कर सकते हैं।

विवाह शादियों में दहेज की माँग को प्रोत्साहन देने का एक बहुत बड़ा कारण लडकी वालों का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में कीमती जेवर चढाने की माँग करना भी अच्छा है हम जेवरों के जंजाल से छूटें। इस भोंड़े फैशन को छोड़ें और उन दुष्परिणाम से बचें जो जेवरों के कारण नैतिक, सामाजिक, शारीरिक एवं आर्थिक क्षेत्र में आये दिन विविध-विध बुराइयाँ उत्पन्न करते रहते हैं।

———

—'अपव्यय का ओछापन' पुस्तिका से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

माँस मनुष्यता को त्याग कर ही खाया जा सकता है

क्र० ४६

विश्व विख्यात सुप्रसिद्ध दार्शनिक जार्ज बर्नार्डशा को एक बार डाक्टरों ने सलाह दी कि—"आप माँसाहार न करेंगे तो जल्दी ही मर जायेंगे।" शा ने उत्तर दिया—'यदि मैं दूसरों का प्राण घात किये बिना जिन्दा नहीं रह सकता तो मेरा मर जाना ही उत्तम है' वे कहा करते थे—"अपने कुटुम्बियों को मारकर खा जाना और पशु-पक्षियों का माँस खाना समान स्तर के अपराध हैं।"

वस्तुतः मनुष्य के छोटे भाई-बहिनों की तरह ही अन्य पशु-पक्षी हैं। सब में एक ही आत्मा है। सभी ईश्वर के पुत्र हैं। शान्तिपूर्वक जीने और दूसरों के जीने देने का अधिकार भले ही निम्न स्तर के जीव-जन्तु न मानें यह बात अलग है पर मनुष्य को तो इतना जानना और मानना ही चाहिये। मानव प्राणी की सबमें बड़ी विशेषता उसकी दया करुणा,सहृदयता और स्नेह भरी सद्भावना है। इसी कारण वह ईश्वर का ज्येष्ठ पुत्र और सृष्टि का सबसे उत्तम प्राणी बना है। मनुष्य की महत्ता उसकी बुद्धिमत्ता पर नहीं सहृदयता पर निर्भर है। यदि वह उसे भी खो दे तो समझना चाहिये कि उसने मनुष्यता के सर्व प्रथम और सर्व प्रधान आदर्श को ही तिलांजलि दे दी।

करुणा की प्रवृत्ति अविच्छिन्न है। उसे मनुष्य और पशुओं के बीच विभाजित नहीं किया जा सकता। पशु-पक्षियों के प्रति बरती जाने वाली निर्दयता मनुष्यों के साथ किये जाने वाले व्यवहार को भी प्रभावित करेगी। जो मनुष्यों से प्रेम और सद्व्यवहार का मर्म समझता है वह पशु-पक्षियों के प्रति निर्दय नहीं हो सकता। अपना प्राण सभी को समान रूप से प्रिय है। पीड़ा सबको समान होती है। अपनी चमड़ी में सुई चुभो कर अथवा कोई अंग काट कर हम अनुभव कर सकते हैं कि शरीर घात कितना कष्टकारक है। अपने बच्चों और प्रियजनों को अपनी आँखों के आगे काटे जाने और उनके करुण चीत्कार करने की कल्पना करके हम सोच सकते हैं कि माँस आखिर किस तरह प्राप्त होता है। स्वास्थ्य और स्वाद के लिये हम अपने बच्चों को मारकर खा सकें तो ही हमें दूसरे जीवों की हत्या के लिये तैयार होना चाहिये। बूचरखाने में छुरी के नीचे तड़पते हुए पशु और कत्ल किये जाते मनुष्य को देखकर कोई यह अन्तर नहीं कर सकता कि पीड़ा के स्तर में दोनों के बीच कोई अन्तर है। पशु-पक्षी भी सिर कटते और पेट फटते समय उतना ही चीत्कार करते हैं जितना मनुष्य करता है। दोनों के हा-हाकार, तड़पन और व्यथा में कोई अन्तर नहीं। मनुष्यों को मारकर खाने वाला और अन्य जीवों को मारकर खाने वाला हमारे कानूनों की दृष्टि से न्यूनाधिक अपराधी हो सकता है, पर ईश्वर की दृष्टि में दोनों की पैशाचिकता एक स्तर की है।

किसी बड़े स्वार्थ के लिये कोई बड़ी दुष्टता कर बैठे तो बात समझ में आती है, पर अकारण, निष्प्रयोजन, निरर्थक ही नहीं—उल्टी हानि, बीमारी, विकृति एवं जोखिम की मूर्खतापूर्ण उपलब्धियों के लिये—ऐसा किया जाय तब तो बात बिल्कुल भी समझ में नहीं आती। स्वास्थ्य के लिये अथवा स्वाद के लिये माँस खाया जाता हो तो दोनों ही बातें पूर्णतया अज्ञान मूलक हैं। माँस की गन्ध, बनावट, स्वाद, सभी कुछ ऐसे हैं जो अपने असली रूप में घृणा उत्पन्न करते हैं और उसके समीप आने पर एक वीभत्सता अनुभव होती है और मतली आती है। उबालकर,चिकनाई में भूनकर, मसालों की भरमार में तब कहीं वह उस लायक होता है कि उसकी असलियत छिपा सकें और मुख उसे पेट में जाने के लिए इजाजत दे सके। माँस में हिंसक जानवरों के लिये कोई स्वादिष्टता हो सकती है पर मनुष्य की इन्द्रियों के लिये तो उसमें रत्तीभर भी आकर्षण नहीं है। जो आकर्षण है वह मसाले आदि का है।

किस प्राणी के लिये कौन पदार्थ स्वास्थ्यवर्धक है कौन-सा हानिकारक—इसकी मोटी परीक्षा उसके खाद्य-यन्त्रों की बनावट है। माँसाहारी जीवों के दाँतों के कीले बड़े नुकीले होते हैं ताकि वे जीवित प्राणी की चीर-फाड़ कर सकें। उनके नाखून इतने पैने और मजबूत होते हैं कि किसी के शरीर में गड़ाकर उसे जकड़ सके। वे जीभ से चाट कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पानी पीते हैं और रतिक्रिया के समय जुड़ जाते हैं। यह एक भी स्थिति मनुष्य शरीर में नहीं है। बन्दर विशुद्ध शाकाहारी है। मनुष्य की भी बनावट शाकाहारी प्राणी है। अपनी मूल प्रकृति के विपरीत आहार सदा हानिकारक होता है, क्योंकि पाचन यन्त्र में उत्पन्न होने वाले रस प्रकृति विरुद्ध वस्तुओं को हजम करने को उपयुक्त ही नहीं होते। शाकाहारी गाय, भैंस, बकरी, बन्दर आदि को माँस खिलाया जाय तो वह पहले तो उसके लिये तैयार ही न होगा यदि किसी तरह खिला भी दिया जाय तो ठीक तरह हजम न होने के कारण बीमार पड़ जायगा। यही बात सिंह, व्याघ्र आदि के बारे में है उन्हें अन्न, शाक, घास पर रखा भी जाय तो पहले वह हजम ही न होगा। बलात् खिलाया जाय तो पाचन तेज उसे स्वीकार न करेगा और बीमारी आ खड़ी होगी। मनुष्य की प्रकृति से मांस सर्वथा विपरीत है। वह कच्चा मांस पचा नहीं सकता, कच्चा रक्त पीले तो आँतें सड़ जाँय। कितनी ही उलट-पुलट करके उसे खाने योग्य बनाया जाय। प्रकृति के मूल आधार को नहीं बदला जा सकता। माँस हमारे लिये सदा हानिकारक परिणाम उत्पन्न करेगा। जो उसे माननीय स्वास्थ्य के लिये उपयुक्त बताते हैं वे केवल गहरे अज्ञान में गोते लगा रहे हैं।

जिन्होंने मानव शरीर शास्त्र का गहरा अन्वेषण किया है उनका निष्कर्ष स्वास्थ्य की दृष्टि से माँसाहार को सर्वथा अनुपयुक्त सिद्ध करता है। हेंग का कथन है—'शाकाहारी ही शक्ति उत्पन्न करता है। माँस से केवल उत्तेजना बढ़ती है।' डाक्टर क्लेमड ने लिखा है—'बच्चों को माँस की आदत डालना उन्हें आलसी, दुर्बल और झगड़ालू बनाने की शुरूआत है।' शोधकर्ता मेनरी पडरी ने लिखा है—'शाकाहारियों की तुलना में माँसाहारी अधिक बीमार पड़ते और जल्दी मरते हैं।' डाक्टर पारकर ने कहा है—'सिरदर्द, अपच, गठिया, थकान, रक्तपात, मधुमेह आदि का कारण योरोप, अमरीका में तो बढ़ा हुआ माँसाहार ही है।' डाक्टर रसेल ने कहा है—'यदि माँसाहार बन्द हो जाय तो दुनियाँ में आधी बीमारियाँ स्वतः समाप्त हो जायेंगी। डाक्टर एन० चर्चिन ने सिद्ध किया है कि—माँस से प्रोटीन का प्रमुख लाभ सोचा जाता है। पर वह प्रोटीन इतना घटिया होता है जिससे हानि की ही सम्भावना है।

जापान के प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो० वेज्ज अनेक निष्कर्ष के बाद इस नतीजे पर जा पहुँचे हैं कि 'मनुष्य की प्रकृति में क्रोध, उद्दण्डता, आवेश, अविवेक, कामुकता और अपराधी प्रवृत्ति उत्पन्न करने तथा भड़काने में माँसाहार का बहुत बड़ा हाथ है।' वस्तुतः मनुष्य जैसा खाता है उसका मन भी वैसा ही बन जाता है। पशुओं का मांस खाकर अपने शरीर का भाग बनाने वालों का मन भी पशु-प्रवृत्तियों से भर जाता है और वे कोई उच्च आदर्श उपस्थित कर सकने में असमर्थ हो जाते हैं। जनकी चेतना में पशुता का बाहुल्य होते रहने से उनकी विचार पद्धति एवं कार्य शैली में लगभग वैसे ही लक्षण दिखाई देने लगते हैं।

भारत यात्रा करने वाले सुप्रसिद्ध फाह्यान, मार्कोपोलो, जे० टी० ट्रोलर, हारफ्लायर मरीखे विदेशी यात्रियों ने अपनी भारत यात्रायों के विशद वर्णनों में यही लिखा है—'भारत में चाण्डालों के अतिरिक्त और कोई सभ्य व्यक्ति माँस नहीं खाता था।' धार्मिक दृष्टि से तो इसे सदा निन्दनीय पाप कर्म बताया जाता रहा है। बौद्ध और जैन धर्म तो प्रधानतया अहिंसा पर ही आधारित हैं। वैष्णव धर्म भी इस सम्बन्ध में इतना ही सतर्क है। वेद, पुराण, स्मृति, सूत्र आदि हिन्दू धर्म-ग्रन्थों में पग-पग पर माँसाहार की निन्दा और निषेध भरा पड़ा है। बाईबिल में कहा गया है—ए, देखने वाले ! देखता क्यों है, इन काटे जाने वाले जानवरों के विरोध में अपनी जबान खोल।' ईसा कहते थे—'किसी को मत मार। प्राणियों की हत्या न कर और माँस न खा।' कुरान में लिखा है—हरा पेड़ काटने वाले, मनुष्य बेचने वाले, जानवरों को मारने वाले और पर स्त्री गामी को खुदा माफ नहीं करता। जो दूसरों पर रहम करेगा वही खुदा की रहमत पायेगा।'

हमें बढ़ते हुए माँसाहार की प्रवृत्ति में होने वाली हानियों पर विचार करना चाहिये और अपनी मूल प्रकृति एवं प्रवृत्ति के अनुकूल आचरण करना चाहिये ताकि शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य नष्ट होने से बच सकें। निष्ठुरता और क्रूरता का दूसरा नाम ही माँसाहार है। अच्छा हो हम अपनी प्रकृति में से इन तत्वों को निकालें अन्यथा हमारा व्यवहार मनुष्यों के प्रति भी इन्हीं दुर्गुणों से भरा होगा और संसार में नरक के दृश्य दीखेंगे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तमाखू का दुर्व्यसन छोड़ा ही जाना चाहिए

क्र० ५०

बुद्धिमान समझा जाने वाला मनुष्य जब न करने योग्य करता है और न खाने योग्य खाने लगता है तब सहज ही उसकी बुद्धिमत्ता पर सन्देह होता है। तमाखू एक विषैला पदार्थ है जो मनुष्य की प्रकृति और शारीरिक स्थिति में समाविष्ट कराये जाने पर सुखद परिणाम कभी भी उत्पन्न नहीं कर सकता। उससे केवल हानि ही हानि है—लाभ तनिक भी नहीं। फिर न जाने क्यों उसके सेवन की प्रथा बढ़ती ही जा रही है। लोग उसे खाने, पीने से लेकर सूंघने, दाँतों से रगड़ने आदि कामों में लाकर अपने धन, समय और स्वास्थ्य की बर्बादी ही करते चले जारहे हैं।

स्पष्टतः तमाखू एक विषैला पौधा है। उसमें निकोटीन, कोलतार, कार्बन मोनाक्साइड जैसे घातक विष तत्वों की काफी मात्रा रहती है। इन विषों की थोड़ी मात्रा भी शरीर में इकट्ठी हो जाने पर मन्दाग्नि, रक्तचाप, खाँसी, दमा, अनिद्रा, अन्धता, मधुमेह सरीखे रोग पैदा करने का कारण बन जाती है। कच्ची उम्र में बच्चे धूम्रपान करने लगें तो उनकी शारीरिक बढ़ोत्तरी रुक जाती है, नाटे और दुबले रह जाते हैं। स्वप्नदोष होने लगते हैं और मुँह से बदबू आने लगती है। रक्त में तमाखू का विषैलापन घुल जाने से फुन्सी, दाद, खाज, खुजली, छाजन, चमड़ी फटना, विबाई,गठिया और ब्लडप्रेशर, भयंकर फोड़े जैसे अन्य रोगों की सम्भावना बनी रहती है। कैन्सर जैसे अति भयंकर और असाध्य रोग का कारण तो प्रधानतया तमाखू ही बताया गया है।

संसार के समस्त देशों की शारीरिक शोध ने तमाखू को मनुष्य के लिए हर दृष्टि से अनुपयुक्त बताया है। अमेरिका की सरकार ने कानून बनाकर हर सिगरेट और पैकट पर 'स्वास्थ्य के लिए खतरनाक' लिखने तक का प्रतिबन्ध लगा दिया है। वहाँ यह घोषणा प्रत्येक सिगरेट पर छपी रहती है। मनोवैज्ञानिकों ने भी इसके प्रभाव ऐसे ही पाये हैं। तमाखू से क्रोध की मात्रा बढ़ती है। चिड़चिड़ापन, झुंझलाहट, आवेश में उत्तेजित हो जाना तमाखू के प्रसिद्ध परिणाम हैं। काम-वासना भड़काने में वह अग्रणी है। स्मरण शक्ति का घटना और आलस्य-प्रमाद का बढ़ना तमाखू की अपनी अलामतें हैं। जो इसे पियेगा अपने में इन दोषों की बढ़ोत्तरी देखेगा।

नशा एक क्षणिक उत्तेजना पैदा करता है। जैसा कि हण्टर मारने पर घोड़ा तिलमिला कर दौड़ने लगता है वैसे ही नशेबाजी भी संचित शक्ति-कोष को भड़काती है और पीते समय लगता है कुछ फुर्ती सी आई। पर अन्ततः इसका परिणाम घातक ही होता है। बार-बार हण्टर मारकर सामर्थ्य से अधिक दौड़ाने पर घोड़ा जल्दी थक और मर जाता है यही बात शरीर पर भी लागू होती है। तमाखू जैसे नशों से बार-बार भड़काये जाने पर शरीर का संचित शक्ति कोष बुरी तरह बहुत जल्दी समाप्त हो जाता है और जवानी में बुढ़ापा आ घेरता है और खाँसी-दमा तरह-तरह की बीमारियों से ग्रसित होकर समय से पहले ही मरने की स्थिति बन जाती है। दुःख इसी बात का है कि इतनी हानि उठाकर भी लोग पैसा खर्च कर दुर्व्यसन को खरीदते हैं और खुशी-खुशी एक मन्द विष पीकर धीरे-धीरे आत्म-हत्या करने के खेदजनक मार्ग पर चलते रहते हैं।

धीरे-धीरे कितना पैसा इस दुर्व्यसन में खर्च हो जाता है इसका हिसाब लगाते हैं तो आश्चर्य होता है कि अपने गरीब देश के निवासी क्यों अपनी इतनी बर्बादी करते हैं। प्रति व्यक्ति न्यूनतम ३० पैसा बीड़ी माचिस का खर्च माना जाय तो साल में लगभग १००)वार्षिक होता है। १५ वर्ष की उम्र से लेकर ६५ वर्ष की उम्र तक ५० वर्ष इसे पिये तो ५०००) हुए। यदि यही पैसा बैंक में जमा करते रहा जाय तो चक्रवृद्धि ब्याज से लगभग तीन गुना अर्थात् १५०००) हो जाता है। इतनी बड़ी धनराशि की ब्याज से कोई व्यक्ति बुढ़ापा काट सकता है अथवा किसी परमार्थ कार्य में लगा सकता है। पर होता उलटा है। इतना धन भी खर्च होता है और शरीर की बर्बादी और मन की दुर्गति की भयावह हानियाँ भी उठानी पड़ती हैं।

मुँह से हर घड़ी दुर्गन्ध आते रहने से पास बैठने वाले को घृणा उत्पन्न होती है और इस विषाक्त धुएँ से वायु-मण्डल दूषित होकर समीपवर्ती लोगों को ही नहीं दूरवर्ती लोगों को भी क्षति पहुँचती है। इस प्रकार तमाखू

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org
का दुर्व्यसन अपने लिये ही नहीं दूसरों को भी क्षति पहुँचाने का पाप अनजाने ही बटोरता रहता है।

राष्ट्रीय क्षति इससे बहुत है। २ करोड़ रुपये प्रतिदिन अर्थात् ७२० करोड़ वार्षिक की तमाखू हम भारत-वासी पीते हैं। इतना धन देश की शिक्षा समस्या सुलझाने के लिये पर्याप्त है। जितने एकड़ जमीन में तमाखू बोई जाती है उतने में अन्न उगाया जाय तो विदेश से एक छटाँक भी अन्न न मँगाना पड़े। एक छोटे गाँव में ५०० व्यक्ति रहते हों और वे ३० पैसे भी तमाखू में खर्च करते हों तो प्रतिदिन १५०) अर्थात् महीने में ४५००) अर्थात् साल में ४५०००) की तमाखू पीते हैं। यदि वह गाँव प्रतिज्ञा करके इस दुर्व्यसन से छुटकारा पाले और यह पैसा अपने गाँव के विकास में देने लगे तो हर साल ४५०००) खर्च करके एक साल में हाईस्कूल दूसरे वर्ष सामूहिक गृह-उद्योग, तीसरे वर्ष कन्या-विद्यालय, चौथे वर्ष अस्पताल, पाँचवे वर्ष पक्की सड़कें तथा पाखाने-पेशाबघर बनाकर अपने गाँव को सुविकसित कर सकते हैं। बिना सरकारी या किसी दूसरी मदद के हर ५०० व्यक्तियों वाला छोटा गाँव भी इतना सुविकसित हो सकता है जिस पर शहर निछावर किये जा सकें। पर किया क्या जाय, हमारी दिशायें तो उल्टी हो रही हैं? निर्माण की अपेक्षा हम विनाश की बात सोचते हैं। ऐसे ही विनाश कार्यों में तमाखू पीने का दुर्व्यसन भी है।

तमाखू का दुष्प्रभाव शरीर और धन तक ही सीमित नहीं है। उसके परिणाम सामाजिक भी हैं। जितने मजदूर इस उत्पादन में लगे हैं, वे यदि घर निर्माण, वस्त्र निर्माण, गोपालन, मधु उत्पादन जैसे उपयोगी कार्यों में लगा दिये जांय तो बढ़े हुये किरायों पर गन्दे मकान मिलने की कठिनाई हल हो जाय। कपड़े की तंगी और मँहगाई हल हो जाय। दूध-घी और शहद की नालियाँ बहने लगें। पर लाखों श्रमिकों की इतनी बड़ी जन शक्ति का पसीना जब कि विनाश के उत्पादन में लगा हो और कितने ही व्यापारी इस विष विक्रय में अपनी पूँजी, चतुरता और मेह-नत जोड़े हों तो उपयोगी व्यवसायों का क्षेत्र संकुचित होता ही चलेगा। इस संदर्भ में होने वाला प्रचार और विज्ञा-पन यदि स्वास्थ्य और चरित्र बढ़ाने की दिशा में लगता तो जन प्रवृत्ति को कुमार्गगामी बनाने की अपेक्षा विकास की दिशा में कितनी प्रगति होती?

अन्य नशों की भाँति तमाखू में भी तामसिक दुर्बुद्धि और अपराधी दुष्प्रवृत्ति भड़काने का दोष है। नशे-बाज व्यक्ति की आध्यात्मिक संवेदनशीलता घटती है और उसे दुष्कर्म करते लज्जा, संकोच नहीं होता। उद्धतकर्म करने और उच्छृङ्खलता बरतने में उसे झिझक नहीं लगती। मानवीय प्रवृत्ति में अपराधी तत्वों का समावेश करने में नशेबाजी का भारी हाथ है। कहना न होगा कि इस सन्दर्भ में तमाखू सबसे आगे है। सस्ती और लोकप्रिय होने के कारण उसका प्रचार हर जगह हो गया है। सभी वर्ग के लोग उसे पीते हैं। आदर-सम्मान की तरह उसे भेंट करते हैं। रोक, लाइसेन्स का प्रतिबन्ध कुछ नहीं। निर्माताओं और विक्रेताओं ने प्रचार के आकर्षक तरीके अपनाये हैं। गली-कूचों से लेकर जङ्गलों की झोंपड़ियों तक में उसकी विक्रय व्यवस्था है। ऐसी दशा में भोले लोग उस प्रवाह में बह चलें और अपनी शारीरिक, मानसिक, आर्थिक एवं सामाजिक क्षति अपने हाथों करने लगें—अपने पैर आप कुल्हाड़ी मारें—तो आश्चर्य ही क्या है?

सभी धर्मों ने, शास्त्रों ने एक स्वर से नशेबाजी की—तमाखू पीने की निन्दा की है, इसे पाप बताया है। वेदों में इसकी निन्दा है। मनुस्मृति में इसे द्योतक पातक माना है। बौद्ध धर्म में गिनाये चार पापों में एक नशेबाजी भी है। कुरान के पारा ७ सूरत मायकारूक १ में कहा गया है—"हे ईमान वालो नशीली चीजें हराम हैं। इनसे बचते रहो।" बाईबिल का कथन है—"अन्त में नशेबाजी की भी शैतान की तरह दुर्गति होगी। जो नशा पियेगा खुशहाल न रहेगा।"

हमारी प्रकृति इस तथ्य को जानती है इसलिए वह तमाखू को भीतर प्रवेश होने देने में हर सम्भव प्रति-रोध करती है। धुँआ पीते हैं तो नाक मुँह से बाहर निकालना पड़ता है। खाते हैं तो थूकनी पड़ती है। सूँघते हैं तो छींक उसे भगाती है। दांतों से रगड़ते हैं तो पानी का प्रवाह उसे बहा देता है। फिर भी न जाने क्यों हम प्रकृति विरोधी कार्य करके अपना चतुर्दिक् विनाश करने में जुटे हुए हैं?

अच्छा हो हम स्वयं तमाखू से बचें पीते हो तो साहसपूर्वक छोड़ें, जो पी रहे हैं उन्हें अनुरोधपूर्वक इसे छोड़ने का आग्रह करें। —— **'तम्बाकू एक भयानक दुर्व्यसन' पुस्तिका से**

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

युग निर्माण योजना-एवं संक्षिप्त परिचय

गायत्री तपोभूमि (वृन्दावन रोड) मथुरा के विशाल आश्रम भवन में, "युगनिर्माण योजना" का केन्द्रीय कार्यालय अवस्थित है । उपासना की दृष्टि से गायत्री माता का मन्दिर, अखण्ड अग्नि एवं नित्य हवन की यज्ञशाला, समस्त तीर्थों का जल-रज एवं हस्तलिखित गायत्री मंत्रों का संग्रह के अतिरिक्त यहाँ नित्य गायत्री अनुष्ठान जैसी कर्मकाण्डात्मक प्रक्रियाएँ चलती रहती हैं । धर्म-प्रसार की दृष्टि से यहाँ अनेक सत्प्रवृत्तियों को विश्वव्यापी बनाने के प्रयत्न होते रहते हैं । सेवाभावी, निस्पृह और सुयोग्य कार्यकर्त्ताओं के द्वारा ही उन प्रवृत्तियों का संचालन होता है ।

मनुष्य जाति का भावात्मक स्तर आदर्शवादिता एवं उत्कृष्टता से ओतप्रोत बनाने और समाज को समर्थ, सुगठित, समृद्ध और समुन्नत बनाने के लिए बौद्धिक, नैतिक एवं सामाजिक क्रांति की मशाल जलाये रखने के लिए "युग निर्माण योजना" की प्रतिष्ठायना इसी आश्रम से आरम्भ की गई है और मानव में देवत्व के उदय और धरती पर स्वर्ग के अवतरण को लक्ष्य में रखा गया है ।

प्रस्तुत उद्देश्य को पूरा करने के लिये भौतिक कार्यक्रमों से अधिक आध्यात्मिक शक्ति, सामर्थ्य को प्रयुक्त किया जा रहा है । योजना के प्रस्तुतकर्त्ता ने शुभारम्भ में पूर्ण २४ लक्ष जप के २४ गायत्री महापुरश्चरण २४ वर्ष में सम्पन्न किये। उससे कार्यक्रम का पूर्वार्ध सम्पन्न हुआ । उत्तरार्ध पूरा करने के लिये अति उग्र तपश्चर्या हिमालय के एकान्त में की जा रही है। और विश्वास किया गया है कि युग परिवर्तन जैसे महान प्रयोजन के लिये प्रत्यक्ष कार्यक्रम ही पर्याप्त नहीं, उसके लिये दैवीशक्ति का प्रयोग भी सँजोया जाना चाहिये । इस दृष्टि से "गायत्री-परिवार" द्वारा इन दिनों हर रोज २४ लक्ष गायत्री जप और २४ हजार आहुतियाँ नित्य क्रम है । संचालन का "अखण्ड-दीपक" पर अविछिन्न उपासना का क्रम भी नियमित रूप से चल रहा है । इस संदर्भ में देश भर में लगभग १००० विशाल गायत्री यज्ञ सम्पन्न कराये जा चुके हैं ।

भारतीय धर्म के समस्त आर्य-ग्रन्थों का अनुवाद, सम्पादन एवं प्रस्तुतीकरण इस संस्था के संचालन में सम्पन्न करके समस्त विश्व में भारतीय धर्म और संस्कृति के गहन ज्ञान का परिचय कराया है । चारों वेद, १०८ उपनिषद्, छहों दर्शन, २० स्मृतियाँ, १८ पुराण, ब्राह्मण, आरण्यक, सूत्र ग्रन्थ, योग-वशिष्ठ, २४ गीताएँ आदि अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ सर्वसाधारण के लिए सुलभ किये हैं ।

योजना के अन्तर्गत इन दिनों छै मासिक पत्रिकाएँ निकलती हैं । "हिन्दी अखण्डज्योति"- "हिन्दी युग-निर्माण योजना" गुजराती युग-निर्माण योजना" "मराठी युग निर्माण योजना" और "उड़िया युग निर्माण योजना ।" वैज्ञानिक अध्यात्मवाद नीति, धर्म, सदाचार, जीवन कला एवं नवनिर्माण की प्रखर प्रेरणा से इन पत्रिकाओं का पन्ना-पन्ना जगमगाता रहता है । पृष्ठ संख्या सभी की ६० है । हिन्दी पत्रिकाओं का चन्दा ६-६ रु० और अन्य भाषाओं का ७-७ रु० है । अगले वर्ष चार अन्य भाषायों में यह प्रकाशन और आरंभ होने वाला है ।

स्वस्थ शरीर, स्वच्छ मन एवं सभ्य समाज निर्माण के लिये व्यक्ति तथा समाज की असंख्य समस्याओं पर प्रकाश डालने वाली अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण पच्चीस-पच्चीस पैसे वाली २०० पुस्तिकाएँ (ट्रैक्ट) तथा ४०-४० पैसे वाली १०० जीवनियाँ प्रकाशित की गई हैं । अन्य १०० धार्मिक पुस्तकें भी इस समय प्रकाशन में हैं । इस साहित्य का अन्य भाषाओं में भी अनुवाद छापा जा रहा है । योजना का अपना एक अच्छा प्रेस है ।

व्यक्ति और समाज की उलझनों को सुलझाने वाली १०० विज्ञप्तियाँ वितरण करने के लिए छापी गई हैं जो १० × ७॥ साइज में दोनों ओर छपी हैं, और प्रस्तुत विषयों को बहुत ही हृदयग्राही रूप में समझाती और प्रभावित करती हैं । १००० विज्ञप्तियों का मूल्य १२) रु० है । १००० लेने वाले वितरण कर्त्ता का नामभी लाल स्याही में इसी मूल्य में छाप दिया जाता है । अब तक करीब ५० लाख विज्ञप्तियाँ वितरित हो चुकी हैं । इन्हें सब भाषाओं में छापा जा रहा है । यह विज्ञप्ति-वितरण विचार-क्रांति की- दृष्टि से एक बहुत ही उपयुक्त माध्यम सिद्ध हुआ है ।

आश्रम में एक उपयुक्त पुस्तकालय, वाचनालय तथा चिकित्सालय भी है जिनसे स्थानीय तथा बाहर के लोग लाभ उठाते हैं । आसन, प्राणायाम, फौजीड्रिल, लाठी, वाद्यशिक्षा, बैण्डबाजा बजाना आदि का प्रशिक्षण भी यहाँ चलता रहता है ।

"युगनिर्माण विद्यालय" के एक वर्षीय पाठ्यक्रम में जीवन जीने की कला सिखाई जाती है ताकि वे सुयोग्य, सद्गुणी, सम्पन्न नागरिक बन सकें और लोक मंगल के सत्प्रयत्नों में योगदान देकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सामाजिक पुनरुत्थान में सहयोगी हो सकें । विद्यालय में छात्रों को स्वावलम्बी बनाने वाले अनेक शिल्प भी सिखाये जाते हैं, यथा—बिजली का फिटिंग, बिजली के यंत्रों की मरम्मत, रेडियो ट्रांजिस्टरों का निर्माण तथा सुधार, प्लास्टिक की वस्तुएँ बनाना, मोजे बनाना, मोमबत्ती, अनेक प्रकार की स्याहियाँ, तेल, रंग, पेष्ट, बार्निशें खिलौने बनाना तुरन्त वस्त्र धोना (ड्राईक्लीनिंग) प्रेस व्यवसाय, रबड़ की मुहरें, शाक-बाटिका, घर में काम आने वाले उपकरणों की मरम्मत, आदि-आदि । शिक्षा निःशुल्क है ।

कलामाध्यम से नवनिर्माण की विचारधारा का प्रसार करने के लिए सुगम संगीत, वाद्य, नृत्य, अभिनय, नाटक तथा प्रकाश चित्र-मैजिक लालटैन, स्लाइड, प्रोजेक्टर आदि यंत्र-माध्यमों से ऐसा शिक्षण दिया जाता है जिससे जनमानस को उच्च भावनाओं से सरावोर किया जा सके । शिक्षणसत्र छै-छै महीने के होते हैं ।

"युगनिर्माण योजना" की लगभग ४ हजार शाखायें और एक लाख सदस्य तथा दस लाख सहयोगी हैं । सभी शाखाओं में नवनिर्माण की विचारधारा को व्यापक बनाने के लिए वाचनालय तथा चल पुस्तकालय चलाये जाते हैं जिससे प्रतिदिन लगभग ५० लाख व्यक्ति प्रकाश ग्रहण करते, प्रभावित होते और अपनी गति-विधियों को आदर्शवादिता की ओर मोड़ते हैं ।

शाखाओं में पुरुषों के लिए रात्रि पाठशालायें और महिलाओं के लिए अपरान्हशालाएँ चलती हैं, जिनमें विचार क्रांति नैतिक क्रान्ति एवं सामाजिक क्रांति की, व्यक्ति एवं समाज की असंख्य समस्याओं को सुलझाने की तथा युग-परिवर्तन के लिए अभीष्ट कार्य-क्रमों को गतिशील करने की शिक्षा दी जाती है । छै-छै महीने पर इस प्रशिक्षण की परीक्षा लेने तथा समापन समारोह करके प्रमाण पत्र देने का भी क्रम रहता है । ऐसे उत्सव आयोजन बसंत पंचमी और गुरुपूर्णिमा पर हरशाखा सम्पन्न करती हैं ।

शाखाएँ सदस्यों के जन्म-दिन मनाने, विवाह-दिन मनाने, षोडश संस्कार कराने तथा सामूहिकरूप से पर्व-त्यौहार मनाने, की बड़ी प्रेरक लोकशिक्षण प्रक्रिया चलाती हैं । गीताकथा, रामायणकथा, सत्यनारायणकथा आदि के माध्यम से जन-जीवन को समुन्नत बनाने वाला प्रकाश फैलाया जाता है । धार्मिकता को प्रगतिशीलता में मोड़ने का यह प्रयोग आशातीत सफलता प्राप्त कर रहा है । यह प्रयोग प्रचारकों की आजीविका व्यवस्था भी हल करता है ।

गायत्री यज्ञों के साथ जुड़े हुये युग निर्माण सम्मेलनों के विराट आयोजनों की देश भर में योजना बद्ध तैयारी की जाती है । लग भग १०० बड़े आयोजन प्रतिवर्ष होते हैं, जिनमें जनता की उपस्थिति आशातीत रहती है छोटे-मोटे आयोजन तो हजारों की संख्या में हर वर्ष सम्पन्न होते हैं । जन जगृति एवं नव निर्माण की प्रवृत्तियों को गतिशील करने की दृष्टि से इन आयोजनों की भूमिका आश्चर्य जनक सिद्ध होती है । सन् १९५८ में मथुरा में हुआ 'सहस्त्र कुण्डी गायत्री यज्ञ" धार्मिक क्षेत्रमें अविस्मरणीय है, जिसमें ४ लाख से अधिक कर्मठ सदस्य नवनिर्माण के लिये प्रबल प्रयत्न करने का संकल्प लेकर गये थे ।

मथुरा के केंद्रीय कार्यालय में नवनिर्माण के कार्य कर्ताओं को प्रवचन, संगठन, रचनात्मक एवं संघर्षात्मक कार्यक्रमों की समग्र शिक्षा देने के लिये-समय समय पर शिविरों की व्यवस्था की जाती रहती है । सन् १९७० में तो ३५ शिविर हुये जिनमें २० हजार कार्यकर्ता शिक्षण प्राप्त करने आये । ऐसे छोटे बड़े शिक्षण-शिविर शाखाएँ भी आयोजित करती रहतीं हैं ।

योजना के सूत्रसूत्री कार्यक्रमों में अपनी योग्यता और स्थिति के अनुरूप हर कार्यकर्ता को लोकमंगल के लिये कुछ न कुछ प्रयत्न करना पड़ता है । इस प्रकार थोड़ा-थोड़ा करके भी रचनात्मक प्रयत्नों का परिमाण इतना बन पड़ता है जिससे व्यक्ति और समाज के उज्ज्वल भविष्य की संभावना के पूर्ण साकार होने विश्वासपूर्वक आशा की जा सकती है ।

ऊँच-नीच परक जातिभेद, नर-नारी की असमानता, विवाहों में उन्माद जैसा अपव्यय और दहेज, मृतक भोज, जुआ, नशा, चोरी, बेईमानी, विलासिता, क्रूरता, उच्छृङ्खलता, नास्तिकता, आलस, क्रोध अदि दुष्प्रवृत्तियों के विरुद्ध आन्दोलन ही नहीं एक प्रकार से संघर्ष को अधिक तीव्र और प्रभावी बनाने के लिये युग निर्माण सेना गठित किये जाने की तैयारी है मानवीय चरित्र और सामाजिक उत्कृष्टता की दृष्टि से इस प्रकार के संघर्ष की आज अनिवार्य आवश्यकता भी है ।

व्यक्ति और समाज का आदर्शवादिता एवं उत्कृष्टता के आधार पर पुनर्निर्माण करने के इस महान अभियान में सभी सद्भाव सम्पन्न सज्जनों का सहयोग अपेक्षित है ।

प्रकाशक—युग निर्माण योजना मथुरा (गायत्री तपोभूमि)

: युगऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य- संक्षिप्त परिचय :

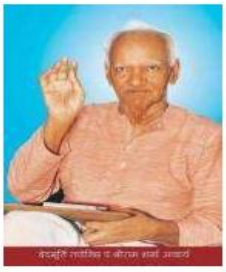

ज्यादा जानकारी यहाँ से प्राप्त करें :
http://hindi.awgp.org/about_us

- **विचारक्रान्ति अभियान के प्रणेता :** विचारों को परिस्कृत और ऊँचा उथाने मे समर्थ 3000 से भी अधिक पुस्तकों के लेखन के माध्यम से विश्वव्यापी विचार क्रान्ति अभियान की शरुआत की ।
- **वेद, पुराण, उपनिषद के प्रसिद्ध भाष्यकार :** जिन्हों ने चारों वेद, 108 उपनिषद, षड दर्शन, 20 स्मृतियाँ एवं 18 पुराणों का युगानुकूल भाष्य किया, साथ ही 19 वाँ प्रज्ञा पुराण की रचना भी की ।
- **3000 से अधिक पुस्तकों के लेखक :** मनुष्य को देवता समान, घर-परिवार को स्वर्ग, समाज को सभ्य और समग्र विश्वराष्ट्र को श्रेष्ठ बनाने मे समर्थ हजारों पुस्तकें लिखकर समयानुकूल समर्थ मार्गदर्शन प्रदान किया ।

- **युग-निर्माण योजना के सूत्रधार :** जिन्होंने शतसूत्री युग निर्माण योजना बनाकर नये युग की आधार शिला रखी ।
- **वैज्ञानिक-अध्यात्मवाद के प्रणेता** : जिन्हों ने धर्म और विज्ञान के समन्वय की प्रथम प्रयोगशाला 'ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान' स्थापित कर सिद्ध किया कि "धर्म और विज्ञान विरोधी नहीं, पुरक है "।
- **'२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' के उद्‌घोषक** : जिन्हों ने '२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' का नारा दिया तथा युग विभीषिकाओं से भयग्रस्त मनुष्यता को नये युग के आगमन का संदेश दिया ।
- **स्वतंत्रता संग्राम के कर्मठ सैनानी** : जिन्हों ने महात्मा गाँधी, मदन मोहन मालवीय, गुरुवर रविन्द्रनाथ टैगोर के साथ राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया एवं स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी "श्रीराम मत्त" के रुप में प्रख्यात हुए ।
- **गायत्री के सिद्ध साधक** : जिन्हों ने गायत्री और यज्ञ को रुढियों और पाखण्ड से मुक्त कर जन-जन की उपासना का आधार तथा सद्‌बुद्धि एवं सतकर्म जागरण का माध्यम बनाया ।
- **तपस्वी** : जिन्होंने गायत्री की कठोरतम साधना कर २४-२४ लाख के २४ महापुरश्चरण २४ वर्षो में सम्पन्न किया । प्रकृति प्रकोप को शांत कर अनिष्टों को टाला, सृजन सम्भावनाओं को साकार किया ।
- **अखिल विश्व गायत्री परिवार के जनक** : जिन्हों ने अपने जीवनकाल में ही अपने साथ करोडों लोगों को आत्मियता के सूत्र में बाँधकर विश्व व्यापी 'युग निर्माण परिवार' - 'गायत्री परिवार' का गठन किया ।
- **समाज सुधारक** : जिन्हों ने नारी जागरण, व्यसन मुक्ति, आदर्श विवाह, जाति-पाँति प्रथा तथा परंपरागत रुढियों की समाप्ति हेतु अद्‌भूत प्रयास किए एवं एक आदर्श स्वरुप समाज में प्रस्तुत किया ।
- **ऋषि परम्परा के उद्धारक** : जिन्हों ने इस युग में महान ऋषियों की महान परंपराओं की पुनर्स्थापना की । लुप्तप्राय संस्कार परंपरा को पुनर्जीवित कर जन-जन को अवगत कराया ।
- **अवतारी चेतना** : जिन्होंने "धरती पर स्वर्ग के अवतरण और मनुष्य में देवत्व के जागरण" की अवतारी घोषणा को अपना जीवन लक्ष्य बनाया और चेतना का ऐसा प्रवाह चलाया कि करोंडों व्यक्ति उस ओर चल पड़े ।

गायत्री परिवार जीवन जीने कि कला के, संस्कृति के आदर्श सिद्धांतों के आधार पर परिवार,समाज,राष्ट्र युग निर्माण करने वाले व्यक्तियों का संघ है। **वसुधैवकुटुम्बकम्** की मान्यता के आदर्श का अनुकरण करते हुये हमारी प्राचीन ऋषि परम्परा का विस्तार करने वाला समूह है गायत्री परिवार। एक संत, सुधारक, लेखक, दार्शनिक, आध्यात्मिक मार्गदर्शक और दूरदर्शी युगऋषि पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा स्थापित यह मिशन युग के परिवर्तन के लिए एक जन आंदोलन के रूप में उभरा है।

Free Download Complete Work Of Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya, Founder of All World Gayatri Pariwar Books, Magazines, Articles, Stories, Poems, Great Personalities and many more at
www.vicharkrantibooks.org | www.awgp.org